शिव-सिद्धि
देहाती पुस्तक भण्डार
देहली-110006

शिव-सिद्धि

भारत के अतिरिक्त विश्व के अनेक देशों में शिव के भक्त पाये जाते हैं। शिव परम कल्याणकारी देव हैं। भक्त द्वारा सिद्धि करने पर शीघ्र ही प्रसन्न हो जाते हैं। प्रस्तुत पुस्तक में उन्हीं शिवशंकर भोलानाथ के सिद्धिप्रद कवच, स्तोत्र, पूजन-विधान तथा अर्चना की अनेक विधियां संकलित हैं। प्रारम्भ में शिव का स्वरूप, काम-दहन, विष-पान, भस्मासुर को भस्मीभूत करना नटराज का ताण्डव नृत्य, शिव-सन्तान, पशुपति शिव, आशुतोष शिव तथा शिवरात्रि का विशेष विवेचन दिया गया है।

लेखक:

पं० राजेश दीक्षित

मूल्य:

स्वदेश में: 50/- (पचास रुपये)

क्रियेटिव पब्लिकेशन

4422, नई सड़क, दिल्ली-110 006

फोन/फैक्स : 23261030, 23985175, ® 23929817

visit us at www.creativepublication.com, E-mail : hans@ndf.vsnl.net.in

प्राक्कथन

थोड़ी सी पूजा-आराधना से ही परम प्रसन्न हो जाते हैं भगवान शिव। ईश्वर के तीनों रूपों—ब्रह्मा, विष्णु, महेश में सर्वाधिक पूज्यनीय हैं महेश्वर महेश अर्थात भोले शंकर भगवान शिव। जहाँ तक लौकिक उपादानों के माध्यम से पूजा-आराधना का प्रश्न है, ईश्वर के सभी अवतारों और देवी-देवताओं में सबसे अधिक सरल-सुगम है भगवान शिव की आराधना। मात्र एक लोटा जल और कुछ देर के लिए शिवजी का स्मरण करने मात्र से ही प्रसन्न होकर भक्तों की सभी आकाक्षाओं की आपूर्ति कर देते हैं देवों के देव महादेव शिव।

भगवान शिव ओघड़दानी, परम भक्तवत्सल और शीघ्र प्रसन्न होने वाले देवाधिपति हैं, तो उपासना है आराधना की सबसे श्रेष्ठ और सफल पद्धति। उपासना एक मानसिक प्रक्रिया है जिसमें किसी लौकिक वस्तु तो क्या, उपास्यदेव के विग्रह तक का उपयोग अनिवार्य नहीं। मंत्रों के स्तवन द्वारा की जाती है देवाधिपति महादेव शिव की मानसिक उपासना अथवा विधिविधान पूर्वक षोड़शोपचार पूजा। उसके बाद उनके किसी मंत्र की एकाध माला का जप किया जाता है। इस प्रकार के सभी मंत्रों के साथ साथ मंत्र-यंत्र-तंत्र साधना का सम्यक विधि-विधान तथा शिवजी की आरतियों, भजनों, चालीसों, अष्टकों और स्तोत्रों का सन्तुलित संग्रह भी है इस पुस्तक में। भगवान शिवजी की कृपा और अनुग्रह का प्रसाद है यह पुस्तक, अतः इसमें जो कुछ श्रेष्ठ है वह भगवान शिव का प्रसाद है और यदि कोई न्यूनता है तो मुझ अल्पज्ञ का प्रमाद।

—कृष्णकुमार अग्रवाल

अनुक्रम

1

भगवान शिव

ज्ञानमार्गीय निराकार ब्रह्म के चिन्तन से मूर्तिपूजा तक, यज्ञों और हवनों से लेकर नाम के कीर्तन और मन्त्रों के जप तक हमारे यहाँ ईश आराधना की लगभग एक दर्जन पद्धतियाँ हैं तो ऐसे देवी-देवता, ईश्वर के रूप और अवतार भी एक सौ के लगभग तो हैं ही जिनकी पूजा-आराधना, उपासना-साधना और भक्ति आदि व्यापक रूप से की जाती है। हमारे धर्म में तैंतीस करोड़ देवता माने गए हैं और इन सभी के अधिपति हैं देवराज इन्द्र। परन्तु जहाँ तक संसार के चक्र को चलाने का प्रश्न है यह कार्य देवराज इन्द्र नहीं, बल्कि ब्रह्मा-विष्णु-महेश की त्रिमूर्ति करती है। हमारा धर्म ईश्वर के कृत्यों में भी कार्य विभाजन के वैज्ञानिक सिद्धान्त को मानता है और इसी कारण से जगद्उत्पादक ब्रह्माजी, संसार पालक भगवान विष्णु और भगवान शिव संहार के संचालक माने गए हैं। इन तीनों में कौन बड़ा है और कौन छोटा, कौन क्या कार्य करता है और किस की आज्ञा से, इन तीनों को ये अलग-अलग तीन रूप कब, क्यों, कैसे और किससे मिले इस तर्क में पड़ना न तो हमारा विषय है और न ही हम इसका निर्धारण ही कर सकते हैं। सभी धर्मशास्त्र कहते हैं कि ये तीनों ही पृथक-पृथक होते हुए भी एक रूप हैं—विष्णु ही शिव हैं और शिव ही विष्णु। रामायण में विष्णु के अवतार भगवान राम स्वयं अपने मुखारबिन्द से उद्घोषित कर रहे हैं—

शिव द्रोही मम दास कहावा। वो नर मोहि सपनेहु नहीं भावा।

रामायण ईश्वर के दो रूपों—श्रीविष्णु और महादेव शिव—के परस्पर अनुराग और समानता के भाव का ज्वलन्त प्रमाण है। भगवान श्रीराम भगवान विष्णु के अवतार हैं तो उनके अनन्य सेवक महावीर हनुमान जी आषुतोष भगवान शिव के अवतार। उन्हीं भगवान शिव का बालुका लिंग बनाकर श्रीराम सेतु बांधने से पूर्व पूजन करके उनसे शक्ति और वरदान प्राप्त करते हैं और मातेश्वरी पार्वती की आराधना करती हैं लक्ष्मी जी का अवतार सीताजी। तो आइए तर्क-वितर्क, खण्डन-मण्डन और परछिद्रान्वेषण की भावना से ऊपर उठकर हम अध्ययन करें इस बात का कि हमारे धर्मशास्त्र इस बारे में क्या कहते हैं।

ब्रह्माण्ड रचियता और धारणकर्ता भगवान शिव

नैमिषारण्य तीर्थ स्थान में एकत्रित हुए शौनक आदि ऋषियों ने एक बार सूतजी से पूछा— हे विज्ञवर! इस सृष्टि को वास्तव में बनाने वाला कौन है? ब्रह्मा, शिव, विष्णु अथवा कोई अन्य शक्ति? ऋषियों का यह प्रश्न सुनकर सूतजी बोले— हे ऋषियों! इस सृष्टि का एकमात्र कर्त्ता ब्रह्म है। उसी को ब्रह्मा, शिव, विष्णु आदि नामों से पुकारा जाता है। वह सदैव पूर्ण, सर्वव्यापक और सब कुछ जानने और करने वाला है। वह निराकार भी है और साकार भी, निर्गुण भी है और सगुण भी। उसके अनेक रूप और अनेक नाम हैं। वह अनादि काल से भिन्न-भिन्न रूपों में प्रगट हुआ है और भिन्न-भिन्न नामों से जाना जाता है। इन नाना नाम-रूपों में शिव नाम सबसे अधिक लोक प्रचलित है। इसका कारण यह है कि शिव का अर्थ है आनन्द देने वाला, कल्याण करने वाला। मानव स्वभाव की विशेषता है कि वह कल्याण करने वाले की ओर ही अधिक झुकता है। जो प्रश्न तुमने मुझसे पूछा है, वैसा ही प्रश्न एक बार अनेक ऋषियों ने ब्रह्माजी से पूछा था। उन्होंने जो उत्तर दिया था, वह में आपको बताता हूँ। उन्होंने कहा था, 'जो मन और वाणी से अतीत है, जो ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र आदि की सृष्टि करते हैं, जो सारे संसार में व्याप्त है, जो सारे ब्रह्माण्ड की

रचना करके उस पर शासन करते हैं, उन्हीं का नाम शिव है। जो प्राणी उन शिव की उपासना-आराधना करता है वह इस संसार के बंधनों से मुक्त होकर अन्त में मोक्ष को प्राप्त होता है। इन अद्वितीय परब्रह्म शिव की महिमा का कहीं कोई ओर-छोर नहीं। वे अपने अन्दर से ही संसार को उत्पन्न करते हैं और प्रलय के समय इसे अपने अन्दर ही विलींन कर लेते हैं।'

परमब्रह्म परमेश्वर भगवान शिव

ऋषि-मुनियों के जिज्ञासा प्रकट करने पर सूतजी ने इस कथा को आगे बढ़ाते हुए बतलाया कि एक बार ब्रह्माजी को भी इसी प्रकार का संशय हो गया था। तब स्वयं भगवान विष्णु ने उन्हें समझाया था कि हे ब्रह्माजी आप सृष्टि उत्पन्न कर्ता हैं और मैं पालकर्ता, परन्तु हम तो निमित मात्र हैं। हम सबको बनाने वाले भगवान शिव हैं और वे ही हम सबके रक्षक और पालनकर्ता भी। प्रलयकाल में सभी जीव और जड़-चेतन पदार्थ ही नहीं, हम और आप भी उन्हीं ज्योतिर्लिंग भगवान शिव में विलीन हो जाएंगे और फिर उनकी कृपा से पुनः रूप धारण करके अपने-अपने कर्मों में लीन हो जाएंगे। संक्षेप में यह कथा इस प्रकार है—

प्रलयकाल के पश्चात् सृष्टि के आरम्भ में नारायण की नाभि से एक कमल प्रकट होता है और उस कमल से ब्रह्मा प्रकट होते हैं। एक कल्प की बात है। ब्रह्मा ने कमल से उतरकर समुद्र में प्रवेश किया। वहाँ उन्होंने शेषशायी भगवान नारायण को देखा जो योग निद्रा में लीन थे। उन्होंने नारायण को जगाकर पूछा—तुम कौन हो? तो उन्होंने बताया, मैं लोकों का उत्पत्ति और लय स्थल पुरुषोतम हूँ। ब्रह्मा ने कहा, किन्तु सृष्टि की रचना करने वाला तो मैं हूँ। इस पर नारायण ने उन्हें अपने शरीर में व्याप्त ब्रह्माण्ड का दर्शन कराया। यह देख ब्रह्मा बोले—इसका तात्पर्य यह है कि इस संसार के सृष्टा केवल मैं और आप दो पुरुष हैं। नारायण ने कहा—

ब्रह्माजी! आप भ्रम में हैं। सबके अधिपति, अव्यय परमेश्वर ईशान को आप नहीं देख रहे हैं। आप योगदृष्टि से देखने का प्रयत्न कीजिए। जब ब्रह्माजी ने योगदृष्टि से देखा तो उन्हें त्रिशूल धारण किये परमतेजस्वी नीलवर्ण मूर्ति दिखाई दी। उन्होंने नारायण से पूछा—ये कौन हैं? नारायण ने बताया ये ही देवादि महादेव परमेश्वर भगवान शिव हैं। आप ही सबको उत्पन्त करने, धारण-पौषण करने और संहार करने वाले हैं। आपका न आदि है और न अंत। आप ही एकमात्र परमब्रह्म हैं और नित्य निरन्तर भी। आपका रूप निराकार भी है और साकार भी। सम्पूर्ण जगत में आप व्याप्त हैं और आपमें ही ब्रह्माण्ड व्याप्त है।

निराकार-साकार विराट् रूप में शिव

भगवान विष्णु के अनुग्रह से जगद्पिता ब्रह्माजी तो सदाशिव भगवान शंकर के दर्शन कर चुके थे और दोनों ही देव भगवान शिव की स्तुतियाँ और पूजा-अर्चना करके अपने-अपने लोकों को प्रस्थान कर गए थे। परन्तु मृत्युलोक में भगवान शिव के बारे में ये जानकारियाँ किस प्रकार उद्घटित हुईं यह ऋर्षियों की समझ में न आया। अतः ऋषियों ने विनयपूर्वक सूतजी से प्रार्थना की— महाराज! ब्रह्माजी ने सबसे पहले शिव के इस रूप-स्वरूप, शक्ति और महत्ता का ज्ञान किसे दिया था? उस शिव तत्व के विषय में हमारी जानने की अभिलाषा है।

यह सुनकर सूतजी कहने लगे— यह इतिहास उस समय का है जब इक्कीसवाँ श्वेतरूप नामक कल्प लगा था और ब्रह्माण्ड की रचना के लिए ब्रह्माजी ने शिव को प्रसन्न करने के लिए कठोर तपस्या की थी। इससे प्रसन्न होकर शिवजी ने प्रगट होकर उन्हें ज्ञान का उपदेश दिया। ब्रह्माजी से वह ज्ञान वायुदेव को प्राप्त हुआ। उन्होंने जाना कि प्रकृति माया है। माया से युक्त मूल कर्म का सम्बन्ध रखने वाला पुरुष है। इन दोनों के प्रेरक शिव परमेश्वर हैं। माया शिव की शक्ति है। माया ने चिद्रूप को

ढक रखा है। वहाँ यह माया ही मल है जो गहरे अन्धकार के रूप में है। उससे बाहर शिव का शुद्ध स्वरूप है। अपने कर्मों का फल भोगने के लिए जीव माया से आच्छादित रहता है। जीव को ऐसा प्रतीत होता है कि वह सम्पूर्ण वस्तुओं तथा कर्मों का करने वाला है, किन्तु वास्तव में ऐसा नहीं है। परमेश्वर अर्थात शिव ही सबका कर्त्ता है। सांसारिक जन ईश्वर को नहीं देख पाते, क्योंकि उनके नेत्रों की दिव्य शक्ति को माया ने ढंक रखा है। वह उसे तभी देखता है, जब वह ईश्वरीय ज्ञान प्राप्त कर लेता है। इस ज्ञान की प्राप्ति के पश्चात् ही वह समझ पाता है कि शिव अपनी ईशानी शक्तियों से अकेले ही सम्पूर्ण संसार को अपने अधीन किये हुए हैं, वे ही संसार की सृष्टि, पालन और संहार करने वाले हैं।

भगवान शिव की भक्ति करने वाले व्यक्ति के भगवद् कृपा से जब ज्ञान चक्षु खुल जाते हैं तब वह निराकार भगवान शिव को एक विराट् पुरुष के रूप में देखने लगता है। भाव लोक में वह यह भी देखता है कि सम्पूर्ण संसार इस विराट पुरुष के आँख, मुख, भुजा आदि हैं। शिवरूप वह विराट्-पुरुष ही देवों के आदिदेव ब्रह्मा की सृष्टि करते हैं, सभी देवों के पालन आदि का कार्य करते हैं। छोटे-बड़े, अणु-परमाणु सबमें वे ही निवास करते हैं। वे ही पुरातन पुरुष हैं। सृष्टि की रचना करने वाली यह अद्भुत शिव-शक्ति अजा के नाम से जानी जाती है। उसका वर्ण लोहित, शुक्ल तथा कृष्ण है। संसाररूपी वृक्ष के जीवात्मा और परमात्मा दो पत्ते हैं। हम यह भी कह सकते हैं कि वृक्ष पर बैठे हुए ये दो पक्षी हैं। जीवात्मा कर्म करता है और उसका फल भोगता है, परमात्मा केवल इसका दृष्टा है। वह नाना प्रकार से एक-एक को रचकर उसमें अपना अधिकार स्थापित करता है। दशों दिशाओं में अपना अप्रमेय प्रकाश फैलाकर भी वह उससे उदासीन रहता है। न कोई उसे उत्पन्न करने वाला है और न कोई उसका स्वामी है। वही मोक्ष का देने वाला और अविनाशी है। उस परब्रह्म शिव के ज्ञान के बिना मुक्ति नहीं मिलती।

शिवजी के तीन रूप

शिवजी के निराकार विराट रूप की सम्यक संक्षिप्त जानकारी प्राप्त करने के पश्चात् देवताओं और ऋिषियों में भगवान शंकर के बारे में और अधिक जानकारियाँ प्राप्त करने की आकांक्षा जाग्रत हुई। एक दिन ऋषि-मुनि और देवता एकत्रित होकर जगद्पिता के पास पहुँचे और उनसे प्रार्थना की— हे प्रभो! आप भगवान विष्णु के साथ भगवान शिव के साक्षात दर्शन कर चुके हैं। अतः आप कृपा करके हमें उनके रूप-स्वरूप के विषय में कुछ बताइये। वे कैसे हैं? स्थूल हैं या सूक्ष्म? ऋषियों के वचन सुनकर ब्रह्माजी बोले— हे मुनियो! भगवान शिव के तीन रूप हैं— स्थूल, सूक्ष्म और सूक्ष्मातिसूक्ष्म। स्थूल रूप को देवता देखते हैं और सूक्ष्म रूप को योगीजन। तीसरा रूप सूक्ष्मातिसूक्ष्म, नित्य अविनाशी है। इसे केवल शिव के वे परमभक्त देख सकते हैं जो श्रद्धापूर्वक शिव की आराधना-उपासना करते हैं और शुद्ध सात्विक आचरण रखते हुए निरन्तर उनका चिन्तन-मनन करते रहते हैं। इस प्रकार के शिव आराधकों को योग से भक्ति, भक्ति से शिव की कृपा और शिवजी की कृपा से संसार से मुक्ति प्राप्त होती है। ऐसा भक्त मुक्त होकर शिवलोक को प्राप्त होता है।

सभी धार्मिक ग्रन्थों, उपनिषदों और वेदों का कहना तो यही है कि सभी देवता और ईश्वर के सभी रूप निराकार हैं और भक्त की जैसी भावना होती है वह उसी रूप में देखता और अनुभव करता है अपने उपास्य देव को। मूर्तियाँ ईश्वर और उपास्य देवों का प्रतिरूप मात्र होती हैं और मूर्तिपूजा धर्म की प्रथम सीढ़ी। मानसिक उपासना ही उस परमब्रह्म की प्राप्ति का एकमात्र मार्ग है, परन्तु वह अन्तिम सीढ़ी है। प्रारम्भ में तो हमें भगवान शिव की मोहनी मूरत मन में बसाने, उनके श्रीचरणों में हृदय के भ्रमर को स्थिर करने और मानसिक उपासना की मंजिल तक पहुंचने के लिए उनके साकार रूप की कल्पना और उनके विभिन्न अलोकिक कृत्यों और कृपाओं का अध्ययन-मनन करना ही होगा। तो आइए अवलोकन करें भगवान शिव के साकार रूप और उनके परिवार, उनके वाहन और गणों तथा कुछ कृत्यों का।★

2

शिवजी का रूप-स्वरूप

यह हमारे हिन्दू धर्म की सबसे बड़ी विशेषता है कि हम ईश्वर, ईश्वर के विभिन्न रूपों और देवताओं को साकार भी मानते हैं और निराकार भी। हमारे उपास्यदेव भगवान शिव ब्रह्माण्ड के उत्पन्नकर्त्ता, पालनकर्ता और संहारकर्ता सभी कुछ हैं और इस रूप में हैं एक विराट निराकार ज्योतिपुंज। सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड आपमें व्याप्त है अतः इस रूप में आपकी विशालता की कल्पना भी नहीं की जा सकती। सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड भगवान शिव में व्याप्त है, तो प्रत्येक जीव में अंशरूप में निवास करते हैं भगवान शिव। अतः वे सूक्ष्म से भी सूक्ष्म हैं और विराट से भी अधिक विराट। प्रत्येक जीवधारी ही नहीं, पेड़-पौधों एवं निर्जीव पत्थरों तक में भगवान शिव का दर्शन, प्रत्येक जीव को स्वयं के सदृश्य समझना और भावनात्मक रूप से हर समय भगवान को अपने निकट समझना तथा अनुभव करना हमारी साधना-आराधना की अन्तिम मंजिल है और मुक्ति का मार्ग भी। परन्तु भगवान शिव के इस सर्वव्यापी रूप से साक्षात्कार के लिए आवश्यक है कि हमें उनसे हार्दिक प्रेम और उन पर अटूट आस्था एवं विश्वास हो।

भगवान शिव पर अटूट श्रृद्धा और विश्वासवर्द्धन हेतु उनसे सम्बन्धित साहित्य का आधिकाधिक अध्ययन-मनन और पूजा-आराधना तो आवश्यक है ही, प्रारम्भ में ध्यान को जमाने हेतु हमें उनके चित्रों और मूर्तियों का आश्रय भी लेना ही होगा। हम लोग स्वयं साकार रूप में हैं और अपने

आस-पास सभी वस्तुओं को साकार रूप में ही देखते हैं। यही कारण है कि निराकार ब्रह्म की आराधना और चिन्तन तो क्या, प्रारम्भ में निराकार पर ध्यान भी केन्द्रित नहीं कर पाते हम लोग। जनसामान्य और साधकों की इस समस्या के समाधान हेतु हमारे प्राचीन ऋषि-मुनियों और धर्मशास्त्रों ने एक सर्वसुलभ और लगभग पूर्णता के निकट एक आसान समाधान निकाला है— अपने उपास्य देव की साकार रूप में कल्पना और उनका प्रतीक मानकर उनके विग्रहों की पूजा-सेवा। भगवान शिव के किसी विग्रह अथवा शिवलिंग की पूजा-अर्चना करते समय भी, जब हमारे हाथ जल, पत्र-पुष्प, चन्दन-अक्षत, गंध-दीप चढ़ाने के कार्य कर रहे होते हैं; हम मन में चिन्तन कर रहे होते हैं भगवान शिव के रूप-स्वरूप का। भगवान शिव का विग्रह, चित्र अथवा लिंग हमारी पूजा का माध्यम मात्र होता है, वास्तव में भावनात्मक रूप में तो हम वे सभी वस्तुएं साक्षात भगवान शिव को ही समर्पित कर रहे होते हैं। इसके लिए आवश्यक है कि भगवान शिव के रूप-स्वरूप की मनोहर झांकी हमारे मन-मन्दिर में हर समय बसी रहे।

भगवान शिव का निवास कैलाश पर्वत

निराकार ब्रह्म के रूप में तो भगवान शिव का निवास शिवलोक है और शिवाराधक जीवात्मा को शरीर पूरा होने पर वहीं हर-चरणों में स्थान प्राप्त होता है। परन्तु साकार रूप में शिवजी की पूजा-आराधना करने वालों की धारणा के अनुसार भगवान भोलेशंकर अपनी आर्धांगनी शैलसुता पार्वतीजी और अपने वाहन नन्दी सहित कैलाश पर्वत की हिममण्डित चोटी पर निवास करते हैं। प्राचीन धर्म ग्रन्थों में कैलाश पर्वत की जो भोगौलिक स्थिति वार्णित की गई है उसके अनुसार कैलाश पर्वत हिमालय के उत्तरी भाग में स्थित एक चोटी का नाम होना चाहिए। आज यह चोटी चीन देश के अन्तरगत है। जहाँ तक कैलाश पर्वत पर भगवान शिव के दर्शन हेतु जाने का प्रश्न है, पूर्णतय वीरान है वह चोटी। माउण्ट एवरेस्ट के समाम ही बर्फ से ढंकी रहती है यह चोटी। इस चोटी पर भगवान शिव तपस्या करते हैं

और वह भी एकदम खुले स्थान पर। कभी वे माता पार्वती सहित कैलाश पर्वत की हरी-भरी सुन्दर घाटियों में भ्रमण करते हैं, तो कभी त्रिलोक्य भ्रमण के लिए भी निकल जाते हैं।
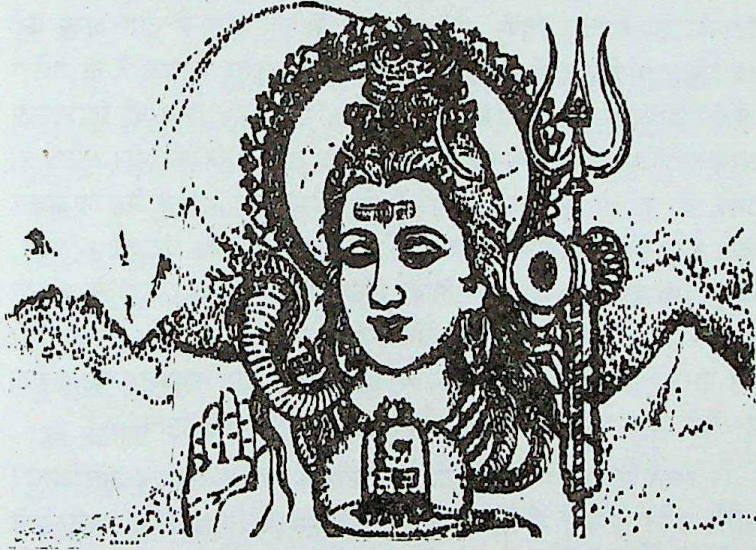
कैलाश पर्वत पर भगवान शिव ने अपने निवास हेतु कोई भवन तो क्या, प्राकृतिक गुफा भी नहीं बना रखी। सम्पूर्ण संसार के धारण और पोषण करने वाले आशुतोष शिव नीले अम्बर के शुभ्र तले निवास करते हैं, और वहीं उनके साथ रहती हैं भगवती पार्वती। यह शास्त्रों की मान्यता है। जहाँ तक तर्क की बात है, आज जिसे हम कैलाश पर्वत कहते हैं, वहाँ भगवान शिव तो क्या किसी जीवधारी तक के दर्शन कल्पनातीत हैं। शास्त्रों में वर्णित वह कैलाश पर्वत कहाँ है, कैसा है अथवा है भी या नहीं; कुछ कहा नहीं जा सकता। वैसे भी धार्मिक आस्थाओं का यह क्षेत्र श्रद्धा और विश्वास का क्षेत्र है, तर्क से न तो कुछ सिद्ध किया जा सकता है और न ही किसी वस्तु की प्राप्ति।

भगवान शिव का स्वरूप एवं सौन्दर्य

हमारे धर्म में ईश्वर के विविध रूपों और देवी-देवताओं की अभिकल्पना मानव रूप में ही की गई है। परंतु कुछ अन्य विशेषताएं भी होती हैं उनकी देहयष्टि में। भगवान विष्णु और लक्ष्मीजी के चार हाथ हैं तथा अन्य कई देव भी चतुर्भुज रूप में हैं। हनुमान जी का मुख वानर सदृश्य है तो गणेश जी का सम्पूर्ण मुखमडल हाथी का। इस रूप में भगवान शिव की विशिष्टता अत्यन्त अद्भुत है। भगवान शिव ही एकमात्र देव हैं जिनकी तीन आंखें हैं। उनके दो नेत्र तो अपने स्थानों पर हैं ही, तीसरा नेत्र मस्तक पर लम्बाकार खड़े रूप में है। सामान्यतय शिवजी का यह तीसरा नेत्र बंद ही रहता है, परन्तु क्रोधावेग में जब कभी महेश्वर शिव अपने इस तीसरे नेत्र को खोलते हैं, तब सामने उपस्थित राक्षस और वस्तुएं भस्म हो जाती हैं। शिवजी का यह तीसरा नेत्र और उनका ताण्डव्य नृत्य प्रलय और महाप्रलय का प्रतीक हैं, वैसे परम शांत, उदार और भक्तवत्सल हैं भगवान शिव।

लक्ष्मीपति भगवान विष्णु तो भव्य परिधान, अनेक आभूषण और आयुध धारण करते हैं तथा शैशसय्या पर विश्राम-मुद्रा में विराजते हैं। परन्तु सभी को सब कुछ देने वाले भगवान भोले शंकर परम तपस्वी और योगी रूप में हैं। वे सिर पर मुकुट नहीं; बल्कि लम्बे बढ़े हुए कैशों की जटाओं को लपेटकर जटा-जूट के रूप में धारण करते हैं। उनकी जटाओं पर मुकुट के रूप में एक ओर बालेन्दु—द्वतिया के चन्द्रमा रूप में चन्द्र देव—शोभायमान हैं तो जटाओं के मध्य भागीरथी गंगाजी एक कन्या के रूप में सुशोभित हैं। पतित-पावनी गंगाजी का केवल मुखमण्डल ही जटापुंज के ऊपर निकला हुआ है और उनके मुख से निकलती रहतीं है निरन्तर गंगाजी की धारा। भगवान शिव के मस्तक पर सुशोभित गंगाजी और चन्द्रमा की शोभा किसी बड़े-से-बड़े और सुन्दर-से-सुन्दर मुकुट से भी अधिक भव्य और मनोहर है और भक्तों को परमानन्द देने वाली। कुछ धर्मग्रन्थों के अनुसार सकल ब्रह्माण्ड

का प्रतीक अक्षर रूप ॐ भी भगवान शिव की जटाओं पर एक सितारे के समान देदीप्यमान है। जहाँ तक विषधर सर्पों का प्रश्न है वे तो जटाओं पर ही नहीं; भगवान शिव के सम्पूर्ण शरीर पर आभूषणों के समान शोभायमान हैं ही।

इस रूप में भगवान शिव के शरीर का आकार और आकृति एक हृष्ट-पुष्ट स्वस्थ मनुष्य जैसी है। परन्तु अन्य देवों के विपरीत कुछ अधिक प्रोढ़ और पुष्ट है उनका शरीर। उनके शरीर का रंग तो आकाश के सदृश्य नीलाभ है, परन्तु समुद्र मन्थन के समय निकलने वाले गरल को धारण करने के कारण कण्ठ नीलकमल के सदृश्य। जहाँ तक उनकी सुन्दरता का प्रश्न है कामदेव भी उनकी सुन्दरता के आगे कुछ नहीं। मंद-मंद मुस्कान प्रभु के चेहरे पर हर समय विराजती रहती है, अतः रसीले गुलाबी अधरों के मध्य दंतावली उसी प्रकार शोभित हो रही है जैसे मखमल के मध्य रखी मोतियों की माला। प्रभु के सभी अंग एकदम सुडोल, चिकने एवं पुष्ट हैं, परन्तु थुलथुल अथवा कठोर पेशियों से युक्त नहीं। उनका शरीर पूर्ण सन्तुलित, पुष्ट एवं दैदीप्यमान है। प्रभु की नासिका, चुबुक, अधर, कपोल, मस्तक आदि अंग-प्रति-अंग सुन्दरता की साक्षात मूर्ति हैं और मस्तक पर सुशोभित तीसरा नेत्र तो सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड का प्रतीक ही। यदि सम्पूर्ण पृथ्वी को कागज़ मानकर सौ जन्मों तक भी प्रभु के सुन्दर रूप का वर्णन किया जाए तो भी वह पूर्ण नहीं हो सकता। आपकी भगवान शिव, उनकी शक्तियों और सुन्दरता के बारे में जो भी कल्पनाएं एवं धारणाएं हैं उन सभी की झलक मन की आंखों से देखिए क्योंकि कल्पना से भी अधिक सुन्दर, शिष्ट, प्रिय वचन बोलने वाले और सुदर्शन हैं भगवान भोले शंकर।

वस्त्राभूषण, आयुध और डमरू

भगवान श्रीविष्णु ही नहीं; हमारे अधिकांश देवी-देवता राजस रूप में हैं, अतः कीमती वस्त्राभूषण धारण करते हैं। इनके विपरीत भगवान शिव और

उनके अवतार श्री हनुमानजी और भैरवदेव कोई आभूषण तो क्या पर्याप्त वस्त्र तक धारण नहीं करते। भगवान शिव के खजाने में कोई कमी नहीं, देवों-दानवों और मानवों को सब कुछ देते हैं, परन्तु स्वयं धारण करते हैं व्याघ्र चर्म। भगवान शिव को बाघाम्बर अर्थात वस्त्र के रूप में बाघ की खाल लपेटे हुए निरूपित किया गया है तो ताण्डव नृत्य करते समय हाथी की खाल। जब आप वस्त्र तक धारण नहीं करते, तब आभूषणों का तो प्रश्न ही उत्पन्न नहीं होता। आप अपने हाथ-पैरों, जटाओं, ग्रीवा और अंग प्रतिअंग पर भंयकर काले नागों को आभूषणों के रूप में धारण करते हैं। हमारे देवी-देवताओं में महादेव शिव ही एकमात्र वह देव हैं जो आभूषणों के रूप में नागों को धारण करते हैं तो वस्त्र के रूप में बाघ अथवा गज चर्म को। भगवान शिव गले में माला तो पहनते हैं, परंतु रत्नों और मोतियों की नहीं, बल्कि रुद्राक्ष की। इन वस्तुओं में रुद्राक्ष ही एकमात्र वह वस्तु है जो आप धारण कर सकते हैं। वैसे भी रुद्राक्ष की माला पहनना और रुद्राक्ष की माला से जप करना शिवजी की आराधना-उपासना का एक अनिवार्य अंग है, तुलसी की माला का शिवाराधना में निषेध है।

राक्षसों के विनाश तथा देवासुर संग्रामों में असुरों के संहार हेतु हमारे अधिकाशं देवी-देवता अनेक अस्त्र-शस्त्र अपने पास रखते हैं और भगवान विष्णु की तरह अनेक चतुर्भुज रूप में हैं, तो भगवती दुर्गा के अनेक हाथ। परंतु संहार के संचालक, प्रलयकाल में प्रलयकर्ता और त्रिपुर जैसे राक्षसराज का विनाशक होते हुए भी भगवान शिव के मात्र दो ही हाथ हैं। जहाँ तक हथियारों का प्रश्न है आप मात्र एक त्रिशूल रखते हैं। भगवान विष्णु को आपने सुदर्शन चक्र और भयंकर गदा दिए हैं तो इन्द्र को वज्र, परंतु भगवान शिवशंकर ने अपने लिए मात्र एक त्रिशूल रखा है। इस त्रिशूल को भी वे हर समय अपने हाथ में नहीं रखते, बल्कि अपने आसन पर बैठते समय निकट ही भूमि पर गाढ़ देते हैं।

संगीत और नृत्य कला के जन्मदाता हैं भगवान शिवशंकर और गायन-वादन एवं नृत्य के परम रसिया भी। यही कारण है कि आप हर समय अपने हाथ में डमरू रखते हैं। डमरू भगवान शिव का परम-प्रिय वाद्य यंत्र है और उसे समय-समय पर बजाते रहना आपका प्रिय मनोविनोद। भगवान शिव नृत्य करते समय एक हाथ में तो डमरू लेकर बजाते रहते हैं और दूसरे हाथ में ले लेते हैं त्रिशूल। इस प्रकार भगवान शिव के लिए त्रिशूल एक शस्त्र से भी अधिक उनके मवोविनोद का साधन और नृत्य में प्रयोग किए जाने वाला विशिष्ट उपकरण है। वैसे भी कालों के भी काल महाकाल, प्रलय और जीवन-मरण के संचालक भगवान शिव को किसी अस्त्र-शस्त्र की आवश्यकता नहीं, प्रलय के लिए उनका ताण्डव नृत्य ही काफी है, तो असुर संहार हेतु तीसरा नेत्र खोलना।

भगवान शिव का वाहन नादिया

भगवान विष्णु का वाहन सुपर्ण नामक गरुण है तो इन्द्र का वाहन सात सूंड वाला एरावत हाथी। धनधान्य की देवी लक्ष्मी जी का वाहन हाथी और उलूक हैं तो भगवती दुर्गा का वनराज सिंह। अन्य देवों को एक से एक बलशाली और तीव्रगामी वाहन प्रदान करने के बावजूद भगवान शिव ने अपने लिए रखा नन्दी नामक एक वृद्ध बैल। नन्दी जिसे लोकभाषा में प्रायः नादिया कहा जाता है देखने में दुबला-पतला और वृद्ध बैल है, परन्तु बुद्धि चातुर्य और ज्ञान में अनेक देवों से भी बढ़-चढ़ कर। भगवान शिव जब त्रिलोक्य भ्रमण के लिए कहीं अकेले अथवा अपनी प्रियतमा पार्वती के साथ जाते हैं तब तो नन्दी पर सवार होकर जाते ही हैं, मातेश्वरी पार्वतीजी जब अकेली ही कहीं जाती हैं तब भी नन्दी पर सवार होकर ही जाती हैं। नादिया बैल के रूप में उमा-महेश की सवारी के काम आता है और जब भगवान शंकर कैलाश पर्वत पर निवास करते हैं तब वह मानव आकृति धारण करके उनके गणों के समूह में टपस्थित रहता है।

भगवान शिवजी के मन्दिरों में जहाँ शिवलिंग तो मध्य भाग में स्थित होता है और उसके चारों और उनकी अर्धांगिनी मातेश्वरी पार्वती और दोनों पुत्रों– कार्तिकैयजी और गणेशजी– की प्रतिमाएं स्थापित होती हैं, वहाँ तो नादिया भगवान के लिंग के सम्मुख ही बैठी हुई में अवस्था स्थित रहता है। ज्योतिर्लिंगों और ऐसे मन्दिरों में जहाँ विशाल आकार का शिवलिंग एकल रूप मे स्थापित होता है नादिए की मूर्ति गर्भगृह के बाहर लगाई जाती है। भगवान शिव का वाहन नन्दी जहाँ वृष रूप में आपका वाहन और गण के रूप में आपका सेवक है, वहीं ज्ञान-विज्ञान और संस्कृति एवं शिक्षा की खान भी। भगवान शिव के अनेक स्तोत्र और मन्त्र तो नन्दी द्वारा रचित माने ही जाते हैं, कामशास्त्र पर लिखित प्रथम पुस्तक भी स्वयं नन्दी द्वारा रचित मानी जाती है।

भगवान शिव का परिवार

भगवान शिव सम्पूर्ण सृष्टि के उत्पन्नकर्ता, धारण-पोषणकर्ता और संहारक हैं, अतः यह अखण्ड ब्रह्माण्ड ही है उनका परिवार। हम सब उनके बालक है और वे हैं हमारे परम-पिता। परन्तु जब हम कैलाशपति साकार शिव की बात करते हैं, उस रूप में इस ब्रह्माण्ड के अलावा उनका अपना स्वयं का एक सीमित परिवार भी है। शिवजी की हृदेश्वरी का नाम है पर्वतराज पुत्री पार्वतीजी। पार्वतीजी ही अपने पूर्व जन्म में भगवती सती थीं जो अपने पिता से यज्ञ में शिवापमान के कारण भस्म होकर दूसरे जन्म उमा अथवा पार्वती के रूप में अवतरित हुईं। आपके दो पुत्र हैं—बड़े पुत्र कार्तिकेय और छोटे पुत्र गणेशजी। दुर्गा, काली, भगवती आदि मातृशक्तियों के सभी रूपों को शिव भार्या सती का रूप और अवतार माना जाता है तो गणेश जी तो प्रथम पूज्यनीय देव हैं ही। हमारे धर्म में जिन पांच देवों की पूजा-आराधना सबसे अधिक होती है, उनमें से तीन शिव परिवार में से हैं। यही कारण है कि भगवती सती, पार्वती, गणेशजी और कार्तिकेय जी कुछ

चर्चा तो हम आगामी अध्याय में करेंगे, यहाँ एक दृष्टि डालते है शिवजी के विशिष्ट सहायकों अर्थात गणों पर।

शिवजी के सहायक अर्थात उनके गण

भगवान शिव अपनी भार्या उमा सहित नीले अम्बर के शुभ्र तले कैलाश पर्वत पर विराजते हैं, कोई महल अथवा विशिष्ट आभूषण उनके पास नहीं। परम त्यागी और वीतरागी हैं भगवान शिव। परन्तु जहाँ तक उनके सहायकों, सेवकों, दूतों और अनुचरों का प्रश्न है, वे भगवान विष्णु से भी कई गुना अधिक हैं। भोले शंकर के समान ही उनके ये सेवक और सहायक भी तड़क-भड़क और आडम्बर से पूर्णतः दूर रहते हैं। न तो वे भगवान विष्णु के सहायकों के समान चार हाथों वाले हैं और न ही अति सुन्दर। जिस प्रकार शिवजी शरीर पर भभूति लगाकर बाघाम्बर लपेटते हैं उसी प्रकार उनके दूत भी आधे-अधूरे वस्त्र पहनते है और कुछ तो दिगम्बर ही रहते हैं। जहाँ तक उनकी शारीरिक सुन्दरता का प्रश्न है, वे सुन्दर तो हैं ही नहीं, अधिकांश तो कुरूप और भयंकर शक्लों वाले भी हैं। शिवजी के इन सहायकों और दूतों को शिवजी के गण कहा जाता है। धार्मिक पुस्तकों और जनसामान्य में व्याप्त धारणाओं के अनुसार भूत-प्रेत, पिशाच, जिन्द, बेताल आदि शामिल हैं शिवजी के गणों में। वैसे शिवजी की सामान्य पूजा की जाए अथवा लौकिक वस्तुओं और विग्रह का उपयोग करते हुए पूर्ण विधिविधानपूर्वक आराधना या फिर मानसिक उपासना, उनके इन दूतों का चिन्तन-मनन, ध्यान व आह्वान आदि नहीं किया जाता। मन मन्दिर में शिवजी के रूप-स्वरूप की झांकी बसाकर ही कर ली जाती है भगवान शिव की पूजा, आराधना एवं उपासना।

गत अध्याय में हमने भगवान शिव के निराकार रूप का तत्व-चिंतन किया है तो इस अध्याय में उनके साकार रूप का भावनात्मक अवलोकन। हमारे उपास्य देव, सृष्टि संचालक, देवों के देव महादेव शिव साकार हैं

या निराकार, निर्गुण हैं या सगुण, सक्रिय हैं या अकर्मा, इस बारे में कुछ कहा नहीं जा सकता। जहाँ वेद भगवान शिव और अन्य सभी देवी-देवताओं को निराकार शब्द रूप में मानते हैं, मंत्रों में विविध देवताओं और परमपिता के रूप के दर्शन करते हैं, वहीं पुराण उन्हें साकार और सर्वव्यापी मानते हैं। कुछ धर्मशास्त्र भगवान शिव, भगवान विष्णु और विभिन्न देवों को सगुण और निर्गुण का अद्‌भुत समिश्रण कहते हैं तो कुछ धर्मशास्त्र पलपल रूप बदलने वाला सर्वज्ञ। भगवान का इतने रूपों में जो वर्णन है, उसको अनेक रूपों में जो निरूपित किया गया है, वास्तव में वह भी उसकी महिमा का ही एक भाग है। वह सर्वज्ञ, सृष्टि-निर्माता, पालक एवं संहारकर्ता तथा अखण्ड ब्रह्माण्ड का धारक इतना महान एवं बहुआयामी है कि बुद्धि के माध्यम से उसे समझा ही नहीं जा सकता। उसे जानने के लिए चाहिए भक्ति भावना से भरपुर, श्रद्धा से ओतप्रोत आस्तिक हृदय। तर्क को अपना आभूषण मानने वाला शंकालु व्यक्ति तो सामने उपस्थित वस्तु में भी शंकाएं, अगर-मगर, किन्तु-परन्तु निकालता रहता है फिर मन की आंखों से देखे जाने वाले भगवान् शिव के दिव्य रूप के दर्शन वह कर सके यह तो लगभग असम्भव ही है। अतः इस तर्क-वितर्क में न पड़कर, हम अपनी आस्था और ज्ञान के आधार पर बसा लें अपने हृदय में भगवान शिव की एक मनोरम झांकी। भगवान शिव हमारे हृदय-सिंहासन पर अटल रूप से विराजमान रहें और दिन प्रतिदिन हमारे हृदय में बढ़ती जाए उनसे प्रीत, इसके लिए आवश्यक है कि हम उनकी हृदेश्वरी माता पार्वतीजी और उनके पुत्र गणेशजी एवं कार्तिकियजी से भी सच्चा प्रेम करें। तो आइए अब एक दृष्टि डालते हैं उनके इस अद्‌भुत परिवार पर।

विशिष्टताओं और विरोधाभासों का सागर

3

भगवान शिव का परिवार

सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड ही भगवान शिव द्वारा निर्मित, पोषित और संचालित है। सभी देवी-देवता भगवान शिव की निराकार ज्योति से उत्पन्न होकर उनके आदेश अनुसार अपने-अपने निर्धारित कार्य करते हैं और अन्त में उनमें ही समा जाते हैं। ब्रह्माण्ड में जो भी कुछ है वह भगवान शिव के प्रताप से ही निर्मित और स्थित है। यही कारण है कि कोई वस्तु उनके लिए त्याज्य नहीं, सभी जीवों और जीवधारियों से उन्हें समान प्यार है और सभी समान रूप से स्थान पाते हैं उनके दरबार में। सत्यम्-शिवम्-सुन्दरम् का परम सौम्य रूप भी भगवान शिव हैं तो काल का भी काल ताण्डवनृत्य-रत परम विध्वंसक रूप भी है आपका। शक्ति स्वरूप माँ भगवती को पार्वती रूप में अपनी अर्द्धांगिनी स्वीकार करके आप जहाँ मातेश्वरी को अपनी चरण-सेवा का अवसर प्रदान कर रहे हैं, वहीं एक अन्य नारी जगतारणी गंगाजी को आपने अपने भाल पर धारण किया हुआ है। कितनी विविधिता है भगवान शिव के इस रूप-स्वरूप में।

भगवान शिव का रूप-स्वरूप स्वयं तो विविधिताओं का सागर है ही, आपका परिवार तो विरोधाभासों का वह महासागर है जिसे देखकर एक बार तो बुद्धि चकरा ही जाती है। शिवजी का वाहन घास-पात खाने वाला निरीह पशु नन्दी नामक वृद्ध बैल है तो आपकी भार्या का वाहन शिकार पर जीवित रहने वाला क्रूर वनराज बब्बर सिंह। शिवजी स्वयं अपने शरीर

पर आभूषणों के समान बड़े-बड़े विषधरों को धारण करते हैं तो नागों का प्रबल शत्रु और भक्षणकर्ता मयूर है आपके बड़े पुत्र कार्तिकियजी का वाहन। यही नहीं, आपके दूसरे पुत्र गणेशजी का वाहन तो वह मूषक है जो सांपों का प्रिय भोजन है। परस्पर कितनी शत्रुता है इन जीवों में फिर भी ये सभी शिव परिवार में एक साथ रहते हैं और रहें भी क्यों नहीं, इन सबके निर्माता तो भगवान शिव ही हैं।

शिवभार्या मातेश्वरी पार्वतीजी

हमारे धर्म में सर्वाधिक शक्ति व सामर्थ्यवान, जन-जन में पूज्यनीय पांच प्रमुख देव हैं—भगवान शिव, जगद्पालक सुदर्शन चक्रधारी भगवान् विष्णु, भूमण्डल के प्रकाशपुंज श्री सूर्यदेव, प्रथम पूज्यनीय देवता गणपति गणेश और मातृशक्ति भगवती भवानी। इनमें मातृशक्ति भवानी शिव भार्या सती और पार्वतीजी के ही विविध रूप और अवतार हैं। गणेशजी मातेश्वरी पार्वती और शिवजी के पुत्र हैं और इस प्रकार पांच प्रमुख देवों में से तीन हैं भगवान शिव के परिवार के सदस्य।

अपने अनादि रूप में भगवान शिव निराकार ब्रह्म हैं, परन्तु सृष्टि उत्पन्न और संचालित करने हेतु वे अपने दाहिने अंग से भगवान विष्णु और वाम अंग से जगद्पिता ब्रह्मा को उत्पन्न कर स्वयं शिव के साकार रूप में प्रकट होते हैं। कालान्तर में शिव के इस साकार रूप का परिणय संस्कार प्रजापति दक्ष की कन्या भगवती सती के साथ हुआ और दोनों कैलाश पर्वत पर सुखपूर्वक रहने लगे। इसके बहुत समय बाद प्रजापति दक्ष ने एक विशाल यज्ञ का आयोजन किया, परन्तु उसमें अपना जमाता और पुत्री होने के बावजूद भगवान शिव और मातेश्वरी सती को नहीं बुलाया। अपने पिता के घर बिना निमन्त्रण के जाने के बाद वहाँ सतीजी ने स्वयं और अपने जीवनाधार शिवजी का जो अपमान अनुभव किया उसे वे सहन न कर सकीं और यज्ञकुण्ड में कूद कर अपने प्राणों की आहुति दे दी। क्रोधित

होकर भगवान शिव और उनके गणों ने प्रजापति दक्ष के यज्ञ को न केवल तहस-नहस कर दिया बल्कि सतीजी के प्राणविहीन शरीर को लेकर कैलाश पर्वत की ओर चल पड़े। सती जी के अंग रास्ते में स्थान-स्थान पर गिरते गए और जहाँ भी कोई एक अंग गिरा वहाँ-वहाँ बन गया मातेश्वरी का एक-एक शक्तिपीठ जिन्हें हम भगवती दुर्गा, काली, नयनादेवी, ज्वालादेवी आदि नामों से जानते हैं।
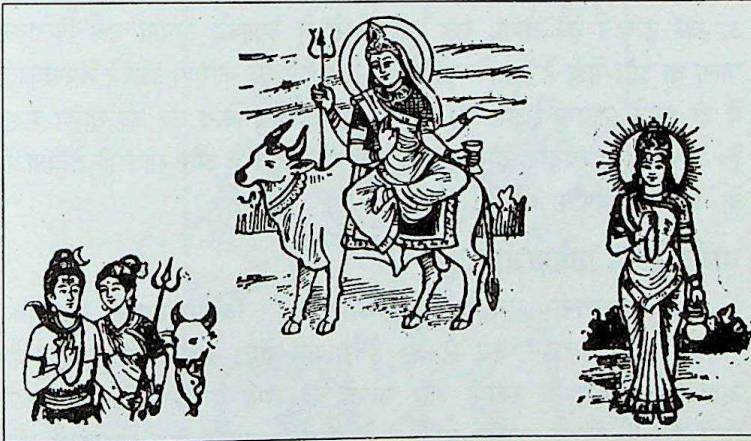
सतीजी ही अगले जन्म में शैलकुमारी पार्वतीजी के रूप में अवतरित हुईं। उमा, गिरिजा, शैलसुता आदि भी मातेश्वरी पार्वतीजी के ही नाम हैं। पार्वती जी ने कठोर तपस्या करके भगवान शिव को पति रूप में प्राप्त किया था। कार्तिकेय जी और गणेशजी पार्वतीजी के दो पुत्र हैं और अत्यन्त मोहक और विलक्षण है दोनों के ही अवतार धारण की कथाएं। आज हम शिवजी के जो युगल चित्र देखते हैं और मन्दिरों में शिवलिंग के एक ओर उनकी भार्या के रूप में जो प्रतिमा स्थापित की जाती है दह पार्वतीजी की ही होती है। शिवजी की भार्या के रूप में सती जी की पूजा का विधान नहीं। वैसे सती और पार्वतीजी पृथक्-पृथक नहीं, एक ही मातृशक्ति

के दो रूप हैं और दुर्गा, भवानी, काली, सरस्वतीं आदि आप ही के विविध रूप और अवतार।

भगवान शिव के ज्येष्ठ पुत्र कार्तिकेयजी

भगवान मुरगन नाम से दक्षिण भारत के प्रमुखतम देव का ही उत्तर भारत में नाम है श्री कार्तिकेयजी। आप भगवान शिव के पुत्र हैं परन्तु माता पार्वती के गर्भ से उत्पन्न होने के स्थान पर अत्यन्त विस्मयकारी है आपकी उत्पत्ति की कथा। छह कृतिकाओं ने आपको अपना दूध पिलाकर पाला था और यही है आपके कार्तिकेय नाम होने का कारण। आपने बाल्यकाल में ही तारक नामक राक्षस का वध किया था। कार्तिकेय जी का वाहन मयूर है। आप प्रचण्ड विद्वान और परम तपस्वी माने जाते हैं और साथ ही देवाताओं के प्रधान सेनापति भी हैं।

पार्वतीनन्दन गणेशजी

प्रथम पूज्यनीय देव हैं गणपति गणेश और विघ्नविनाशक, विनायक, लम्बोदर और गजानन जैसे सैकड़ों हैं आपके नाम। आपका वाहन चूहा है। आप रिद्धि-सिद्धि के स्वामी और भक्तों की सभी मनोकामनाएं पूर्ण करने वाले देव हैं। मोदक अर्थात मोतीचूर के लड्डू आपका प्रिय भोजन है और भगवान शिव की तरह ही आप भी नृत्य एवं संगीत के प्रबल रसिया हैं। आपके जन्म के बारे में यह कथा कही जाती है—

एक समय की बात है। पार्वतीजी अन्दर स्नान करने लगीं तो उन्होंने नन्दी को द्वार पर नियुक्त करके कहा कि मेरी अनुमति के बिना भीतर कोई न आने पाये। दैवात् उसी समय शंकरजी आ गये। नन्दी ने स्वामिनी की आज्ञा सुनाकर उन्हें भीतर जाने से रोका। शिवजी उसे डांटकर अन्दर चले गए। उनका सेवक होने के कारण नन्दी कुछ नहीं कर सका। इस घटना के दूसरे दिन पार्वतीजी ने विचार किया कि कोई ऐसा व्यक्ति होना चाहिए जो हर स्थिति में मेरी आज्ञा का पालन करे। उस पर भगवान के

रौब-दाब का कोई प्रभाव न पड़े। उस समय सखियाँ उनके शरीर में उबटन लगा रही थीं। उन्होंने उसी उबटन से एक मानव आकृति बनाई और उसमें असाधारण शक्ति का संचार किया। फिर उसके हाथ में एक डंडा देकर कहा—वत्स! तुम मेरे पुत्र हो। तुम द्वार पर बैठकर द्वारपाल का काम करो और मेरी अनुमति के बिना किसी को अन्दर मत आने देना, चाहे कोई भी क्यों न हो।

माता की आज्ञा पाकर बालक द्वार पर बैठ गया। जब शिवजी आए और अन्दर जाने लगे तो गिरिजानन्दन ने उन्हें रोक दिया। शिव जी की डाँट-फटकार का भी उन पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा। जब कैलाशपति अन्दर जाने के लिए जबरदस्ती करने लगे तो उन्होंने डंडा संभालकर युद्ध करने की धमकी दी। युद्ध हुआ। भगवान शंकर ने बालक का सिर काट डाला, जो कटते ही भस्म हो गया। अपने पुत्र की इस प्रकार हत्या होते देख पार्वतीजी पीड़ा और शोक से व्याकुल होकर विलाप करने लगीं। शिवजी

ने उन्हें बहुत समझाने की चेष्टा की, परन्तु पार्वतीजी बारम्बार यही आग्रह कर रही थीं कि इसे जीवनदान दो। अन्त में भगवान शिव ने अपने गणों से कहा कि जाकर देखो जो भी प्राणी मिले, उसका सिर काटकर ले आओ। एक गण ने एक श्वेत हाथी का सिर काटकर भगवान शिव को दिया, जिसे उन्होंने बालक की गर्दन पर स्थापित कर दिया और कहा, आज से तुम मेरे सारे गणों के अध्यक्ष होगे, इसलिए गणेश कहलाओगे। पार्वतीजी ने गणेश के सिर पर सिंदूर लगाकर आशीर्वाद दिया कि संसार में तुम्हारी पूजा सिंदूर से होगी और प्रत्येक शुभ कार्य में सबसे पहले तुम्हारा आह्वान होगा। तुम्हें विघ्नहर्त्ता के रूप में स्मरण किया जाएगा। इस प्रकार भाद्रप्रद कृष्ण चतुर्थी को गणेशजी का जन्म हुआ।

इस अध्याय में भगवान शिव की भार्या और उनके पुत्रों की ही चर्चा शिवजी के परिवार के रूप में की गई है, जबकि वास्तव में सम्पूर्ण संसार ही है आपका परिवार। आप इस अखण्ड ब्रह्माण्ड के रचियता और धारणकर्ता तो हैं ही, प्रत्येक जीव में अंश रूप में स्वयं विराजमान भी हैं। यही कारण है कि एक सच्चे भक्त के लिए तो प्रत्येक जीव ही शिव स्वरूप है और यह सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड है शिवजी का परिवार।

भगवान और शिवलिंग शब्दों से सम्बन्धित

4

कुछ शंकाएं और समाधान

किसी भी परम-पवित्र और धर्म-सम्मत विषय अथवा प्रतीक के बारे में आधी-अधूरी और भ्रामक जानकरियाँ किस प्रकार भ्रम का मायाजाल फैलाकर आस्तिकों तक को संशय में डाल सकती हैं इसका प्रबलतम प्रमाण है भगवान आशुतोष शिव की लिंग रूप में मूर्तियाँ। शिवभक्त तीन मेखलायुक्त वेदी में स्थापित शिव का लिंग पूजन करते हैं और भगवान शिव और उनकी शक्तियों का प्रतीक ही नहीं; बल्कि साक्षात शिव ही मानते हैं इन मूर्तियों को। दूसरी ओर कुछ संशय आत्मा भगवान शिव के इस साक्षात प्रतीक की आकृति और नाम के कारण व्यर्थ भ्रम में पड़कर इसका मन-ही-मन भ्रामक अभिप्रायः निकाल लेते हैं। यह एक भ्रम ही बदल देता है उनके सम्पूर्ण चिन्तन, धर्म के प्रति आस्था और जीवनधारा को। तो आइए पहले निराकरण कर ही लिया जाए भगवान और शिवलिंग जैसे शब्दों के बारे में फैले हुए इस भ्रम का।

शंकाओं के कारण और परिणाम

एक-एक शब्द के कई अर्थ होते हैं और ऐसा होना भाषा का कोई दोष अथवा कमी नहीं; बल्कि किसी भी समृद्ध भाषा को जीवन्त और लालित्यपूर्ण बनाने का मूलाधार है। शब्द 'पर' का अर्थ पक्षियों का पंख भी होता है और ऊपर के अभिप्राय में भी प्रयुक्त होता है यह शब्द। यही नहीं, समय के साथ-साथ कुछ शब्दों के अर्थ और अभिप्राय बदल भी जाते हैं अथवा

उनका सबसे महत्वपूर्ण अर्थ तो गोण हो जाता है और किसी समय का सहायक अर्थ ही बन जाता है काल विशेष में मुख्य पर्याय। भग और लिंग शब्दों के बारे में तो आज यह स्थिति पराकाष्ठा पर पहुँच चुकी है और इसी विभ्रम ने किया है सारे अर्थ का अनर्थ।

आज का तथाकथित पढ़ा लिखा अर्धशिक्षित समाज तथा अज्ञान के अंधकार में भटक रहे संशय आत्मा व्यक्ति प्रायः ही लिंग और भग का अर्थ पुरुष एवं स्त्री की जनेन्द्रियों से जोड़कर अश्लीलता के दायरे में ले आते हैं इन शब्दों और प्रतीकों को। दोष शायद उनका भी नहीं, जब हवा ही उल्टी बह रही है तो वे भी क्या करें। इस पर भी दुर्भाग्य की पराकाष्ठा यह है कि जब वे इस बारे में किसी सामान्य भक्त अथवा पण्डे पुजारी से चर्चा करते हैं तब वह उनकी शंकाओं का समाधान तो करता नहीं, बल्कि धर्म में अक़्ल की दखल नहीं अथवा तुम नहीं समझोगे इन धर्म-कर्म की बातों को कहकर टाल देते हैं। धर्म प्रेमियों और धर्माचार्यों की इस प्रकार की टरकाऊ बातों ने न जाने कितन नवयुवकों को धर्म के प्रति श्रद्धाहीन बनाया है यह तो ईश्वर ही जाने, वैसे पको आस-पास ही मिल जाएंगे इस बात के अनेक प्रमाण।

भगवान शब्द का अर्थ एवं अभिप्राय

ईश्वर को भगवान भी कहा जाता है ठीक उसी प्रकार जिस तरह दया करने वाले को दयावान और बलशाली को बलवान। यहाँ कुछ व्यक्ति भग का अर्थ योनि से लगाकर अर्थ का अनर्थ कर देते हैं जबकि बहुत ही व्यापक अर्थ है और क्षेत्र है इस शब्द का। प्राचीन धर्म ग्रन्थों में जीवन की सर्वाधिक महत्वपूर्ण छह उपलब्धियों को भग कहा गया है और इन छह का सयुंक्त नाम है षट्भग। इन षट्भगों में योनि तो क्या वासना और ाम तकं का कहीं नाम नहीं। ये छह भग हैं–

1. एश्वर्य (Wisdom)– हर प्रकार की शक्तियों, सामर्थ्यों एवं

साधनों का भरपूर मात्रा में होना। जिसे किसी तरह का कोई अभाव न हो और जिस वस्तु की कामना करे उसे प्राप्त कर सके उसे कहते हैं एश्वर्यवान। इन सभी लौकिक और अलौकिक एश्वर्यों का एकमात्र स्वामी वह परम ब्रह्म है और यही कारण है कि भगवान का एक नाम ईश्वर भी।

2. लक्ष्मी (Prosperity)– भगवान विष्णु का एक नाम लक्ष्मीपति भी है और दूसरा लक्ष्मी-नारायण भी। लक्ष्मी अर्थात अकूत धन सम्पति को भी एक भग माना गया है और यही कारण है कि धनाण्यों का प्रायः ही भाग्यवान भी कहा जाता है। यहाँ एक विशेष ध्यान रखने की बात यह कि किसी एक भग के कृपापात्र को तो भाग्यवान कहा जाता है और छहों भगों के स्वामी को भगवान।

3. यश (Glory)– प्रत्येक धन कुबेर एश्वर्यों का भोग कर सके अथवा एश्वर्यवान व्यक्ति यशस्वी भी हो यह आवश्यक नहीं। लक्ष्मी एश्वर्य और यश प्राप्ति में सहायक तो हो सकती है, परन्तु यश का पर्याय नहीं। भगवान राम ने चौदह वर्ष का वनवास धारण कर यश प्राप्त किया तो भीष्म पितामह ने आजीवन ब्रह्मचर्य व्रत धारण करके। यशस्वी व्यक्तियों को भाग्यवान कहने की परम्परा वैदिक काल से ही चली आ रही है तो इसका एकमात्र कारण यही है कि यश भी एक भग है, और यश एवं अपयश की प्राप्ति है अपने कार्यों और प्रभु की कृपा के अधीन।

4. धर्म (Sprituality)– धर्म का अर्थ है जीवन का पवित्र आचरण। जो समाज और शास्त्रों द्वारा स्वीकृत हो और साथ ही धारण करने योग्य वही धर्म है। हिन्दू, मुस्लिम, सिख, ईसाई, जैन, बौद्ध आदि तो पन्थ हैं, मूल धर्म तो एक ही है—ईश्वर का चिन्तन-मनन तथा उसके बतलाए मार्ग पर चलना। ईश्वर के प्रति अटूट श्रद्धा, उससे एकाकार होने की भावना और धर्म के मार्ग पर चलने की प्रेरणा हमें भगवत्कृपा से ही प्राप्त होती है क्योंकि इस चतुर्थ भग का स्वामी भी तो वही भगवान है।

5. ज्ञान (Knowledge)– मानव और पशु में सबसे बड़ा अन्तर ही बुद्धि और ज्ञान की मात्राओं का है। भोजन, शयन, सांसारिक कर्म और सन्तानोत्पति तो पशु भी करते हैं, परन्तु ज्ञान के गहरे सागर में डूबकर ब्रह्मानन्द और ब्रह्म चिन्तन के सुख की प्राप्ति का सौभाग्य केवल मानव को ही प्राप्त है। कुछ अज्ञानी धर्म और ज्ञान को परस्पर विरोधी समझने और कहने की त्रुटि करते हुए भी पाए जाते हैं। परन्तु जरा सोचिए तो सही क्या ज्ञान के विगैर चिन्तन सम्भव है और यह चिन्तन ही है हमारी सम्पूर्ण धार्मिक, सामाजिक और व्यक्तिगत प्रगति का आधार।

6. वैराग्य (Asceticism)– संसार के सभी कर्मों को करते और भोगों को भोगते समय भी उनमें न डूबने का नाम है वैराग्य। संसार का त्याग करके संन्यास धारण करने वाला व्यक्ति भी वैरागी कहलाने का अधिकारी नहीं, यदि वह कामनाओं का त्याग नहीं कर पाया है। महाराज जनक राजा होते हुए और भगवान शिव सभी भगों के अधिष्ठाता होने ने वाबजूद परम वैरागी हैं और यही स्थिति रही है भगवान श्रीराम, योगेश्वर भगवान श्रीकृष्ण तथा अन्य अनेक महान विभूतियों की।

संसार में अधिकांश व्यक्तियों को तो उपरोक्त छह में से एक भग की भी यथेष्ठ मात्रा में प्राप्ति नहीं हो पाती और यही कारण है कि नारी योनि को ही भग मानकर वे स्वयं को भगपति अथवा भाग्यवान होने के भ्रम में जिये जाते हैं। हमारे धर्म और भारतीय संस्कृति ने गृहणी को लक्ष्मी का स्वरूप, पुरुष का भाग्य और धर्म के आधारों में से एक सन्तानोत्पति का माध्यम तो माना ही है, पुरुष के एश्वर्य और सामर्थ्य का प्रतीक भी होती है उसकी अर्द्धांगिनी। शायद इन विशेषताओं के कारण ही जीवन सहचरी के सबसे अमूल्य और आनन्द प्रदायक अवयव का एक नाम भग भी लोक प्रचलित हो गया है और इस अभिप्राय ने ही कर दिया अर्थ का यह अनर्थ।

भाग्यवान, भगवन और भगवान

हमारे देश में अनेक महापुरुष, ऋषि-मुनि, धर्म प्रचारक और सम्राट हुए हैं परन्तु जिन्हें भगवत तुल्य अथवा भगवान के अवतार माना गया है वे कुछ ही हैं। एक अथवा दो भगों के स्वामी अथवा कृपा पात्र को भाग्यवान कहा जाता है, परन्तु भगवन अथवा भगवान के प्रिय पुत्र कहलाने के अधिकारी वही महाभाग हैं जिन पर छहों भगों की कृपा होती है। महावीर स्वामी हों अथवा गौतम बुद्ध, भगवान श्रीराम हों अथवा श्रीकृष्ण, राज-परिवारों में उत्पन्न हुए, धन-सम्पत्ति और एश्वर्य की उनके पास कमी न थी। उन्होंने न केवल धर्म का पालन और प्रचार किया बल्कि नई-नई विचार धाराएं और राहें प्रदान कीं धर्म को। उनकी योग्यता और ज्ञान को तो किसी लौकिक पैमाने से मापा ही नहीं जा सकता, जबकि उनका यश तो आज तक अक्षुण है। परन्तु उनकी सबसे बड़ी विशेषता थी वैराग्य और इस वैराग्य ने ही उन्हें बनाया भगवान अथवा भगवान के समकक्ष।

बहुत से व्यक्ति दूसरों को सम्मान देने के लिए कभी-कभी भगवन शब्द का प्रयोग करते हैं जो उचित नहीं। दूसरों के प्रति आदर प्रदर्शित करना अच्छी बात है, परन्तु सामान्य व्यक्तियों के लिए इसका प्रयोग करके कृपया अर्थ का अनर्थ न कीजिए। हमारे जगद्गुरु शंकराचार्यों एवं कुछ महामण्डेलेश्वरों को यद्यपि भगवन नाम से सम्बोधित किया जा सकता है क्योंकि पीठासीन अधिकारी होने के कारण पर्यात लक्ष्मी, वैभव और यश के अधिकारी तो वे हैं ही, उनके ज्ञान और धर्म-पालन ने ही पहुँचाया है उन्हें इन पदों पर। जहाँ तक वैराग्य का प्रश्न है, चाहे वे पूर्णतः वैरागी न भी हों, परन्तु जनसामान्य की अपेक्षा कई गुना अधिक त्याग और वैराग्य तो उनमें है ही। परन्तु उनके लिए भी हम भगवन शब्द का ही प्रयोग कर सकते हैं,क्योंकि भगवत्कृपा से छहों भगों की कृपा उन्हें प्राप्त है, इनके वे स्वामी नहीं। भगवान शिव ही छहों भगों के स्वामी हैं और इसीलिए

भगवान कहलाने के एकमात्र अधिकारी। ब्रह्मा-विष्णु-महेश की त्रिमूर्ति में सृष्टि उत्पादक होने के वावजूद ब्रह्माजी को प्रायः भगवान नहीं माना जाता तो इसीलिए कि रजोगुण की प्रमुखता के कारण उनमें वैराग्य और एश्वर्य तत्वों का अभाव है। सभी देव हमारे हैं। उनमें कोई छोटा-बड़ा नहीं, परन्तु जहाँ तक वैराग्य का प्रश्न है, सर्वोपरि हैं, भगवान शिव और इसीलिए पूर्ण ब्रह्म भी।

शिवलिंग का अर्थ एवं आकृति

शिवलिंग पर जल चढ़ाना और शिवजी के इस रूप की पूजा-आराधना हमारे धर्म का मूलाधार है। अधिकांश व्यक्ति बचपन में शिवालय जाकर शिवजी की लिंगाकार मूर्ति पर जल चढ़ाने से ही धर्म की पाठशाला में प्रवेश करते हैं। यहाँ विशेष ध्यान रखने की बात यह है कि भग के समान ही लिंग शब्द का वह अर्थ नहीं जो लोकभाषा में समझा और समझाया जाता है। लिंग का वास्तविक अर्थ है चिन्ह अथवा प्रतीक। इस प्रकार शिवलिंग का शब्दार्थ हुआ शिवजी का प्रतीक। यही कारण है कि भगवान शिव के भक्त शिवलिंग की पूजा उन्हें साक्षात भगवान शिव मानकर करते हैं, न कि उस रूप में जिस प्रकार कुछ अज्ञानी निरूपित करते हैं।

हमारे धर्म में तैंतीस कोटि देवी-देवता हैं और ब्रह्मा-विष्णु-महेश के रूप में ईश्वर के तीन स्वरूप भी। परन्तु जहाँ तक धार्मिक आस्था और परम्पराओं के प्रश्न है, सबसे अधिक पूजा-आराधना पांच परम शक्तियों की ही की जाती है। ये पांच परम शक्तियाँ परम-पुरुष अथवा परमेश्वर के रूप में तो पूज्य हैं ही, सबसे अधिक पूजा-आराधना भी इन पांच पुनीत दिव्य रूपों की ही की जाती है। कोई भी पूजा-आराधना अथवा अनुष्ठान हो, इन पांच देवों की पूजा से ही प्रारम्भ होता है। सबसे बड़ी बात तो यह है कि भगवान विष्णु, देवों के देव महादेव शिव, प्रथम पूज्यनीय गणपति गणेश, भगवान भास्कर अर्थात सूर्यदेव और मातृशक्ति भगवती भवानी दुर्गा

की मूर्तियों अथवा चित्रों की उस रूप में पूजा नहीं की जाती, बल्कि बेर जैसे फल, पत्थर की गोल शिलाओं अथवा मिट्टी की डली को ही मान लिया जाता है इन देवों का रूप।

शिव, विष्णु, शक्ति, गणेश और सूर्य इन पाँचों ही परम शक्तियों के प्रतीक गोलाकार होते हैं। विष्णु को शालिग्राम भी कहते हैं। शालिग्राम की वटिका गोल होती है। सभी वैष्णव मन्दिरों और तुलसी के चौबारों में शालिग्राम की गोल वटिका रखी जाती है। बहुत से स्थानों पर शक्ति अर्थात भगवती भवानी, दुर्गा, काली आदि की गोल पिण्डियाँ ही रखी जाती हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में दुर्गा मन्दिरों और कालीपीठ पर गोल पिण्डियाँ तो रखी ही जाती हैं, वैष्णों देवी के दरबार में भी तीन गोल पिण्डियाँ ही हैं। प्रत्येक पूजन के आरम्भ में गणेश जी का पूजन सुपारी या मिट्टी अथवा गोबर की गोल आकृति पर कलावा लपेटकर उन्हें गणेश जी के रूप में स्थापित करने बाद किया जाता है। इस प्रकार अन्य परम शक्तियों की भाँति शिव का पूजन भी अण्डाकार आकृति के रूप में होता है जिसे शिवलिंग कहा और भगवान शिव का प्रतीक माना जाता है। समझ में नहीं आता फिर भगवान शंकर के प्रतीक शिवलिंग के बारे में ही यह भ्रामक विचार क्यों, कब और कैसे पनपा।

पीठिका अर्थात मैखला का रहस्य

शालिग्राम और भगवती की पिण्डियाँ गोलाकार तथा चपटी होती हैं परन्तु शिवलिंग अण्डाकार अर्थात पर्याप्त लम्बा। एक अन्य अन्तर यह भी है कि अन्य देवों की पिण्डियाँ तो बालू आदि की वेदी बनाकर स्थापित की जाती हैं, परन्तु शिवलिंग को सदैव तीन धारियों वाली विशिष्ट मेखला के मध्य ही स्थापित किया जाता है। शिवलिंग स्थापित की जाने वाली इस मेखला में तीन धारियाँ संसार को धारण करने वाले तीन गुणों- -सतोगुण, रजोगुण और तमोगुण—का प्रतीक हैं। प्रकृति के इन तीन गुणों के मध्य

स्थित शिव का प्रतीक शिवलिंग उस परमब्रह्म के प्रकृति पर शासन का प्रतीक है, न कि स्त्री और पुरुष के कामांगों का। प्रकृति पर परमपिता के इस शासन को विभ्रमित व्यक्ति यदि प्रकृति और पुरुष का मिलन अथवा नर-नारी के सामान्य मिलन की अभिव्यक्ति माने, तो इसमें उस प्रतीक अथवा शिव चिन्ह का क्या दोष।

भगवान शिव का ज्योतिर्लिंग रूप धारण

भगवान शिव के साक्षात प्रतीक रूप में लिंग पूजा कब से प्रारम्भ हुई इस बारे में प्राचीन धर्म ग्रन्थों में एक अत्यन्त मोहक कथा मिलती है। नैमिषारण्य तीर्थ में उपस्थित साठ हजार ऋषि-मुनियों को सूतजी महाराज ने शिवलिंग के प्रथम दर्शन के बारे में जो कथा सुनाई उसका सार संक्षेप इस प्रकार है–

एक समय ब्रह्मा और विष्णु में विवाद छिड़ा कि हम दोनों में से बड़ा कौन है? उसी समय उनके मध्य एक ज्योतिर्लिंग प्रकट हुआ। उसका विस्तार अनन्त अपार था। ब्रह्माजी और भगवान् विष्णु पहले तो उसे देखकर आश्चर्य चकित हुए, फिर उन्होंने परस्पर यह निश्चित किया कि हम दोनों में से जो कोई इस ज्योतिर्लिंग के ओर-छोर का पता लगा लाएगा वही बड़ा माना जायेगा। निदान वे दोनों ही उस दिव्य ज्योतिर्लिंग के आदि और अन्त की पता लगाने के लिए एक-एक ओर को चल दिये। परन्तु दिव्य सहस्त्र वर्षों तक प्रयत्न करते रहने पर भी उनमें से किसी को भी उस ज्योतिर्लिंग के ओर-छोर का कुछ पता नहीं चला। अन्ततः विष्णु ने तो स्पष्ट शब्दों में यह स्वीकार कर लिया कि मैं इसके ओर-छोर का पता नहीं लगा पाया। परन्तु शिवजी की माया से भ्रमित ब्रह्मा ने झूठ बोलते हुए यह कहा कि मैंने इसके छोर का पता लगा लिया है, और प्रत्यक्षदर्शी गवाह के रूप में उन्होंने मिथ्यावादिनी केतकी को भी प्रस्तुत कर दिया। उसी समय आकाशवाणी हुई कि ब्रह्मा तथा केतकी तुम दोनों

ही झूठ बोल रहे हैं। उसे सुनकर ब्रह्माजी अत्यन्त लज्जित हो, भय से थर-थर काँपने लगे।

जिस समय ब्रह्मा और विष्णु अपने मन में यह सोच रहे थे कि यह आकाशवाणी करने वाला कौन है, तभी त्रिशूलपाणि भगवान शंकर सहसा ही उन दोनों के मध्य प्रकट हो गये और बोले—हे ब्रह्मा! हे विष्णु! तुम आपस में व्यर्थ ही विवाद कर रहे हो। इस सृष्टि का उत्पत्तिकर्ता, आदिकारण तथा स्वामी मैं ही हूँ। मैंने तुम दोनों को भी उत्पन्न किया है। ब्रह्मा, विष्णु और महेश ये तीनों मेरे ही स्वरूप हैं। मैंने तुम लोगों को अपनी शक्ति का यथार्थ ज्ञान कराने के लिए ही उस ज्योतिर्लिंग को प्रकट किया था, जिसका ओर-छोर तुम में से कोई नहीं पा सका। ब्रह्मा तथा केतकी ने झूठ बोला है, अतः इन्हें उसका दण्ड भोगना पड़ेगा। केतकी को तो मेरी पूजा में स्थान नहीं मिलेगा और ब्रह्मा को भविष्य में पूजापाठ और लोक व्यवहार में वह सम्मान नहीं मिलेगा, जो मिलना चाहिए। अस्तु, अब तुम अपने अहंकार को त्याग दो।
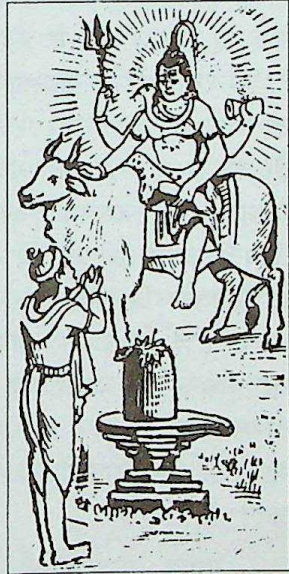
इतना कह कर शिवजी अन्तर्ध्यान हो गये तथा ब्रह्मा को अपनी भूल का बड़ा दुःख हुआ। ब्रह्मा तथा विष्णु दोनों ही शिवजी की स्तुति करने लगे। आखिर करते भी क्यों नहीं, इस अखल ब्रह्माण्ड ही नहीं, स्वयं भगवान विष्णु और ब्रह्माजी के भी निर्माता, पालनकर्ता और अन्त में स्वयं में विलीनकर्ता भगवान आशुतोष ही तो हैं।

शिव और शिवलिंग पूजन की एतिहासिकता

भगवान शिव और उनके प्रतीक लिंग-पूजन के बारे में एक भ्रान्त धारणा यह भी है कि शिव आदिदेव अथवा वैदिक कालीन देव नहीं, पौरणिक देव हैं। इसी प्रकार कुछ व्यक्ति इस भ्रान्त धारणा के शिकार भी हैं कि आदि काल में भगवान शिव राक्षसों अथवा अनार्यों के देव थे, उन्हें सनातन धर्म ने बाद में ग्रहण किया है। इसका कारण मात्र इतना है कि देवताओं के साथ-साथ दानव भी, आर्य ही नहीं अनार्य भी आदि काल से भगवान शिव और शिवलिंग की पूजा-आराधना करते आ रहे हैं। यह सत्य है कि यज्ञ में शिवजी के नाम की आहुति नहीं दी जाती, परन्तु यज्ञ की ज्वालाओं और वेदी से बाहर गिरी सम्पूर्ण सामग्री पर तो शिवजी का ही अधिकार है। भगवान श्रीराम ने सेतु बांधते समय कन्याकुमारी में बालू का शिवलिंग बनाकर स्वयं शिवजी की आराधना की थी, तो स्कन्द पुराण के अनुसार भगवान विष्णु ने लक्ष्मीजी सहित महेश्वर शिव की पूजा-अर्चना करके तेज और शक्ति प्राप्त की थी। पदम् पुराण के अनुसार भगवान राम और भगवान श्रीकृष्ण दोनों ही शिव को पूज्यनीय मानते हैं और शिवजी की पूजा-आराधना न करने वाले को पापी घोषित करते हैं।

पुराणों, रामायण और महाभारत की तो बात ही क्या, वेदों में भी शिवजी की महिमा, स्तुति और लिंग पूजन के बारे में सैकड़ों मन्त्र हैं। चारों ही वेदों में शिवाराधना को विशेष महत्वपूर्ण स्थान दिया गया है जबकि यजुर्वेद का सोलहवाँ अध्याय तो विशेष रूप से भगवान शिव के बारे में हैं। संसार के सब से प्राचीन ग्रन्थ और प्रथम वेद ऋग्वेद में भगवान शिव की महिमा, उनके नाम, काम और प्रभाव तथा पूजन के बारे में सत्तर के लगभग ऋचाएं उपलब्ध हैं। अथर्ववेद में भगवान शिव को हजार नेत्रों वाला और सभी आयुधों का धारण करता निरूपित किया गया है तो सामवेद

ने आपको अग्नि के समान सर्वशक्तिसम्पन्न माना है। युजुर्वेद में शिव के क्रोध को शांत करने हेतु शत रुद्र नाम से विशेष विधान वर्णित है तो महाभारत में श्रीकृष्ण द्वारा भगवान शिव के पूजन का वर्णन। स्कन्द पुराण में शिवजी के प्रतीक ज्योतिर्लिंग की महत्ता इस प्रकार कही गई है।

आकाशं लिगमित्याहु: पृथिवी तस्य पीठिका।
आलय: सर्वदेवानां लयनाल्लिंगमुच्यते।।

अर्थात आकाश लिंग है और पृथ्वी उसकी पीठिका। यह सब देंवताओं का आलय (घर) है और सबका लय अर्थात प्रलयकाल में सबका समावेश भी इसी में ही होता है। इसीलिए इसे लिंग कहा जाता है। कहने का भाव यह है कि शिव का प्रतीक यह शिवलिंग ही सृष्टि का धारण और पोषण कर्ता है और अन्त में सबका शरण स्थल भी। सभी देवों का उदय भी इस परम तेजोमय ज्योतिर्लिंग से होता है और अन्त में सभी इसी में विलीन हो जाते हैं। अतः लिंग की पूजा-आराधना और शिवजी की उपासना ही कल्याण का एकमात्र सटीक मार्ग है, विविध देवी-देवताओं के चक्कर में भटकने का कोई लाभ नहीं। शिवलिंग की पूजा-आराधना करने पर ही हो जाएगी सभी देवों की आराधना, क्योंकि यह ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति का आधार भी और अन्त में हम सभी ने इस तेज में ही विलीन होना है।

5
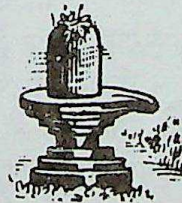
शिवाराधना के आयाम

संसार में जितने भी धर्म, पन्थ अथवा सम्प्रदाय हैं वे किसी एक महापुरुष द्वारा चलाए हुए हैं, और धर्म ग्रन्थ के रूप में मान्य है उन्हें कोई एक ही पुस्तक। उनकी इस विशेषता ने जहाँ उन्हें कोई एक निश्चित दर्शन, ईश्वर का एक ही रूप और ईश आराधना की एक निश्चित पद्धति देकर काफी आसान बना दिया, वहीं एक सीमा में भी बंधकर रह गए इस प्रकार के सभी धर्म। यही कारण है कि संसार के सभी प्राचीन धर्म समय के साथ परिवर्तित न हो पाने के कारण कालान्तर में इस प्रकार बोझिल और अव्यावहारिक हो गए कि नए धर्म का अभ्युदय होते ही वे पुराने धर्म न केवल समाप्त हो गए बल्कि आज उनके नामों तक को कोई नहीं जानता। भारत में ही भगवान गौतम बुद्ध द्वारा प्रवर्तित बौद्ध धर्म हमारे देश में तो अपनी स्थाई जड़ें नहीं जमा पाया परन्तु वह आज भी चीन, जापान, कोरिया और थाईलेण्ड सहित अनेक पूर्व एशियाई देशों का मुख्य धर्म है। लगभग दो हजार वर्ष पूर्व ईसा मसीह द्वारा प्रवर्तित ईसाई धर्म ने जहाँ प्राचीन यहूदी धर्म के साथ-साथ योरोप की सरजमी पर पल्लवित सभी प्राचीन धर्मों का सफाया कर दिया, वहीं मात्र तेरह-चौदह सौ वर्ष पूर्व सउदी अरब से उठी निराकार ब्रह्म की आंधी ने सम्पूर्ण पश्चिम एशिया से प्राचीन धर्मों की ध्वजाएँ उखाड़ दीं। हजरत मोहम्मद साहब के ज्ञान और उपदेशों पर आधारित इस्लाम आज एशिया और योरोप के अनेक देशों का मुख्य धर्म है। परन्तु जहाँ

तक हमारे देश का प्रश्न है, आज भी उसी प्रकार फलफूल रहा है हमारा हिन्दू धर्म।

हमारे देश के साथ-साथ हमारे धर्म पर भी इन नव-धर्मों ने अनेक प्रकार से आक्रमण किए, परन्तु न केवल हिन्दू धर्म जीवित रहा बल्कि प्रत्येक आक्रमण के पश्चात् और अधिक उभर कर अधिक दिव्य और शक्तिशाली रूप में प्रकट हुआ। इसका एकमात्र कारण यही है कि देश, काल और परिस्थिति के अनुरूप स्वयं में सतत विकास और आवश्यकतानुसार परिवर्तन करत रहा हमारा हिन्दू धर्म। ईश आराधना की जितनी पद्धतियाँ, विधिविधान और चिन्तन-दर्शन संसार में आज हैं वे सभी हमारे धर्म में प्रारम्भ से ही मौजूद रहे हैं। आत्मबल और जिद पर आधारित हठयोग से लेकर दास्य भाव से प्रभु की मूर्ति पूजा तक, काया कष्ट पर आधारित तप से तर्क और चिन्तन पर आधारित ज्ञान मार्ग तक तथा कर्मयोग से लेकर संन्यास तक प्रभु प्राप्ति के अनेक मार्ग हैं हमारे धर्म में। परन्तु जहाँ तक सामान्य गृहस्थों और जनसामान्य का प्रश्न है, उनके लिए वैदिक काल से ही हमारे ऋषि-मुनियों ने एक पूर्ण सन्तुलित और सबसे आसान मार्ग निरूपित किया है उपासना। देव दर्शन और मूर्तिपूजा से प्रारम्भ होकर षोडशोपचार आराधना के पथ से गुजरते हुए यह मार्ग पहुँचता है उपासना की अपनी मंजिल पर।

शिवालय में जलार्पण एवं सामान्य नमन

धर्म के विश्वविद्यालय में प्रवेश हेतु प्रारम्भिक शिक्षा के आधार अर्थात प्राइमरी स्कूल का कार्य करते हैं मन्दिर और शिवालय। बचपन में जो बालक मन्दिर जाते रहते हैं अथवा प्रातःकाल भगवान शिव पर मात्र एक लोटा जल नियमित रूप से चढ़ाते हैं, धीरे-धारे स्वयं बढ़ती जाती है उनकी आस्तिकता और भगवान में आस्था। मूर्ति पूजा इस प्रकार हमारे धर्म का एक सबसे सशक्त आधार स्तम्भ है और साथ ही हमारे धर्म और संस्कृति की सबसे

अद्‌भुद विशेषता भी। यद्यपि संसार के चार प्रमुख धर्मों में से इस्लाम, बौद्ध और ईसाई धर्म ईश्वर को निराकार मानकर मूर्ति पूजा के निषेध करते हैं और इस बात को लेकर हमारे धर्म पर व्यंग भी कसते हैं। परन्तु जहाँ तक व्यावहारिकता का प्रश्न है किसी न किसी रूप में सभी धर्मावलम्बी करते हैं मूर्ति पूजा। मस्जिद में कोई मूर्ति या प्रतीक चिन्ह नहीं होता, परन्तु मुस्लिम भाई पीरों की मजारों और सैयद के आलों की दीपक और अगरबत्ती जलाकर पूजा भी करते हैं और प्रसाद भी चढ़ाते हैं। इसी प्रकार ईसाई चर्च जाते हैं और नरियम के सामने मोमबत्ती जलाकर अपने दुख-दर्द उस दया की देवी के सम्मुख रखते हैं। यह बात दूसरी है कि हमारी तरह माँ मरियम या जीसस क्राइस्ट (ईसा मसीह) की मूर्ति की पूजा, वंदना और आराधना नहीं करते। बौद्ध धर्माबलम्बी तो भगवान गौतम बुद्ध की मूर्तियों का पूजन हमारे धर्म के समान ही करते हैं, और साक्षात ईश्वर का रूप ही मानते हैं भगवान गौतम बुद्ध को।

हमारे देश में भी हिन्दू धर्म के अनेक समुदायों—जैन, बौद्ध, सिख, आर्य समाज, कबीर पन्थी, निरंकारी आदि—में मूर्तिपूजा का निषेध है। परन्तु हिन्दू धर्म में तो मूर्तिपूजा की जड़ें इतनी गहरी हैं वि देश में उत्पन्न वे सभी सम्प्रदाय जो मूर्तिपूजा के विरोध को लेकर उत्पन्न हुए आज धड़ल्ले से मूर्ति पूजा कर रहे हैं। यह बात दूसरी है कि जैन बन्धु महावीर स्वामी की मूर्तियों की पूजा करते हैं तो बौद्धों ने गौतम बुद्ध को विष्णु का अवतार मानकर राम और कृष्ण की तरह पूजना जारी रखा हुआ है। दयानन्द सरस्वती द्वारा स्थापित आर्य-समाज का तो अभ्युदय ही यज्ञ के संक्षिप्त संस्करण हवन तथा गायत्री मंत्र के जप के रूप मे यज्ञों की पुनः प्रतिष्ठा तथा मूर्तिपूजा के विरोध में हुआ था। अभी स्वामीजी को हरि-चरणों में गए सौ वर्ष भी नहीं हुए हैं कि मूर्तिपूजा के प्रकट रूप में प्रबल विरोधी लगभग प्रत्येक आर्य समाजी भाई के घर में न केवल महर्षि दयानन्द का विशाल चित्र सुशोभित है वरन उस पर फूल माला भी चढ़ी हुई होती है। इस विवेचन

से हमारा अभिप्रायः अन्य धर्मों और पूजा-पद्धतियों की आलोचना नहीं, बल्कि यह कहना भर है कि आधुनिकता और थोथे तर्कों के चक्कर में पड़कर आप व्यर्थ भ्रम में न पड़िये, शिवालय में जाकर भगवान के दर्शन और पूजन में भी उतनी ही रुचि लीजिए, जितनी भजन-कीर्तन और धार्मिक सहित्य के अध्ययन में आप लेते हैं।

दशोपचार और पंचोपचार पूजा

शिवलिंग पर जल चढ़ाना और सामान्य रूप से नमस्कार करके पूजा की इतिश्री कर लेना मूर्तिपूजा का प्रथम चरण है, परन्तु वास्तव में पूजा कहलाने का अधिकारी नहीं। इसी प्रकार सुबह-शाम भगवान के दर्शन कर आना और विशेष अवसरों पर प्रसाद चढ़ाना और भोग लगाकर उसे बांटना भी एक लौकिक कर्म तो है, परन्तु पूजा नहीं। भगवान शिव की पूजा-आराधना की जाए अथवा अन्य किसी देवी-देवताओं की पूर्ण पूजा, विधिवत आराधना में सोलह संस्कार किए जाते हैं, जिनका एक निश्चित क्रम और विधि-विधान है। इन दोनों के मध्य पूजा-आराधना की दो स्थितियाँ और हैं जिन्हें क्रमश पंचोपचार अर्थात पांच प्रकार से पूजा और दशोपचार अर्थात दस चरणों में पूर्ण की जाने वाली पूजा कहा जाता है। पंचोपचार पूजा में हम भगवान शिव के प्रतीक शिवलिंग पर जल चढ़ाने के बाद उन्हें चन्दन का तिलक और भस्म लगाने का कार्य भी करते हैं। उसके पश्चात् भगवान को पुष्प माला और पुष्प अर्पित किए जाते हैं तथा धूप-दीप जलाकर आरती उतारते हैं। आरती के बाद भगवान को फलों आदि का नैवेद्य भी अर्पित किया जाता है। अन्य देवों के विपरीत भगवान शिव के लिंग पर अर्पित इस नैवेद्य को प्रसाद के रूप में बांटा और खाया नहीं जाता, मन्दिर में ही छोड़ देते हैं अथवा किसी नदी अथवा सरोवर मे विसर्जित कर दिया जाता है।

पंचोपचार पूजा का अगला चरण है दशोपचार पूजा। इसमें उपरोक्त पांच कार्यों के पूर्व भगवान शिव के चरण पखारने, उन्हें अर्घ्य समर्पित करने, आचमन हेतु जल प्रदान करने के कार्य भी किए जाते हैं। इसके साथ ही भगवान को स्नान कराने के पश्चात वस्त्र अथवा वस्त्र के रूप में कलावे का टुकड़ा भी अर्पित किया जाता है। यहाँ मुख्य ध्यान रखने की बात यह है कि भगवान को इन सभी वस्तुओं को समर्पित करते समय कुछ निश्चित मंत्रों का विधान भी है। उपासना और आराधना के सौलह उपचार अर्थात चरणबद्ध रूप से सौलह प्रक्रियाएं हैं। उनमें से जब हम दस क्रियाएं पूर्ण करते हैं जब वह दशोपचार पूजा कहलाती है और केवल पांच प्रक्रियाओं से पूर्ण कर लीं जाती है पंचोपचार पूजा। इन प्रक्रियाओं में भी उन्हीं मंत्रों का स्तवन किया जाता है जिनका षोडशोपचार आराधना और मानसिक उपासना में होता है। इन मंत्रों को कठस्थ याद करने के बाद भाव सहित अच्छी तरह समझ लिया जाता है और फिर प्रत्येक वस्तु समर्पण के समय मन-ही-मन अथवा अत्यन्त मंद स्वर में लयबद्ध रूप से पढ़ा जाता है। इन मंत्रों का अवलोकन तो हम आगे सातवें और आठवें अध्यायों में करेंगे, यहाँ पहले समझते हैं दशोपचार पूजा के निश्चित निर्धारित क्रम को—

1. पाद्य अर्थात चरणों को पखारना
2. अर्घ्य अर्थात जल चढ़ाना
3. आचमन
4. स्नान कराना
5. वस्त्र पहनाना
6. चन्दन लगाकर चावल चढ़ाना
7. पुष्प एवं पुष्पाहार अर्पण
8. धूप जलाना
9. दीप जलाना व आरती
10. नैवेद्य अर्पण या भोग लगाना

षोडशोपचार पूजा अर्थात विधिवत आराधना

मूर्ति पूजा की चरम अवस्था है अपने उपास्य देव के विग्रह को मंत्रों का स्तवन करते हुए पूर्ण विधि-विधान-पूर्वक सभी प्रकार की वस्तुओं का

समर्पण। मन्दिरों में प्रायः पुजारीगण अपने उपास्य देव की यह षोडशोपचार आराधना ही करते हैं। इस प्रकार की पूर्ण पूजा में पर्याप्त समय लगता है और हम अनेक वस्तुएं समर्पित करते हैं अपने उपास्यदेव भगवान शिवशंकर को। यही कारण है कि मन्दिरों में भक्तों को प्रायः ही षोडशोपचार और दशोपचार आराधना की सुविधा उपलब्ध नहीं हो पाती। जो भक्त प्रारम्भ में मन्दिर जाकर नित्य प्रति शिवजी पर जल चढ़ाते रहे हैं वे भी अपनी आराधना की इन ऊँचाइयों पर आते-आते अपने घर में ही बना लेते हैं एक छोटा से शिवालय अथवा एक शिवलिंग या भगवान की कोई प्रतिमा या चित्र रखकर अपने घर में ही प्रारम्भ कर देते हैं भगवान शिव की पूजा-आराधना और कालान्तर में आगे बढ़ जाते हैं अपनी मंजिल मानसिक उपासना की ओर।
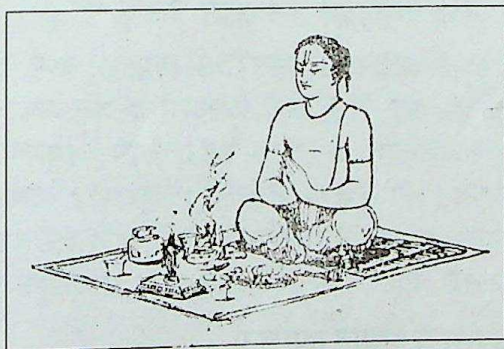
यद्यपि षोडशोपचार आराधना में हम सभी लौकिक उपादानों और भगवान शिव के विग्रह का उपयोग करते हैं, परन्तु सीधे ही मूर्ति, लिंग अथवा विग्रह की पूजा प्रारम्भ नहीं कर दी जाती। सर्वप्रथम उपास्यदेव भगवान शिव का ध्यान किया जाता है और जब भावलोक में हम उन्हें अपने निकट महसूस करने लगते है तब स्तवन करते हैं आसन समर्पण के मंत्र का। षोडशोपचार आराधना करते समय भगवान शिव का अह्वान और उन्हें आसन समर्पित तो किया ही जाता है, स्नान में भी दूध, दही, शहद, घृत, पंचामृत,

गंगाजल आदि का प्रयोग करते हैं। स्नान कराने और वस्त्र समर्पण के पश्चात उन्हें यज्ञोपवीत और आभूषण भी समर्पित किए जाते हैं तो तिलक में भस्म और चन्दन के साथ साथ कैशर-कुंकुम आदि का प्रयोग भी होता है। धूप, दीप और नैवेद्य के बाद ताम्बूल और पुंगीफल तथा पान-सुपारी के साथ दक्षिणा भी समर्पित की जाती है तो धूप, दीप और आरती के बाद प्रदक्षिणा भी की जाती है। प्रदक्षिणा के पश्चात भगवान शिव को पुष्पांजली तो अर्पित की ही जाती है नमस्कार, स्तुति, राजोपचार, क्षमापान और समर्पण के मंत्रों का स्तवन भी किया जाता है। पूजा के अन्त में कुछ भक्त तो शिवजी के भजनों, विनतियों और आरतियों का गायन करते हैं, जबकि अधिकांश आराधक करते हैं शिव सहस्त्रनाम, शिव अष्टोत्तर शतनाम अथवा किसी अष्टक या कवच का पाठ और शिवजी के किसी मंत्र की कम-से-कम एक माला का जप। इन सभी कार्यों क्रम इस प्रकार है–

1. ध्यान एवं आह्वान, 2. आसन, 3. पाद्य, 4. अर्घ्य, 5. आचमन, 6. स्नान–दूध-दही, घृत, मधु, चीनी, आदि से व जल-अभिषेक 7. वस्त्र, 8. यज्ञोपवीत व आभूषण, 9. गन्ध–चन्दन, केशर, कुंकुमादि व अक्षत, 10. पुष्प समर्पण, अंग पूजा व अर्चना 11. धूप, 12. दीप, 13.नैवेद्य, फल, 14. तांबूल, दक्षिणा, नीरांजन, जल-आरती आदि 15. प्रदक्षिणा; 16. पुष्पाजंलि, नमस्कार, स्तुति, राजोपचार, जप, क्षमापन, विशेषार्घ्य और समर्पण।

मानसिक उपासना अर्थात उपासना

उपासना के पहले हमने मानसिक शब्द का उपयोग किया है तो इसका एकमात्र कारण यही है कि पूजा-पाठ में तो हम मंत्रों के स्तवन के साथ-साथ भगवान शिव के किसी विग्रह अथवा उनके प्रतीक चिन्ह शिवलिंग का प्रयोग करते हैं और साथ ही विविध सभी लौकिक वस्तुएं भी उस मूर्ति या प्रतीक को समर्पित करते हैं। षोडशोपचार आराधना में तो दो दर्जन से अधिक वस्तुओं प्रयोग होता है तो अन्य पूजाओं में भी अनेक वस्तुओं

का! यद्यपि उपासना करते समय षोडशोपचार आराधना के सभी विधानों और मंत्रों का प्रयोग हम करते है, परन्तु उपासना करते समय कोई लौकिक वस्तु तो क्या मूर्ति अथवा विग्रह का प्रयोग भी अनिवार्य नहीं। पूजा में मुख्य महत्व मूर्ति की सेवा-पूजा और उसे विविध वस्तुओं के अर्पण का होता है, तो आराधना में मंत्रां और वस्तुओं को समान महत्व प्राप्त है। परन्तु उपासना करते समय न तो हम किसी मूर्ति अथवा विग्रह का प्रयोग करते हैं और न ही किसी अन्य उपादान का, केवल सम्बन्धित मंत्रों का स्तवन किया जाता है और वह भी मन-ही-मन में।

हमारे धर्म में पूजा-पाठ की कई पद्धतियाँ हैं, और लगभग प्रत्येक में होता है लौकिक वस्तुओं और मूर्तियों का उपयोग। जप-तप और उपासना ही ईश प्राप्ति के वे मार्ग हैं जिनमें हम लौकिक उपादानों और भगवान के विग्रह का उपयोग नहीं करते। उपासना न तो मन्दिर में अथवा सार्वजनिक स्थान पर बैठकर की जा सकती है और न ही सामूहिक रूप में सम्भव है। तपस्या के समान ही मन को एक स्थान पर एकाग्र करके एकांत व शांत स्थान में की जाने वाली क्रिया है उपासना। परन्तु न तो तपस्या की तरह शरीर को बहुत अधिक कष्ट देना पड़ता है और न ही भजन की तरह यह एकदम सीधी-सादी प्रक्रिया है। उपासना की पूर्ण विधि, उसकी उत्पत्ति और महत्व के बारे में हम पूर्ण चर्चा आगामी अध्यायों में करेंगे क्योंकि भगवान शिव की आराधना की सबसे शीघ्र फलदायक और सशक्त विधि है सच्चे हृदय से भोले भण्डारी भगवान शिव की उपासना और यही है हमारी मंजिल भी।

जप, तप, भजन और कीर्तन गायन

पूजा, आराधना और उपासना के उपरोक्त चारों रूप तो एक दूसरे के पूरक हैं, और जब हम दूसरे चरण में प्रवेश कर जाते हैं तब पहले को छोड देते हैं। परन्तु जप-तप और भजन-कीर्तन की ये प्रक्रियाएं उपासना

में सहायक होने वाले तत्वों का कार्य करती हैं। यही कारण कि मूर्ति पूजक प्रारम्भिक चरण मे तो कीर्तन का गायन करते है और बाद में षोडशोपचार तथा मानसिक उपासना की मंजिल पर पहुँचते-पहुँचते प्रारम्भ कर देते हैं मंत्रों का जप और भगवान शिव के नाम का भजन।
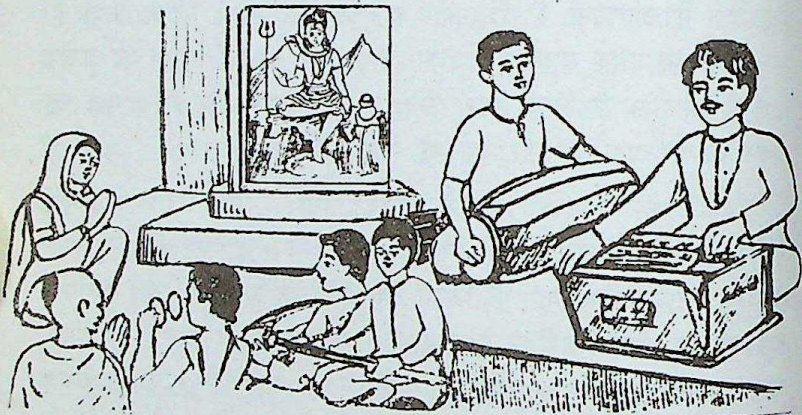
वाद्ययन्त्रों का प्रयोग करते हुए गायन-वादन मे एक अलौकिक आनन्द मिलता है, और कालान्तर में यह आनन्द ही बन जाता है आराधना-उपासना मे रुचि बढ़ाने वाला एक बड़ा आधार।

जहाँ तक तप अर्थात तपस्या का प्रश्न है पूर्णतः काया कष्ट पर आधारित अत्यन्त कठिन मार्ग है जिस पर हमारा-आपका चलना सहज सम्भव नहीं। वर्षों और महीनों की कठोर तपस्या को तप कहा जाता है तो तपस्या अथवा तप का आसान और सूक्ष्म रूप है जप। किसी मंत्र अथवा भगवान के किसी नाम का मन-ही-मन सतत स्तवन जप कहलाता है। वैसे जब किसी मंत्र का हजारों की संख्या में प्रतिदिन जप किया जाता है अथवा भगवान के नाम का मन-ही-मन एक स्थान पर बैठकर घण्टों तक स्मरण किया जाता है तब तो वह जप कहलाता है और थोड़े समय तक उपरोक्त विधि से प्रभु के नाम के जप को भजन। जप और भजन दोनों ही एकांत में बैठकर प्रभु

चरणों में मन को एकाग्र करके की जाने वाली क्रियाएं हैं। मूर्ति, विग्रह या तस्वीर की तो जप अथवा भजन करते समय अनिवार्य आवश्यकता होती ही नहीं, प्रायः आंखें बंद करके ही की जाती हैं ये क्रियाएं। इनके विपरीत कीर्तन और हर गुणगायन सामूहिक रूप से की जाने वाली क्रिया है, जिसमें एक स्थान पर एकत्रित होकर अनेक भक्त भगवान शिव के नाम अथवा उनकी आरतियों और भजनों का लयबद्ध रूप में गायन करते हैं। भजन एकांत में प्रभु के नाम का मन-ही-मन स्तवन हैं तो कीर्तन सामूहिक रूप से हरिनाम का गायन। यह गायन किसी मन्दिर में विग्रह के सम्मुख ही प्रायः अधिक किया जाता है जबकि भजन किसी एकांत स्थान में और वह भी प्रायः उपासना के एक अनिवार्य अंग के रूप में।

यज्ञ-हवन, दान-पुण्य एवं तीर्थाटन

भगवान शिव के निमित्त कोई हवन तो किया ही नहीं जाता, यज्ञ में भी उनके नाम की आहुति नहीं दी जाती। यही कारण है कि भगवान शिव की आराधना में यज्ञ और हवन तो किया ही नहीं जाता। वैसे भी आज जबकि देशी घी और सुगन्धित जड़ी-बूटियां तो क्या सामान्य लकड़ी तक लगभग दुष्प्राप्य है, जंगलों के अभाव के कारण लकड़ी का एक-एक टुकड़ा बचाने की राष्ट्रीय आवश्यकता है, यज्ञ तो क्या नित्य हवन करने की भी कल्पना नहीं की जा सकती।

जहाँ तक दान और विभिन्न तीर्थों की यात्राओं का प्रश्न है, यज्ञ और हवन करने के समान ही इनके के लिए भी पर्याप्त धन-संपत्ति और विपुल आमदनी चाहिए। भगवान शिव की भक्ति करते हुए और सत्य एवं सदाचार के मूल नियमों पर चलते हुए, ईमानदारीपूर्वक स्वयं के श्रम से इतना धन तो कमाया जा सकता है कि व्यक्ति अपने परिवार का भरण-पोषण कर सके परन्तु यज्ञ, हवन अथवा दान करने के लिए पर्याप्त धन कमाना तो लगभग असम्भव ही है। पापाचार, धोखाधड़ी, बेईमानी अथवा

दूसरों का हक मारकर अर्जित धन से कोई पुण्य कर्म या दानादि करना भगवान की भक्ति नहीं एक ढोंग है। अपने छले और पाप को दुनिया की नजरों से छिपाने का एक माध्यम मात्र तो हो सकता है इस प्रकार का कर्म, परन्तु न तो सर्वशक्तिमान भगवान शिव की नजरों से व्यक्ति का पाप छिप सकता है और न ही ऐसे व्यक्ति को महेश्वर शिव का सन्निध्य प्राप्त हो सकता है। इसके साथ ही दान देते समय लेने वाले का सुपात्र होना भी आवश्यक है। दुष्ट और पापात्मा को दिया गया दान पुण्य के स्थान पर अशुभ फलों और पापों की वृद्धि करता है। संक्षेप में यही कहा जा सकता है कि भजन-कीर्तन, मूर्तिपूजा, तीर्थाटन और दानादि आदि क्रियाएं ईश्वर भक्ति में सहायक तो हो सकती हैं परन्तु ईश्वर की प्राप्ति का पूर्ण मार्ग नहीं। भगवान शिव के श्रीचरणों तक तो हमें इस कलिकाल में एक ही वस्तु पहुँचा सकती है, और वह है भगवान शिव की सच्चे हृदय से उपासना तथा जीवन में सद्गुणों और पवित्र भावों का समावेश। परन्तु उपासना में सफलता के लिए आवश्यक है कि हमारा भगवान शिव पर दृढ़ विश्वास और अटूट आस्था तो हो ही, हमें उपासना के वास्तविक अभिप्राय, इसके अन्तर्गत आने वाली प्रक्रियाओं और विधिविधान का सटीक ज्ञान भी हो। तो आइए अब कुछ चर्चा कर ली जाए उपासना के आयामों और इसकी सफलता में सहायक होने वाले तत्वों पर जिससे हम सही रूप में शिवजी की उपासना प्रारम्भ कर अपनी मंजिल की ओर आसानी से कदम बढ़ा सकें।

6

शिवजी की मानसिक उपासना

यह सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड ही आशुतोष भगवान शिव की कृपा से उत्पन्न है और कण-कण में है भगवान भोले शंकर का वास। जल, थल, नभ में वह कौन सा स्थान है जहाँ भगवान शिव अपने अंश रूप में विराजमान न हों। यही कारण है कि एक सिद्ध-साधक और सच्चा-उपासक अपने आराध्य देव के दर्शन और सान्निध्य हेतु किसी मूर्ति, प्रस्तर प्रतिमा अथवा चित्र का मुँहताज नहीं। परन्तु पर्याप्त साधना के पश्चात भगवान शिव की विशेष कृपा के रूप में ही मिल पाती है हमें यह दिव्य शक्ति। भक्ति के क्षेत्र में कदम रखते समय न तो हमारी दृष्टि इतनी निर्मल होती है कि हम कण-कण में अपने आराध्य देव को उपास्थित अनुभव कर सकें और न ही हृदय इतना विशाल कि उस निराकार रूप की भव्य झाँकी मन में बसा सकें। सबसे बड़ी बात तो यह है कि प्रारम्भ में आराधना-उपासना में ध्यान केन्द्रित हो पाना तो दूर सामान्य पूजा-पाठ तक में हमारा मन एकाग्र नहीं हो पाता। परन्तु जब एक बार हमारे हृदय में ज्ञान का दीप प्रज्वलित हो जाता है, भगवान आशुतोष कृपापूर्वक हमें अपने दासानुदास के रूप में स्वीकार कर लेते हैं, तब आराधना-उपासना और भगवद् चर्चा में न केवल हमें आनन्द आने लगता है बल्कि भावलोक में हर समय हम भगवान शिव को अपने निकट ही अनुभव करते रहते हैं।

भगवान शिव को हर क्षण, प्रतिपल अपने निकट महसूस करना, अपने सभी कार्यों को आशुतोष की आज्ञा मानकर पूर्ण करना और उनसे

प्राप्त सभी प्रकार के शुभाशुभ फलों को भोले-भण्डारी का प्रसाद मानकर समान् भाव से ग्रहण करना उपासना का वास्तविक रूप और अंतिम चरण है। एक-एक सीढ़ी चढ़कर ही हम अन्तिम सीढ़ी तक पहुँच सकते हैं, छलांग लगाकर अन्तिम सीढ़ी को पकड़ने की चेष्टा करने वाले को तो गिरना ही पड़ता है। ठीक यही स्थिति मानसिक उपासना, यंत्र-मंत्र सिद्धि, तन्त्र साधना और निराकार ब्रह्म के चिन्तन-मनन की है। साधना की उच्चस्तरीय प्रक्रियाएं हैं मानसिक उपासना और तंत्र साधना। परन्तु मानसिक विकास के उस स्तर तक पहुँचने के लिए प्रारम्भ तो हमें शिवालय में जाकर शिवलिंग पर जल चढ़ाने से करना ही होगा। निरन्तर शिवालय में जाने, शिवलिंग और अन्य मूर्तियों के दर्शन और पूजा करने तथा धार्मिक पुस्तकों के आधिकाधिक अध्ययन द्वारा धर्म मे बढ़ती जाएगी हमारी आस्था, परन्तु ये हमारी मंजिल नहीं बल्कि मानसिक उपासना की मंजिल तक पहुँचने के रास्ते मात्र हैं।

उपासना का शाब्दिक अर्थ, भावार्थ एवं अभिप्राय:

उपासना शब्द संस्कृत भाषा के तीन शब्दों उप + अस + नम के योग से बना है। महर्षियों एवं विद्वानों ने इस शब्द की परिभाषा देते हुए कहा है–

'उपगम्य असनम्-इति उपासना'–अर्थात् समीप जाकर बैठने को 'उपासना' कहा जाता है। यहाँ समीप बैठना वैध इष्ट होने से यह शब्द परिचर्या व पूजा के अर्थ में पर्यवसित हो जाता है। यही कारण है कि वरिवस्या, शुश्रुषा, परिचर्या, आराधना, सेवा आदि शब्द उपासना के पर्यायवाची हैं तथा पूजा, भक्ति, तपस्या, अपचिति, सपर्या, अर्हणा, नमस्क्रिया तथा ध्यान और अनुष्ठान आदि शब्द इसके अत्यन्त निकटार्थक एवं सामान्य अन्तरंगार्थक हैं। उपास्ति, उपासा और उपासना आदि भी इसी के रूप हैं। धर्म, संस्कृति एवं भाषा-विज्ञान के प्रमुख प्राचीन ग्रंथ अमर कोष में उपासना शब्द की व्याख्या इस श्लोक में की गई है—

पूजा नमस्या पचितिः सपर्याचर्हणाः समाः ।
वरिवस्या तु शुश्रुषा परिचर्याप्युपासना ॥

हमारे धर्म के मूलाधार और संसार के प्राचीनतम लिखित साहित्य वेदों में भी उपासना की महिमा तथा उपासना करने की संपूर्ण चरणबद्ध प्रक्रिया के बारे में अनेक स्थानों पर यथेष्ट वर्णन मिलता है। स्वयं ईश्वर द्वारा उद्भाषित ग्रंथ ऋग्वेद में 'उपासना' शब्द का पूजा, सेवा, उपस्थित होना, सामने प्रस्तुत रहना आदि अर्थों में प्रयोग हुआ है। कुछ अन्य ग्रन्थों में 'उपासना' शब्द 'सहवासार्थक' अर्थात् 'साथ रहना' अर्थ में भी प्रयुक्त हुआ है। 'आपस्तम्बधर्म सूत्र' में उपासना का अर्थ 'सेवा' है तो 'गौतमधर्म' सूत्र में उपासना का अर्थ 'प्रणाम करना' है। भगवान श्रीकृष्ण ने महाभारत युद्ध के समय गीता में अर्जुन को उपासना का अभिप्राय आराध्य देव की सेवा और भक्ति बतलाया है, तो महर्षि वाल्मीकि ने अपनी रामायण में ईश्वर के ध्यान और हर समय समीप समझने की भावना को उपासना नाम दिया है।

'श्रीमद्भागवत' में उपासना का विवेचन करते हुए स्पष्ट रूप से कहा गया है कि पूर्ण भक्ति-भाव से अपने इष्ट की सेवा करना और उसके निरन्तर ध्यान द्वारा हर समय इष्ट देव को अपने निकट समझना ही उपासना है। यह शायद उपासना की सबसे सटीक परिभाषा है। वैसे उपरोक्त सभी परिभाषाएं एक ही अभिप्राय प्रकट करती हैं और वह यह कि जिस किसी भी विधि से अपने इष्टदेव की प्रसन्नता के लिए जो भी किया की जाय, वही उपासना है। इस प्रकार इष्टदेव का ध्यान, प्रणाम, नमस्कार, पूजा, जप, होम, भक्ति, दास्य, साख्य, सामीप्य, सेवा, शुश्रुषा, परिचर्या, आराधना, चिन्तन, मनन आदि सभी क्रियाएं उपासना के अन्तर्गत ही आती हैं; परन्तु मूर्तिपूजा और दान, तीर्थों की यात्रा और पवित्र नदियों में स्नान का कहीं नाम तक नहीं।

एक सामान्य शंका और उसका समाधान

उपासक का उपास्य के पास जाकर बैठने, उसके पास जाकर अथवा उसे अपने निकट बुलाकर सेवा-पूजा, अर्चना-आराधना करने का नाम है उपासना। अतः प्रायः ही यह शंका व्यक्त की जाती है कि ईश्वर तो निराकार, अविनाशी, अनन्त और अदृश्य है, अतः उसके पास कैसे बैठा जा सकता है और कैसे की जा सकती है उसकी सेवा, पूजा और उपासना। साकार ब्रह्म को मानने पर वह बैकुण्ठ वासी है और विभिन्न देवी-देवता अपने-अपने लोकों और स्वर्ग में निवास करते हैं। भगवान विष्णु के अवतार श्रीराम अथवा श्रीकृष्ण की उपासना करते समय तो और भी जटिल रूप धारण कर लेगी यह समस्या, क्योंकि युगों पूर्व ही वे इस भूमण्डल से प्रस्थान कर चुके हैं। जब स्वयं ईश्वर, उसका कोई भी अवतार अथवा देवी-देवता पृथ्वी पर नहीं है, तब इस पृथ्वी पर रहते हुए कैसे तो हम उनके निकट बैठ सकते हैं और किस प्रकार कर सकते हैं उनकी सेवा, शुश्रुषा एवं उपासना। शास्त्र इस शंका का समाधान करते हुए कहते हैं कि यह सत्य है कि ईश्वर सर्वव्यापी होते हुए भी दृष्टिगोचर नहीं होता, परन्तु उसकी शक्ति को महसूस तो किया जा सकता है। वह कहां है और कहां नहीं, इसका निर्धारण मानव नहीं कर सकता, अतः स्थूल रूप से तो ईश्वर के निकट बैठना, उसकी सेवा करना अथवा अपने उपास्य का समीप्य प्राप्त करना सम्भव नहीं, परन्तु भावलोक में तो ऐसा किया ही जा सकता है।

एक उदाहरण द्वारा उपरोक्त तथ्य को आसानी से समझा जा सकता है। जब हमारा कोई प्रियजन हम से काफी दूर होता है तब हम उसके चित्र, उससे सम्बन्धित किसी वस्तु अथवा उसकी याद के सहारे ही अपने मन की आंखों से उसे देख लेते हैं। उसका और उसके कार्यकलापों का ध्यान कर-करके उसकी याद को ताजा करते हैं, और अपनी शुभकामनाओं द्वारा उसे शक्ति प्रदान करने की चेष्टा करते हैं। इस प्रकार स्थूल रूप से तो वह व्यक्ति

हम से दूर होता है, परन्तु हमारा मन उसके पास होता है, हमारा उससे आत्मिक सम्बन्ध बना रहता है। यही स्थिति ईश्वर और भक्त के सम्बन्धों के मध्य होती है। ईश्वर अगोचर, अविनाशी, अखण्ड और निराकार तो है, परन्तु साथ ही सर्वव्यापक और भक्तवत्सल भी है। हम उसे देख नहीं सकते, परन्तु उसकी शक्ति को महसूस तो कर ही सकते हैं, अतः किसी प्रतीक, प्रतिनिधि, मूर्ति अथवा यों ही हृदय में उसे स्थिर कर उसकी सेवा-पूजा, आराधना आदि तो कर ही सकते हैं। ईश्वर के किसी भी प्रतीक की पूजा, चिन्तन-मनन, सेवा-आराधना करने, प्रभु-चरणों में ध्यान लगाने और उसके विविध रूपों एवं कर्मों का गुणगान करने से हम ईश्वर के और अधिक निकट पहुंचते हैं, आत्मा और परमात्मा के मध्य की दूरी मिटती है और इस प्रकार हम प्रभु के निकटतर होते चले जाते हैं। भक्त और भगवान की यह निकटता ही है उपासना, जबकि भगवान के विग्रह (मूर्ति) की पूजा और प्रभु-चर्चा इस साध्य तक पहुंचने के सबसे सुगम मार्ग हैं। परन्तु इस पूजा-अर्चना में भी मुख्य महत्व भावना का ही है, विग्रह तथा पूजा में प्रयुक्त वस्तुएं तो केवल प्रतीक मात्र हैं।

उपासना की चरम स्थिति

जहाँ तक व्यावहारिकता और धार्मिक आख्यानों का प्रश्न है, जो व्यक्ति अपने सभी कार्यों को ईश्वर के अर्पण कर निष्काम भाव से कर्म करता है और अपना मन परमात्मा में लगाए रखता है उसकी तो सभी क्रियाएं उपासना ही हैं। परन्तु संसार-व्यवहार में प्रवण होने के कारण जिस आत्मा का मन अत्यन्त चंचल है अथवा विषय-प्रवण होने के कारण जिनका चित्त अशान्त है, उन्हें उपासना करनी आवश्यक है। उपासना से उन के चित्त को स्थिरता, सांसारिक विषयों से विमुखता और उसके फलस्वरूप परमात्मा का समीप्य एवं मुक्ति की प्राप्ति होती है। परन्तु साधना-उपासना की इस मंजिल पर पहुंचने के लिए हमें प्रारम्भ में कुछ प्रयास तो करना ही होगा।

फिर तो हमें स्वयं इतना आनन्द आने लगेगा उपासना में कि भगवान शिव की अनुकम्पा से यह हमारी जीवन पद्धति का एक मुख्य अंग ही बन जाएगी।

भगवान शिव थोड़ी ही सेवा-पूजा, आराधना-उपासना से प्रसन्न होकर उपासक की सभी लौकिक कामनाओं की आपूर्ति करने और अन्त में मोक्ष प्रदान करने वाले औघड़दानी महादेव हैं, तो मानसिक उपासना है ईश आराधना की सबसे आसान और सशक्त पद्धति। जब दो सर्वश्रेष्ठ शक्तियों का संगम हमारे पास है तब हम क्यों भटकें इधर-उधर। यद्यपि आज की तेज-रफ्तार जिन्दगी में माया-मोह में पड़कर हम सृष्टि संचालक और अपने धर्म को लगातार भूलते जा रहे हैं, परन्तु इस त्रुटि का परिमार्जन तो हमने करना ही होगा। सबसे बड़ी बात तो यह है कि जब हम उपासना के क्षेत्र में कदम रखते हैं, तब न तो हमें कोई कर्म-काण्ड करना पड़ता है और न ही कोई सांसारिक वस्तु ही चाहिए। न तो इस आराधना-पद्धति में कोई काया कष्ट है और न ही अधिक समय की आवश्यकता। हमारे गृहस्थ जीवन, अर्थार्जन और सामाजिक कृत्यों में भी कोई व्यवधान उपस्थित नहीं करती भगवान शिव की उपासना, बल्कि अधिकाधिक विकसित और पुष्ट होती जाती हैं हमारी मानसिक और शारीरिक शक्तियाँ। ये बढ़ी हुई शक्तियाँ और भगवान शिव की विशेष कृपाएं जहाँ हमें इस जीवन में आशातीत समृद्धि और कार्य-क्षमता प्रदान करती हैं, वहीं अन्त में मिलता है हमें भगवान शिव के लोक में वास। एक वाक्य में यही कहा जा सकता है कि भगवान शिव की उपासना आज के युग की पुकार है, और इस पुकार को अनसुना न करना है हमारी समृद्धि तथा मोक्ष प्राप्ति का सबसे आसान और सटीक मार्ग।

उपासना और तन्त्र साधना का प्रथम भाग

7

साधना-उपासना का पूर्वार्द्ध

सामान्य रूप से भगवान शिव अथवा अन्य किसी भी आराध्यदेव की पूजा करते समय भक्तजन प्रायः ही भगवान के विग्रह अथवा शिवलिंग पर अपनी श्रद्धा और सामर्थ्य के अनुसार विभिन्न वस्तुएं अर्पित करते हैं, परन्तु प्रायः ही वे इन वस्तुओं के समर्पण के मन्त्रों का स्तवन नहीं करते। यद्यपि मन्दिरों में पुजारी भगवान शिव के पवित्र प्रतीक शिवलिंग पर विविध वस्तुएं चढ़ाते और अर्पित करते समय मन्त्रों का स्तवन भी करते हैं, परन्तु प्रायः ही मन्दिरों में भक्तों को नहीं मिल पाती यह सुविधा। यही कारण है कि जब कोई भक्त आराधना-उपासना के मार्ग पर आगे बढ़कर दशोपचार अथवा षोडशोपचार आराधना की मंजिल पर पहुँच जाता है, तब वह घर में ही भगवान शिव का विग्रह, शिवलिंग अथवा कोई चित्र रखकर प्रारम्भ कर देता है आराधना। जहाँ तक उपासना और यन्त्र, मन्त्र एवं तन्त्र की साधनाओं का प्रश्न है, मन्दिरों अथवा सार्वजनिक पूजा स्थलों पर सफलतापूर्वक इन्हें कर पाना सहज संभव हो ही नहीं पाता। ये सभी मानसिक प्रक्रियाएं हैं, भावलोक में अपने सम्मुख भगवान शिव को साक्षात् सम्मुख उपस्थित अनुभव करते हुए उन्हें विविध वस्तुएं अर्पित की जाती हैं, परन्तु वास्तव में कुछ नहीं होता हमारे पास। लौकिक वस्तुएं तो क्या भगवान शिव का कोई विग्रह, शिवलिंग, उनका चित्र अथवा अन्य कोई प्रतीक तक नहीं होता हमारे पास। यही है वास्तव में उपासना की चरम स्थिति कि हम हर समय भगवान शिव को अपने आस-पास अनुभव करते रहें।

भगवान शिव अथवा ईश्वर के अन्य किसी भी रूप, अवतार अथवा देवी-देवता की विधिवत षोडशोपचार आराधना, मानसिक उपासना, भगवान शिव के किसी मन्त्र के विधि-विधानपूर्वक जप अथवा यन्त्र-मन्त्र के सम्मिलित प्रयोग द्वारा कोई तान्त्रिक साधना करना यद्यपि ऊपर से देखने में पूर्णतः पृथक्-पृथक् अनुष्ठान हैं, परन्तु इन चारों में आध्यात्मिक रूप से अधिक अन्तर नहीं। आप इन चारों में से कोई भी अनुष्ठान करें इस अध्याय में वर्णित सभी प्रक्रियाएं और मन्त्रों का स्तवन समान रूप से किया जाएगा। मन्त्रों का जप, यन्त्र-सिद्धि और तान्त्रिक साधनाएं करते समय आप इस अध्याय में वर्णित सभी कार्य करने के तत्काल बाद प्रारम्भ कर देते हैं मन्त्रों का जप अथवा तान्त्रिक साधना। इसके विपरीत मानसिक उपासना अथवा षोडशोपचार पूजा-आराधना करते समय इस अध्याय में वर्णित सभी कार्य पूर्ण होते ही प्रारम्भ कर दिया जाता है आगामी अध्याय में वर्णित प्रक्रियाओं और मन्त्रों के स्तवन को।

कर्मकाण्ड और आडम्बर से रहित एक मानसिक प्रक्रिया है उपासना, जिसमें कोई उपादान तो क्या विग्रह तक का प्रयोग अनिवार्य नहीं

षोडशोपचार आराधना और मानसिक उपासना में मुख्य अन्तर ही यह है कि आराधना और पूजा करते समय हम भगवान शिव के विग्रह अथवा

उनके पवित्र प्रतीक शिवलिंग को विविध वस्तुएं अर्पित करते हैं, जबकि मानसिक उपासना करते समय हमारे पास कोई लौकक वस्तु तो क्या भगवान शिव का चित्र तक नहीं होता। पूजा-आराधना करते समय भगवान शिव के विग्रह अथवा शिवलिंग को हम अपने निकट रखते हैं और उसमें साक्षात् शिवजी को उपस्थित मानकर उन्हें स्नान कराने से लेकर भोग लगाने तक की सभी प्रक्रियाएं स्थूल रूप से भी करते हैं और साथ ही साथ करते रहते हैं मन्त्रों का स्तवन। आराधना करते समय जब हम भगवान शिव के स्नान के मन्त्र का स्तवन कर रहे होते हैं, उस समय हमारे हाथ शिवलिंग पर जल भी चढ़ा रहे होते हैं। इसी प्रकार भगवान शिव के पवित्र प्रतीक को वस्त्र पहनाने, मुकुट पहनाने, चन्दन-रोली-अक्षत् (चावल) लगाने, धूप-दीप जलाने और रुचिकर खाद्य और पेय वस्तुओं के भोग लगाने की क्रियाएं भी स्थूल रूप में की जाती हैं। पूजा-आराधना के अन्तिम चरण में आरतियों के गायन के साथ-साथ आरती भी उतारी जाती है और भोग के लिए प्रयुक्त वस्तुओं को प्रसाद रूप में परिवारजनों के साथ ग्रहण कर अपनी पूजा-आराधना की पूर्णाहुति करते हैं। परन्तु उपासना करते समय हम विग्रह और लौकिक वस्तुओं का प्रयोग तो करते ही नहीं, आरती का भी मात्र मन्त्र ही पढ़ते हैं। आप भोग-प्रसाद और पूजन-सामग्री के रूप में कितनी ही वस्तुओं का प्रयोग करें, इन दोनों अध्यायों में वर्णित सभी क्रियाओं और मन्त्रों के स्तवन को पूर्ण करने पर ही सम्पन्न होगी आपकी विधिवत् शोडषोपचार आराधना।

भगवान शिवजी की मानसिक उपासना के समान ही आशुतोष शिव के मन्त्रों के नियमित जप, किसी विशेष प्रयोजन हेतु निश्चित मात्रा में किसी मन्त्र का जप अथवा मन्त्र सिद्धि करते समय मूर्ति या चित्र का प्रयोग अनिवार्य नहीं। परन्तु जप प्रारम्भ करने के पूर्व इस अध्याय में वर्णित सभी क्रियाएं तो की ही जाती हैं। भगवान शिव का ध्यान करने तक की सभी प्रक्रियाएं पूर्ण करने के बाद ही किया जाता है मन्त्रों का जप और उनका दशमांश

होम। तांत्रिक साधनाएं करते समय भी इस अध्याय में वर्णित ध्यान तक की सभी क्रियाएं की जायेंगी और साथ में किया जायेगा शिवजी के विशिष्ट पूजन-यंत्र का प्रयोग। परन्तु उपासना करते समय भगवान के चित्र, मूर्ति, विग्रह अथवा शिवलिंग की भी आवश्यकता नहीं होती, आप भावलोक में ही करेंगे सभी कार्य। यद्यपि प्रारम्भ में कुछ दिनों तक आप भगवान का कोई चित्र या मूर्ति अपने सम्मुख रख सकते हैं, परन्तु उसका उद्देश्य भी भटकते हुए मन को शिवजी के चरणों में स्थिर करना और मन-मन्दिर में भगवान शिव की झांकी बसाना होता है। उपासना करते समय इष्टेदव का कोई चित्र हमारे लिए ध्यान केन्द्रित करने और भावलोक में अपने आराध्य के दर्शन का माध्यम तो हो सकता है, परन्तु हमारी उपासना का केन्द्र-बिन्दु नहीं।

स्वास्तिवाचन अर्थात शान्तिपाठ

शुद्ध पवित्र स्थान पर बैठकर की जाती है भगवान शिव की मानसिक उपासना, जबकि शोडषोपचार आराधना करते समय भक्त अपने सम्मुख भगवान शिव का पवित्र-प्रतीक लिंग, कोई मूर्ति अथवा चित्र एवं पूजा के काम आने वाली सामग्री भी रखता है। परन्तु विधि-विधानपूर्वक पूर्ण आराधना, उपासना, मन्त्रों का जप अथवा तान्त्रिक साधना करते समय सीधे ही प्रारम्भ नहीं किया जाता उपास्यदेव की आराधना-उपासना का कार्यक्रम। सबसे पहले स्वास्तिवाचन किया जाता है जिसमें हम करते हैं सभी देवताओं को नमस्कार और उनसे कृपाओं एवं विश्वशान्ति का प्राप्ति हेतु प्रार्थना।

ॐ स्वस्ति न इन्द्रो वृद्धश्रवाः स्वस्तिनः पूषा विश्ववेदाः। स्वस्तिनस्ताक्ष्र्यो अरिष्टनेमिः स्वस्तिनो वृहस्पतिर्दधातु।।1।। ॐ पयः पृथिव्यां पय ओषधीषु पयो दिव्यन्तरिक्षे पयोधाः। पयस्वतीः प्रदिशः सन्तु मह्यम्।।2।। ॐ विष्णोरराटमसि विष्णोः श्नप्त्रेस्थो विष्णोः स्यूरसि विष्णोर्ध्रुवोसि वैष्णवमसि विष्णवेत्वा।।3।। ॐ अग्निर्देवता

वातो देवता सूर्यो देवता चन्द्रमा देवता वसवो देवता रुद्रो देवताऽऽदित्योदेवता मरुतोदेवता विश्वेदेवा देवता वृहस्पतिर्देवतेन्द्रो देवता वरुणो देवता।।4।। ॐ द्यौः शान्तिरन्तरिक्षंꣳ शान्तिः पृथिवी शान्तिरापः शान्तिरोषधयः शान्तिः वनस्पतयः शान्तिर्विश्वेदेवाः शान्तिर्ब्रह्म शान्तिः सर्वꣳ शान्तिः शान्तिरेवशान्तिः सामा शान्तिरेधि। ॐ विश्वानिदेव सवितर्दुरितानि परासुव यद्भद्रं तन्न आसुव।।5।। शान्तिः शान्तिः शान्तिर्भवतु।।

स्वातिवाचन के रूप में इन पांच मन्त्रों का स्तवन आराधना-उपासना एवं तन्त्रसाधना का प्रथम चरण तो है ही, सबसे महत्त्वपूर्ण क्रिया भी है। सभी देवताओं की आराधना आ जाती है इस स्वस्ति-वाचन में, और यही अनेकता में एकता है हमारे हिन्दू धर्म का आधार-स्तम्भ। जहाँ तक स्वास्ति-वाचन के मन्त्रों के उच्चारण का प्रश्न है जहाँ-जहाँ ꣳ इस प्रकार का चिह्न है, वहाँ 'ग्वं' की भांति उच्चारण करना चाहिए। 'स्वस्तिवाचन' के बाद आगे लिखे मन्त्र का उच्चारण करते हुए जल से आचमन करें तथा अपने मस्तक पर तीन बार जल छिड़कें। तत्पश्चात् दोनों हाथों को शुद्ध जल से धो लें। आचमन करते तथा जल छिड़कते समय इन तीन मन्त्रों का स्तवन आप करेंगे—

'ओ३म् केशवाय नमः स्वाहा।'
'ओ३म् नारायणाय नमः स्वाहा।'
'ओ३म् माधवाय नमः स्वाहा।'

पवित्रीकरण एवं भूत-शुद्धि

यद्यपि आप स्नानादि से निवृत्त होकर और धुले हुए स्वच्छ वस्त्र पहनकर शुद्ध एवं स्वच्छ वातावरण में उपासना कर रहे हैं, फिर भी उपासना की क्रिया के पूर्व स्वयं अपने को और स्थान को पवित्र करना ही होगा। शायद यह दोहराने की तो आवश्यकता ही नहीं कि उपासना करते समय आप

केवल मन्त्रा का स्तवन ही करेंगे, साथ में बतलाई गई वस्तुओं का प्रयोग तो पूजा-आराधना करते समय ही किया जायेगा।

ॐ अपवित्रः पवित्रोवा सर्वावस्थां गतोऽपिवा।
यः स्मरेत्पुण्डरीकाक्षं स वाह्याभ्यन्तरः शुचिः॥

उक्त मन्त्र का स्तवन करते हुए अपने सिर पर तीन बार जल छिड़क कर आचमन करें तथा हाथ धोने के उपरान्त नीचे दिये गये मन्त्र का स्तवन करते हुए भूतशुद्धि करें—

ॐ अपसर्पन्तु ते भूता ये भूता भुवि संस्थिता।
ये भूता विघ्नकर्तारस्ते नश्यन्तु शिवाज्ञया॥

गणेशजी का ध्यान और गणपति पूजन

लौकिक वस्तुओं और आराध्यदेव भगवान शिवजी की मूर्ति अथवा शिवलिंग सम्मुख रखकर आराधना करते समय ही पूजन सामग्री का प्रयोग किया जाता है मानसिक उपासना करते समय तो कोई वस्तु हमारे पास नहीं होती। अतः अन्य क्रियाओं के समान ही भूतशुद्धि के बाद गणेशजी का ध्यान करते समय भी केवल मन्त्र ही पढ़े जाएंगे। परन्तु कल्पना जगत् अर्थात् भावलोक में अपने दाँए हाथ में दुर्वा, अक्षत्, पुष्प तथा जल लेकर विघ्न-विनाशक 'श्री गणेशजी का ध्यान' करते हुए निम्नलिखित मन्त्रों का स्तवन कीजिए—

ॐ सुमुखश्चैकदन्तश्च कपिलो गजकर्णकः।
लम्बोदरश्च विकटो विघ्ननाशो विनायकः॥
धूम्रकेतुर्गणाध्यक्षो भालचन्द्रो गजाननः।
द्वादशैतानि नामानि यः पठेच्छृणुयादपि॥

विद्यारम्भे विवाहे च प्रवेशे निर्गमे तथा।
संग्रामे संकटे चैव विघ्नस्तस्य न जायते॥
शुक्लाम्भरधरं देवं शशिवर्णं चतुर्भुजम्।
प्रसन्नवदनं ध्यायेत्सर्वविघ्नोपशान्तये॥

संकल्प वाक्य अर्थात् पूजा-परिचय

संकल्प वाक्य कोई मंत्र या मन्त्रों का समूह नहीं, गद्य रूप में अपना स्वयं का और पूजा-आराधना के दिन व समय का प्रभु चरणों में परिचय है। आराधना करते समय गणेश जी पर उपरोक्त वस्तुएं चढ़ाने के बाद, दांए हाथ में तिल, कुशा, घास, अक्षत् अर्थात् चावल, यज्ञोपवीत और जल लेकर निम्न संकल्प वाक्यों का स्तवन करेंगे। उपासना करते समय तो कोई वस्तु आपके पास होती ही नहीं, अतः केवल भावलोक में ही ये वस्तुएं आप अपने हाथ में लेंगे, स्थूल रूप में तो संकल्प के इन वाक्यों का स्तवन ही करेंगे—

हरिः ॐ तत्सत्। नमः परमात्मने श्री पुराणपुरुषोत्तमाय श्रीमद्भगवते महापुरुषस्य विष्णोराज्ञया प्रवर्तमानस्याद्य ब्रह्मणो द्वितीय प्रहरार्धे श्रीश्वेतवाराहकल्पे वैवस्वत मन्वन्तरे अष्टाविंशतितमे कलियुगे कलि प्रथमचरणे जम्बूदीपे भरतखण्डे भारतवर्षे आर्य्यावर्तान्तर्गत क्षेत्रे सृष्टिसंवत्सराणां मध्ये 'अमुक' नाम्नि संवत्सरे, 'अमुक' अयने, 'अमुक' ऋतौ, 'अमुक' मासे, 'अमुक' पक्षे, 'अमुक' तिथौ, 'अमुक' नक्षत्रे, 'अमुक' योगे, 'अमुक' वासरे, 'अमुक' राशिस्थे सूर्ये, चन्द्रे, भौमे, बुधे, वृहस्पतौ, शुक्रे, शनौ, राहो, कैतौ एवं गुण विशिष्टायां तिथौ, 'अमुक' गोत्रोत्पन्न 'अमुक' नाम्नि शर्मा (वर्मा आदि) ऽहं धर्मार्थकाममोक्षहेतवे श्रीगणपत्यादि सह भगवान् शिव पूजनमहं करिष्यते।"

उक्त संकल्प वाक्य में जहां-जहाँ 'अमुक' शब्द आया है, वहाँ क्रमशः विद्यमान संवत्सर, अयन, ऋतु, मास, पक्ष, तिथि, नक्षत्र, योग, दिन, सूर्यादि नवग्रहों कि स्थिति वाली राशियों के नाम, अपने गोत्र तथा अपने नाम का उच्चारण करना चाहिए। ब्राह्मण को 'शर्माऽहं', क्षत्रिय को 'वर्माऽहं', वैश्य 'गुप्तोऽहं' तथा शूद्र को 'दासोऽहं' शब्द का उच्चारण नाम के साथ करना चाहिए।

गणेशजी, पार्वतीजी, नन्दीश्वर एवं वीरभद्र पूजन

प्रथम पूज्यनीय देवता गणेशजी भगवान शिव के पुत्र हैं, तो मातेश्वरी पार्वतीजी आपकी भार्या। नन्दीश्वर अर्थात नादिया आपका आपका वाहन है तो वीरभद्र प्रमुख गण। यही कारण है कि भगवान शिव की शोडषोपचार आराधना अथवा मानसिक उपासना करते समय भगवान भोलेशंकर के ध्यान से भी पहले किया जाता है भगवान शिव के परिवार के सदस्यों, उनके वाहन नन्दी, गण-प्रमुख वीरभद्र और धन-सम्पत्ति के स्वामी कुवेर आदि देवताओं का ध्यान एवं पूजन। यद्यपि संकल्प वाक्य के पहले भी आप गणेशजी का ध्यान एवं पूजन कर चुके हैं, परन्तु यहाँ एक बार फिर आप इन दो मन्त्रों में से पहले मंत्र द्वारा गणेश जी का पूजन करेंगे और दूसरे मंत्र का स्तवन करेंगे प्रार्थना के रूप में—

आवाहयामि पूजार्थं रक्षार्थं च मम क्रतोः।
इहागत्या गृहाण त्वं पूजायागं च रक्ष मे॥

पूजन करके यह प्रार्थना करें—

लम्बोदर नमस्तुभ्यं सततं मोदकप्रिय।
निर्विघ्न कुरु मे देव सर्वकार्येषु सर्वदा॥

गणेशजी का ध्यान, पूजन और प्रार्थना करने के पश्चात किया जाता है मातेश्वरी पार्वतीजी का ध्यान, पूजन और उनसे विशेष प्रार्थना। इसके

लिए मनमन्दिर में मातेश्वरी की झांकी बसाकर भावलोक में उनको अपने अत्यन्त निकट अनुभव करते हुए इस मंत्र के स्तवन द्वारा करें शिव हृदयेश्वरी माता पार्वती का पूजन–

हेमाद्रि तनयां देवीं वरदां शंकरप्रियांम्।
लम्बोदरस्य जननीं गौरीमावाहयाम्यहम्॥

इसके साथ ही यह प्रार्थना करें–

ॐ अम्बे अम्बिके अम्बालिके न मा नयति कश्चन।
ससस्त्यशवकः सुभद्रिकां काम्पीलवासिनीम्॥

भगवान शिवजी की का प्रिय वाहन नन्दी या नादिया मात्र उनका वाहन ही नहीं, भगवान भोलेशंकर और मातेश्वरी पार्वतीजी का प्रिय सेवक और उनका प्रमुख गण भी है। भगवान शिव को नन्दी इतना प्रिय है कि जहाँ भी आपका विग्रह शिवलिंग रूप में है वहाँ अनिवार्य रूप से ठीक सम्मुख उपस्थित रहते हैं नन्दीजी। यही कारण है कि भगवान शिव की उपासना करते समय मातेश्वरी पार्वतीजी के पूजन और प्रार्थना के तत्काल बाद किया जाता है इन मंत्र से नन्दीश्वर जी का पूजन–

आयंगौः पृश्निरक्रमीदसदन्मातरं पुरः।
पितरं च प्रयन्त्स्वः॥

नन्दी पूजन के बाद उनसे यह प्रार्थना की जाती है–

प्रैतु वाजी कनिकदन्नानदद्रासभः पत्वा।
भरन्नरिम्पुरीष्यं मा पाद्ययुषः पुरा॥

नन्दीश्वर पूजन के पश्चात किया जाता है भगवान के प्रमुख गण वीरभद्र जी का पूजन। वीरभद्रजी का पूजन इस मंत्र द्वारा किया जाएगा।

इनमें प्रथम दो लाइन का मंत्र तो उनके पूजन का है और अगली दो लाइनों के मंत्र में की गई है उनसे विशेष प्रार्थना—

भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम देवा भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्राः।
स्थिरैरङ्गैस्तुष्टुवा सस्तनूभिर्व्यशेमहि देवहितं यदायुः॥

पूजन करके यह प्रार्थना करें—

भद्रो नो अग्निराहुतो भद्रा रातिः सुभग भद्रो अध्वरः।
भद्रा उत प्रशस्तयाः॥

कार्तिकेय, कुवेर एवं कीर्तिमुख पूजन

मोर की सवारी करने वाले भगवान कार्तिकेय जी मातेश्वरी पार्वती और शिवजी के बड़े पुत्र हैं अतः यह तो हो ही नहीं सकता कि शास्त्रोक्त विधिविधानपूर्वक शिवजी की आराधना-उपासना करते समय भगवान कार्तिकेय का ध्यान और पूजन न किया जाए। इसके साथ ही धनधान्य के स्वामी कुवेर और कीर्तिमुख देव का पूजन भी शिवाराधना का एक अविभाज्य अंग है। भगवान कार्तिकेय जी के ध्यान और पूजन हेतु आप इस मंत्र का स्तवन करें—

यदक्रन्दः प्रथमं जायमान उद्यन्त्समुद्रादुत वा पुरीषात्।
श्येनस्य पक्षा हरिणस्य बाहु उपस्तुत्यं महि जातं ते अर्वन्॥

इसके साथ ही भगवान कार्तिकेय जी प्रार्थना करें—

यत्र बाणाः संपतन्ति कुमारा विशिका इव।
तन्न इन्द्रो बृहस्पतिरदितिः शर्म यच्छतु विश्वाहा शर्म यच्छतु॥

भगवान कार्तिकेय जी से प्रार्थना करने के बाद निम्नलिखित मन्त्र के स्तवन द्वारा किया जाता है कुवेरजी का ध्यान एवं पूजन—

कुविदङ्ग यवमन्तो यवं चिद् यथा दान्त्यनुपूर्वं वियूय।
इहेहैषां कृणुहि भोजनानि ये बर्हिषो नम उक्तिं भजन्ति॥

कुबेर पूजन के पश्चात् यह प्रार्थना करें—

वयम् सोम व्रते तव मनस्तनूषु विभ्रतः। प्रजावन्तः सचेमहि।।

कुबेर जी के पूजन-प्रार्थना के पश्चात किया जाता है कीर्तिमुख पूजन। शिवाराधना में हम उनके पूरे परिवार और विशिष्ट सहायकों का पूजन पहले करते हैं और इन सभी के पूजन के बाद प्रारम्भ होती है शिवजी की वास्तविक आराधना। इस पूजन का अन्तिम चरण है कीर्तिमुख पूजन। इसमें सभी देवों के नाम के साथ स्वाहा शब्द जोड़कर उन्हें भावनात्मक रूप में आहुतियाँ प्रदान की जाती हैं। स्वास्तिवाचन के समान ही यह भी कोई मंत्र नहीं, बल्कि गद्य रूप में है—

असवे स्वाहा वसवे स्वाहा विभुवे स्वाहा विवस्वते स्वाहा गणश्रिये स्वाहा गणपतये स्वाहा विमुखे स्वाहा अधिपतये स्वाहा शूषाय स्वाहा स ँ सर्पाय स्वाहा चन्द्राय स्वाहा ज्योतिषे स्वाहा मलिम्लुचाय स्वाहा दिवापतये स्वाहा।।

उपरोक्त स्तवन के पश्चात यह प्रार्थना की जाएगी—

ओजश्च से सहश्च म आत्मा च मे तनूश्च मे शर्म च मे वर्म च मेऽङ्गानि च मेऽस्थीनि च मे परु ँ षि च मे शरीराणि च मे आयुश्च मे जरा च में यज्ञेन कल्पन्ताम्।।

भगवान शिव का ध्यान और ध्यान के मंत्र

हम भगवान शिव की आराधना-उपासना कर रहे हैं, अतः आगे की सभी क्रियाएं भगवान शिव के रूप-स्वरूप की झांकी मन-मन्दिर मे बसाकर उनके हेतु की जाएंगी। हमने अब तक गणेशजी, माता पार्वतीजी एवं शिवजी के वाहन एवं गणों आदि का ध्यान और उनकी सेवा-आराधना की है। परन्तु जहाँ तक व्यावहारिकता का प्रश्न है, जिस प्रकार एक कुशल गृहणी परिवार के सभी सदस्यों का पूर्ण आदर-सम्मान करते हुए उनकी सेवा करती है

परन्तु उसके तन-मन का स्वामी उसका पति ही होता है, ठीक यही स्थिति हमारी भगवान शिव के प्रति होनी चाहिए। भगवान शिव का हमें जो भी स्वरूप सर्वाधिक प्रिय है उसकी झांकी मन में बसाकर किया जाता है इन मंत्रों के स्तवन द्वारा भगवान शिव का ध्यान–

ध्यायेन्नित्यं सुरेऽयंयतिगतिमतिदं योगकाधारमेक–
माद्यंतादिप्रभावं निगमजनिजुषां ध्यानधारावगम्यम् ।।
सोमं सोढारमीशंधरणिसुरवर याञ्चया शंकरंतं
भवत्युद्रेक.य वर्ग 'कलयति विदुषां यत्कृपा तंहिशम्भुम् ।।1।।
वन्धूकसन्निभन्देवम् त्रिनेत्रम् चन्द्रशेखरम् ।
त्रिशूलधारिणन्देव चारुहासं सुनिर्मलम् ।।2।।
कपालधारिणं देवं वरदाभयहस्तकम् ।
उमयासहितं शम्भुन्ध्यायेत्सोमेश्वरम् सदा ।।3।।
सानन्दमानन्दवनेवसन्त मानन्दकन्दंहतपापवृन्दम् ।
वाराणसीनाथमनाथनाथं श्री विश्वनाथं शरण प्रपद्ये ।।4।।
ॐ नमः शम्भवायच मयोभवाय च नमः
शङ्कराय च नमः मयस्कराय च नमः
शिवाय च शिवतराय च शिवाय नमः ।।5।।

आह्वान तथा आसन समर्पण

उपरोक्त मंत्रों में भगवान शिव के रूप स्वरूप का वर्णन है, अतः जब हम दिल की पूरी गहराई से इन मंत्रों का नयन बन्द करके स्तवन करते हैं तब भावलोक में हम साक्षात् भगवान शिव को देखने लगते हैं। उपासक भावलोक में देखता है कि भगवान शिव अपने लोक से आकर उससे कुछ ही फासले पर खड़े हैं और मधुर भाव से उसकी ओर देख रहे हैं। वह यह भी देखता है कि उसके निकट एक दिव्य सिंहासन भी

रखा है। अब आप भगवान शिव से और अधिक निकट आकर उनसे उस दिव्य सिंहासन पर विराजमान होने की प्रार्थना करेंगे। भोलेभण्डारी, ओघड़दानी भगवान शिव को निकट बुलाने की प्रार्थना आप इस मंत्र के मन-ही-मन स्तवन द्वारा करेंगे—

आयाहि भगवन् शम्भो शर्व्वत्वं गिरिजापते।
प्रसन्नोभव देवेश नमस्तुभ्यं हि शंङ्कर॥

उक्त मंत्र द्वारा श्री शिवजी का 'आह्वान' करने के पश्चात् उन्हें 'आसन' प्रदान करने के हेतु इस मंत्र का स्तवन किया जायेगा—

विश्वेश्वरमहादेव राजराजेश्वरप्रिय।
आसनन्दिव्यमीशान दास्येऽहन्तुभ्यमीश्वरम्॥

किसी विशेष प्रयोजन हेतु मंत्रों का निश्चित संख्या में जप, यंत्र-मंत्र साधना और कोई तांत्रिक सिद्धि करते समय तो यहाँ तक की सभी क्रियाएं पूर्ण करने के बाद मंत्रों का जप अथवा वह तांत्रिक अनुष्ठान प्रारम्भ कर दिया जाता है। परन्तु पूर्ण विधिविधान-पूर्वक शोडषोपचार आराधना अथवा मानसिक उपासना करते समय भगवान शिव को आसन समर्पण के साथ ही प्रारम्भ कर दी जाती हैं आगामी अध्याय में वर्णित प्रक्रियाएं और उनसे सम्बन्धित मंत्रों का स्तवन। सैद्धान्तिक रूप में इस अध्याय को यहाँ तोड़कर दो अध्यायों में इन प्रक्रियाओं को बांटने का शास्त्रीय विधान भी नहीं, परन्तु ऐसा हमने आपकी सुविधा के लिए ही किया है जिससे यंत्र-मंत्र-सिद्धि अथवा आराधना-उपासना करते समय आप व्यर्थ भ्रम में न पड़ें। यही नहीं, दशोपचार आराधना करते समय इस अध्याय के प्रारम्भ में वर्णित शांतिपाठ के पश्चात बीच की सभी प्रक्रियाएं छोड़कर भगवान शिव का ध्यान कर लिया जाता और आह्वान एवं आसन समर्पण के तुरन्त बाद ही प्रारम्भ कर दी जाती हैं आगामी अध्याय में वर्णित सभी प्रक्रियाएं।

आराधना-उपासना के मंत्र

पूजा आराधना करते समय हम भगवान शिव के पवित्र प्रतीक शिवलिंग अथवा उनके विग्रह या चित्र को सम्मुख रखकर उसी प्रतीक की सेवा-पूजा करते हैं। इस रूप में हम अनेक लौकिक वस्तुओं का प्रयोग भी पूजन सामग्री और उपादानों के रूप में करते हैं, और प्रत्येक मंत्र के स्तवन के साथ-साथ वह वस्तु भी भगवान को अर्पित करते रहते हैं। परन्तु इस प्रकार की पूजा-सेवा और आराधना में भी महत्व आपकी भावना का होता है, ये सभी उपादान तो आपके भावों को प्रदर्शित करने के माध्यम मात्र हैं। इसके विपरीत उपासना करते समय तो भगवान शिव के प्रति हमारा प्यार, लगाव और समर्पण का भाव इतना अधिक होता है कि पूजा के लिए किसी लौकिक वस्तु की तो क्या, भगवान के विग्रह, चित्र अथवा शिवलिंग की भी आवश्यकता हमें नहीं होती। उपासना प्रारम्भ करते समय आप शिवजी की कोई मूर्ति अथवा चित्र अपने पास यदि रखते भी हैं, तो वह आपको हृदय में उनकी झांकी बसाने और भावलोक में उनके दर्शन करने में सहायता प्रदायक माध्यम मात्र ही होता है, आप उसकी पूजा नहीं करते। उपासना करते समय गत अध्याय और इस अध्याय में वर्णित सभी क्रियाएं आप भावनात्मक स्तर पर केवल मानसिक रूप से करते हैं, स्थूल रूप में तो आप अविचल रूप से बैठे रहते हैं। आप मंत्रों का स्तवन भी मन-ही-मन करते हैं, होठों का हिलना तक आवश्यक नहीं। यही कारण है कि

देखने वालों को तो ऐसा लगता है जैसे शायद आप बैठे-बैठे ही सो गए हैं।

यद्यपि प्रारम्भ में कुछ दिनों तक भावलोक में भगवान को विविध वस्तुओं और सेवाओं के समर्पण की तो बात ही क्या, उनके साक्षात् दर्शन तक हम नहीं कर पाते। परन्तु जैसे-जैसे हम इस क्षेत्र में आगे बढ़ते जाते हैं, भगवान भोले भण्डारी की कृपा से न केवल उनके दर्शन करने लगते हैं बल्कि हर पल, हर क्षण उन्हें अपने निकट ही महसूस करने लगते हैं। जब हमारे हृदय की पवित्रता कुछ बढ़ जाती है तब गत अध्याय में वर्णित क्रियाएं करते समय हमें परमानन्द तो मिलता ही है, हम मन की आंखों से यह भी देखने लगते हैं कि हमारी प्रार्थना पर भगवान शिव अपने लोक से आकर हमारे सम्मुख रखे सिंहासन पर साक्षात् रूप से विराजमान हैं। इस समय हम यह भी देखते हैं कि उस दिव्य सिंहासन पर भगवान शिव के विराजमान होते ही देवताओं ने देवलोक से दो आलौकिक चौकियाँ लाकर आपके और प्रभु के दांए-बांए रख दी हैं। इनमें से एक चौकी पर सोने-चांदी के पात्रों में पूजन की सम्पूर्ण सामग्री, नैवेद्य के रूप में फल और मिठाइयाँ, पुष्प एवं पुष्पहार और दिव्य वस्त्राभूषण आदि रखे हैं। आप आगामी सभी मन्त्रों का स्तवन करते समय भावलोक में ही एक-एक वस्तु उठाकर भगवान की सेवा में उसका प्रयोग और समर्पण करते रहेंगे। परन्तु यह सभी क्रियाएं आप केवल भावनात्मक रूप में करेंगे, स्थूल रूप में तो आपके सम्मुख कुछ होगा ही नहीं।

पाद्य, अर्घ्य और आचमनीय समर्पण

आप सिंहासन पर विराजमान भगवान शिव को देखकर गद्‌गद् हो रहे हैं। उनके दर्शनों से मन भरता ही नहीं और न ही नजर हट पा रही है उनके चेहरे से। परन्तु इसी समय आपके दिल में भाव जाग्रत होता है कि अपने घर पधारे प्रभु का स्वागत और सेवा आपको करनी ही चाहिए।

इस भावना से भरकर भगवान शिव को रास्ते में हो जाने वाली थकान को मिटाने और आदर प्रदर्शित करने के लिए आप भगवान शिव के चरण पखारेंगे। भावलोक में आप अनुभव कर रहे हैं कि मैं दाहिनी ओर रखी चौकी पर से शीतल-सुगन्धित जल का पात्र उठाकर बांए हाथ में पात्र पकड़कर प्रभु के चरणों में धार से डाल रहा हूं और दाहिने हाथ से प्रभु के चरण पखार रहा हूँ। मक्खन से भी सुकोमल और कल्पना से भी अधिक सुन्दर हैं प्रभु के चरण-कमल। भावलोक में यह कार्य करते हुए आप इस श्लोक का मन-ही-मन स्तवन कीजिए–

महादेव महेशान महादेव परात्पर।
पाद्यं गृहाणमद्दत्तं पार्वतीसहितेश्वर ॥

भावनात्मक रूप में भगवान शिव के चरण धोने के पश्चात् आप कल्पना करते हैं कि उस बर्तन को बांई ओर चौकी पर रखकर और हाथ धोकर दूसरा सुगन्धयुक्त गंगाजल से भरा प्याला मैंने उठा लिया है। मन की आंखों से आप देख रहे हैं कि आप शिवजी को अर्घ्य दे रहे हैं और वे दोनों हाथों की अंजलि में अर्घ्य ग्रहण कर रहे हैं। अर्घ्य अर्पण का मंत्र यह है–

त्र्यम्बकेश सदाचार जगदादिविधायक।
अर्घ्य गृहाण देवेश साम्बसर्वार्थदायक॥

भगवान के चरण पखारने और उनके हाथ धुलाने के पश्चात उन्हें आप आचमनी अर्थात आचमन हेतु जल प्रदान करेंगे। उपासना करते समय तो उपरोक्त के समान ही अर्घ्य का पात्र दूसरी चौकी पर रखकर आप भावनात्मक रूप में दाहिनी चौकी से आचमन हेतु जल का दूसरा पात्र उठाएंगे। जहाँ तक लौकिक वस्तुओं का प्रयोग करते हुए पूजा-आराधना का प्रश्न है आप मूर्ति अथवा चित्र के निकट भूमि पर डालते हैं चन्द बूंदे सामान्य

जल की और बारम्बार पात्र भी नहीं बदलते। भगवान शिव हेतु आचमनीय का मंत्र इस प्रकार है—

त्रिपुरान्तक दीनार्तिहर श्रीकण्ठ शाश्वत।
गृहाणाचमनीयं च पवित्रोदक कल्पितम्।।

विभिन्न प्रकार के स्नानों के मंत्र

जिस प्रकार आप नित्यकर्म और स्नान आदि से निवृत्त होकर उपासना के लिए बैठे हैं, उसी प्रकार भगवान शिव भी स्नानादि से निवृत्त होकर अपने सम्पूर्ण शृंगार में आपकी सेवा-उपासना स्वीकार करने के लिए पधारे हैं। फिर भी धर्मशास्त्रों की विवेचना के अनुसार उन्हें आप स्नान करायेंगे ही। भगवान को एक नहीं, क्रमशः गोदुग्ध, दही, घी, शहद, शर्बत और अन्त में शुद्ध जल, इस प्रकार छह वस्तुओं से आप स्नान कराएंगे। सर्वप्रथम इस श्लोक के स्तवन द्वारा उन्हें गाय के दूध से स्नान कराया जाता है—

मधुरं गोपयः पुण्यं पटपूतं पुरस्कृतम्।
स्नानार्थं देवदेवेश गृहाण परमेश्वर।।

'गोदुग्ध स्नान' के पश्चात् निम्नलिखित मंत्र का स्तवन दही से स्नान हेतु किया जाता है—

दुर्लभन्दिविसुस्वादु दधिसर्वप्रियम्परम्।
तुष्टिदम्पार्वतीनाथ स्नानाय प्रतिगृह्यताम्।।

'दधि-स्नान' के पश्चात् निम्नलिखित मंत्र का स्तवन करते हुए 'घृत-स्नान' कराइए—

घृतं गव्यं शुचिस्निग्धं सुसेव्यं पुष्टिदायकम्।
गृहाण गिरिजानाथ स्नानाय चन्द्रशेखर।।

'घृत-स्नान' के पश्चात् इस मंत्र से कराएं मधु अर्थात शहद से प्रभु को स्नान—

मधुर मृदु मोहघ्नं स्वरभङ्ग विनाशनम्।
महादेवे दुमुत्सृष्टं तवस्नानाय शङ्कर॥

'मधु-स्नान' के पश्चात् अग्रलिखित मंत्र का स्तवन करते हुए 'शर्करा-स्नान' कराइए—

तापशान्तिकारी शीरा मधुरास्वाद संयुता।
स्नानार्थ देव देवेश शर्करेयं प्रदीयते॥

'शर्करा-स्नान' के पश्चात निम्नलिखित मंत्र का स्तवन करते हुए 'शुद्ध जल से स्नान' कराएं—

गंङ्गा गोदावरी रेवा पयोष्णी यमुना तथा।
सरस्वत्यादि तीर्थानि स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम्॥

उपासना करते समय तो पाद्य, अर्घ्य और आचमनीय के समान ही ये छहों प्रकार के स्नान आप भावनात्मक रूप में ही कराते हैं। सामान्य रूप से आराधना करते समय इन छहों वस्तुओं के स्थान पर जल की चंद बूंदें ही भूमि पर छिड़की जा सकती हैं अथवा शिवलिंग पर केवल जल भी चढ़ाया जा सकता है। विशेष पूजाओं में शिवलिंग अथवा भगवान के विग्रह को इन सभी वस्तुओं से स्नान भी कराया जाता है। भगवान के स्नान में प्रयुक्त ये सभी वस्तुएं एक जगह मिल जाती हैं। अतः पूजा के बाद प्रसाद के साथ इस मिश्रण को चरणामृत के रूप में भक्तों में बांट दिया जाता है।

वस्त्र, यज्ञोपवीत, चन्दन, भस्म एवं अक्षत

आपने भावलोक में भगवान को स्नान कराया है, वैसे जल तो क्या भगवान् की प्रतिमा तक आपके पास नहीं। परन्तु भावनात्मक रूप में इन छह वस्तुओं से स्नान के फलस्वरूप न केवल उनके सभी वस्त्र भीग चुके हैं बल्कि उनके भाल पर लगा चन्दन और शरीर पर लगी भस्म तक उतरकर

बह चुकी है। अतः सर्वप्रथम आप प्रभु को इस मंत्र के स्तवन द्वारा वस्त्र समर्पित कीजिए—

वस्त्राणि पट्टकूलानि विचित्राणि नवानि च।
मयानीतानि देवेश प्रसन्नोभव शंकर॥

मानसिक उपासना करते समय तो आप देवताओं द्वारा लाए हुए दिव्य वस्त्र और आभूषण आदि भगवान को समर्पित करते हैं। परन्तु लौकिक वस्तुओं का प्रयोग करते समय मूर्ति होने पर तो उसे वस्त्र पहिनाए जाते हैं और शिवलिंग का प्रयोग करने पर कलावे का एक टुकड़ा भगवान पर चढ़ा दिया जाता है। इसी प्रकार उपवीत अर्थात यज्ञोपवीत के स्थान पर भी आप कलावे के टुकड़े का प्रयोग करेंगे और साथ ही स्तवन करेंगे इस मंत्र का—

सौवर्ण राजतं ताम्रं कार्पासस्य तथैव च।
उपवीतम्मयां दत्तं प्रीत्यर्थं प्रतिगृह्यताम्॥

वस्त्र एवं यज्ञोपवीत अर्थात जनेऊ समर्पण के पश्चात भगवान शिव के भाल पर किया जाएगा चन्दन का लेपन। शिवजी को सफेद रंग के चन्दन की तीन आड़ी पट्टियों के रूप में तिलक लगाया जाता है। इस प्रक्रिया को गंध समर्पण कहा जाता है और इस समय स्तवन किया जाता है इस मंत्र का—

सर्वेश्वर जगद्वन्द्य दिव्यासन समास्थित।
गन्धं गृहाण देवेश चन्दनं प्रतिगृह्यताम्॥

तीन लोक के पालनकर्ता और सम्पूर्ण शक्तियों एवं सिद्धियों के स्वामी होने के बावजूद भगवान् शिव आभूषणों के रूप में नाग और वस्त्र के रूप में बाघाम्बर धारण करते हैं। यही कारण है कि जहाँ अन्य देवी-देवताओं को अनेक कीमती वस्त्र और आभूषण अर्पित किए जाते हैं, वहीं भोले-भण्डारी को अर्पित की जाती भभूत अर्थात भस्म। भावलोक में उपासना करें

अथवा शिवलिंग की पूजा-आराधना भस्म उनके सम्पूर्ण शरीर पर लगाई जाती है और इस समय स्तवन किया जाता है इस मन्त्र का–

ॐ त्र्यायुषं जमदग्नेः कश्यपस्य त्र्यायुषम्।
यद्देवेषु त्र्यायुषं तन्नोऽअस्तु त्र्यायुषम्॥

सामान्य रूप से चन्दन अथवा रोली का तिलक लगाने पर भी उसे पूर्ण तब ही माना जाता है जब तिलक के ऊपर चंद चावल भी चिपका दिए जाएं। देव पूजन में भी इस लौकक नियम का पालन किया जाता है। यही कारण है कि भगवान शिव को चन्दन और भस्म अर्पित करने के बाद अक्षत् अर्पण के इस मंत्र द्वारा आप अक्षत भी अर्पित करेंगे–

अक्षतांश्च सुरश्रेष्ठ शुभ्राधूनाश्च निर्मलाः।
मया निवेदिता भक्त्या गृहाण परमेश्वर॥

पुष्प, बिल्वपत्र एवं धूप-दीप अर्पण

स्नान के पश्चात भगवान शिव के सम्पूर्ण शरीर पर भस्म और मस्तक पर तिलक के रूप में त्रिपुण्ड सुशोभित हो रहा है। इस प्रकार प्रभु की अलौकिक छविं पहले से भी द्विगुणित हो गई है। मन की आंखों से उनकी रूप-सुधा का पान करते हुए उपासक निम्न मंत्रों के साथ उन्हें क्रमशः पुष्प, धूप एवं दीप समर्पित करता है, जबकि आराधक प्रभु के विग्रह पर माला तथा पुष्प चढ़ाने के बाद धूप और दीप प्रज्वलित भी करता है। शिवजी पर आक, कनेर तथा धतूरे के पुष्प एवं लाल रंग के जवाकुसुम (गुड़हल) आदि के पुष्प चढ़ाने का शास्त्रीय विधान है और सफेद फूलों एवं तुलसी का प्रयोग वर्जित। पुष्प तथा पुष्पमाला अर्पण का मंत्र है–

माल्यादीनि सुगन्धीनि मालत्यादीनि वै प्रभो।
मयाऽहृतानि पूजार्थं पुष्पाणि प्रतिगृह्यताम्॥

अन्य देवताओं पर तो पुष्पमाला और पुष्प दोनों ही पृथक्-पृथक् चढ़ाये जाते हैं, परन्तु शिवजी के लिए एक ही मंत्र का स्तवन होता है इन दोनों प्रयोजनों के लिए, और स्थूल रूप से पूजा करते समय भी पुष्पमाला पहिनाना अनिवार्य नहीं। परन्तु बिल्बपत्र अवश्य ही अर्पित किया जाता है भगवान शिव को और वह भी इस मंत्र के माध्यम से—

बिल्वपत्रं सुवर्णेन त्रिशूलाकारमेव च।
मयार्पितं महादेव बिल्वपत्रं गृहाण मे॥
त्रिदलं त्रिगुणाकारं त्रिनेत्रं च त्रियायुधम्।
त्रिजन्मपापसंहारं बिल्वपत्रं शिवार्पणम्॥

प्रभु को माला और पुष्प समर्पित करने के पश्चात निम्नलिखित मंत्र का स्तवन करते हुए धूप प्रज्वलित करके प्रभु के आस-पास के वातावरण को और अधिक सुगंधित बनाने के लिए साधक इस मंत्र का स्तवन करता है—

वनस्पति रसोद्भूतो गन्धाढ्यो गंध उत्तमः।
आघ्रेयः सर्वदेवानां धूपोऽयं प्रतिगृह्यताम्॥

'धूप' के पश्चात् निम्नलिखित मंत्र का स्तवन करते हुए 'दीपक' प्रज्वलित करके भगवान के सम्मुख रखा जाता है—

साज्यं च वर्ति संयुक्तं वह्निना योजितं मया।
दीपं गृहाण देवेश त्रैलोक्य तिमिरापह॥

नैवेद्य, आचमन, फल, ताम्बूल एवं द्रव्य समर्पण

भावलोक में विचरण करते हुए भगवान शिव की उपासना की जाए अथवा लौकिक वस्तुओं का प्रयोग करते हुए पूजा-अर्चना, भगवान को आपके पास पधारे हुए पर्याप्त समय व्यतीत हो चुका है। उनको स्नान कराकर संपूर्ण शृंगार भी आप कर चुके हैं। आप सोच रहे हैं कि अब प्रभु को भोजन कराना चाहिए। प्रभु को नैवेद्य (भोजन) के रूप में शुद्ध सात्विक

पदार्थ ही प्रस्तुत किये जाते हैं तामसिक वृत्तियों के समान ही तामसिक भोजन से भी प्रभु को घृणा है। जबकि उपासक तो ये सभी क्रियाएं भी मात्र भावनात्मक रूप से ही करता है। आप भगवान शिव से इस मंत्र द्वारा नैवेद्य स्वीकार करने की प्रार्थना कीजिए—

अपूपानि च पक्वानि मण्डकावटकानि च।
पायसं सूपमन्नञ्च नैवेद्यम्प्रतिगृह्यताम्॥

मन की आखों से आप देख रहे हैं कि शिवजी ने बड़े प्रेमपूर्वक आपके द्वारा अर्पित प्रसाद ग्रहण कर लिया है। थोड़ा-सा भोजन खाने के बाद शेष उन्होंने भक्तों के लिए प्रसाद के रूप में छोड़ दिया है। अब भगवान को जल पिलाना चाहिए, यह सोचते हुए आप आचमनीय के रूप में इस मंत्र का स्तवन कीजिए—

पानीयं शीतलं शुद्ध गांगेयमहदुत्तमम्।
गृहाण पार्वतीनाथ तवप्रीत्या प्रकल्पितम्॥

भगवान को आचमन कराने अर्थात जल पिलाने के पश्चात उनके हाथ धुलाए जाते हैं। करोद्वर्त्तन नामक इस प्रक्रिया का मंत्र है—

कर्पूरादीनि द्रव्याणि सुगन्धानि महेश्वर।
गृहाण जगतन्नाथ करोद्वर्तन हेतवे॥

'करोद्वर्त्तन' के पश्चात् अग्रलिखित मंत्र का स्तवन करते हुए 'फल' समर्पित करें। शिव-पूजन में बिल्व-फल भी समर्पित करना चाहिए। काटकर नहीं पूरा फल समर्पित किया जाता है—

कूष्माण्डं मातुलिगञ्च नारिकेल फलानि च।
गृहाण पार्वतीकान्त सोमशेखर शङ्कर॥

भगवान प्रसाद ग्रहण करने के पश्चात हाथ धो चुके हैं अतः अब उन्हें सुगन्धित पान अर्पित किया जायेगा। इस मन्त्र का स्तवन करते हुए भगवान् को पान अर्थात 'ताम्बुल तथा पुंगीफल' समर्पित करें—

पुङ्गीफलम्महद्दिव्यं नागवल्लीदलैर्युतम्।
गृहाण देवदेवेश द्राक्षादीनि सुरेश्वरः॥

जिस प्रकार मन्दिरों में भगवान पर रुपये-पैसे चढ़ाए जाते हैं, ठीक उसी प्रकार भावना के अनुसार अपने यहाँ पधारे हुए प्रभु को आप द्रव्य अर्थात धन समर्पित करते हैं। द्रव्य समर्पण इस मंत्र से किया जाता है—

हिरण्यगर्भगर्भस्थं हेमबीज समन्वितम्।
पञ्चरत्नं मयादत्तं गृह्यतांवृषभध्वजं॥

नीराजन, पुष्पांजलि, प्रणाम एवं प्रदक्षिणा

मन की आंखों से आप देख रहे हैं कि भगवान शिव ने कृपा करके आपकी सभी सेवाओं को स्वीकार कर लिया है। उन्हें आपके पास पधारे प्रर्याप्त समय व्यतीत हो चुका है, अतः अब वे अपने लोक को प्रस्थान करना ही चाहते हैं। इसी प्रकार मूर्ति के माध्यम से पूजा करने वाला पुजारी भी सोचता है कि अब पूजा की प्रक्रियाएं लगभग पूर्ण हो चुकी हैं। अतः पूजा-उपासना की अन्तिम क्रिया भगवान की आरती, उनकी परिक्रमा और उन्हें नमस्कार करता है। आप मन की आंखों से यह भी देख रहे हैं कि भगवान शिव को आपके पास उपस्थित देखकर अनेक देवी-देवता, ऋषि मुनि एवं सद्‌गृहस्थ प्रभु भक्त भी आपके आस-पास उपस्थित हो गये हैं। उपासक अनुभव करता है कि वह स्वयं भी सूक्ष्म रूप में उन भक्तों और देवों के मध्य ही उपस्थित है, जबकि वह वास्तव में तो स्वयं बैठा हुआ उपरोक्त श्लोकों का मन-ही-मन स्तवन कर रहा होता है और दो पंक्तियों के इस श्लोक से भावलोक में उतारता है भगवान शिव की आरती—

अग्निर्ज्योतीरविर्ज्योतिर्ज्योतिर्नारायणोविभुः।
नीराजयानि देवेश पंचदीपे सुरेश्वर॥

मन्दिरों में पुजारी तो भगवान की आरती उतारते हैं और भक्तगण हाथों में फूल लेकर खड़े रहते हैं तथा आरती के अंत में उन्हें मूर्ति पर चढ़ा देते हैं। उपासना करते समय भी भावनात्मक रूप में भगवान को यह पुष्पांजलि अर्पित की जाती है। पुष्पांजिल हेतु आप इस मंत्र का स्तवन कीजिए—

हर विश्वाखिलाधार निराधार निराश्रय।
पुष्पांजलिं गृहाणेश सोमेश्वर नमोऽस्तुते॥

यद्यपि प्रभु की मोहनी मूरत को देखते हुए उपासक का मन अभी भरा नहीं है और कभी भर भी नहीं सकता। साधक के नयन भावलोक में उनकी रूप सुधा के अमृत का अविकल पान कर रहे हैं, परन्तु वह मन की आंखों से देखता है कि अब प्रभु बस प्रस्थान करना ही चाहते हैं। प्रभु के प्रस्थान से पूर्व उन्हें नमस्कार भी किया जाना चाहिए। इस भाव से अविभूत उपासक-आराधक निम्नलिखित मंत्र द्वारा उन्हें नमस्कार और प्रणाम करता है।—

हेतवे जगतामेव संसारार्णव सेतवे।
प्रभवे सर्व विद्यानां शम्भवे गुरवे नमः॥

भगवान को आरती, पुष्पांजलि और प्रणाम समर्पित करने के बाद उनकी प्रदक्षिणा अर्थात परिक्रमा की जाती है। मन्दिरों में तो आरती-पुष्पांजलि और प्रणाम के बाद के बाद ही पूजा की इतिश्री हो जाती है। परन्तु मानसिक उपासना करते समय हम भगवान की प्रदक्षिणा भी करेंगे। भावलोक में आप यह भी देखते हैं कि आपके निकट उपस्थित देवता और अन्य भक्तगण भी, आपके साथ भगवान शिव की प्रदक्षिणा कर रहे हैं, जबकि वास्तव में आप अपने स्थान पर अविचल रूप से बैठे हुए इस मंत्र का मन-ही-मन स्तवन कर रहे होते हैं—

यानि कानि च पापानि जन्मांतर कृतानि च।
तानि तानि विनश्यन्ति प्रदक्षिणां पदे पदे॥

आपने पूरी श्रद्धा, तन्मयता और भक्तिभावना से की है भगवान शिव की उपासना अथवा आराधना। आपको सभी मंत्र भी शुद्ध रूप में उनके निर्धारित क्रम में याद हैं और अपने यहाँ पधारे हुए आशुतोष भगवान शिवजी की सेवा में आपने अपनी ओर से कोई कसर भी नहीं छोड़ी है। परन्तु एक मानव होने के कारण हमारे द्वारा कुछ त्रुटियों का रह जाना सहज संभव है। इन त्रुटियों और कमियों के लिए भगवान शिव से इन शब्दों में क्षमा प्रार्थना की जाती है—

प्रसन्नं पाहि मामीश भीतं मृत्युग्रहार्णवात्।
ॐ आवाहनं न जानामि न जानामि विसर्जनम्॥
पूजां चैव न जानामि क्षमस्य परमेश्वर।
अन्यथा शरणं नास्ति त्वमेव शरणं मम॥
तस्माक् कारुण्भावेन रक्ष मां परमेश्वर।
अनेन पूजनेन श्रीसाम्भ - सदाशिवः प्रीयताम्॥

हम अब तक यह भली प्रकार समझ चुके हैं कि उपासना में पूजा की तरह लौकिक वस्तुओं का प्रयोग नहीं किया जाता। मूर्ति पूजा में तो प्रभु के विग्रह को सभी वस्तुएं भौतिक रूप से अर्पित की जाती हैं, परन्तु उपासना करते समय उपासक के पास कुछ नहीं होता। सच्चे मन से भगवान शिव को याद किया जाता है और आंखें बन्द कर उन्हें अपने एकदम निकट अनुभव करते हुए विविध वस्तुएं काल्पनिक रूप में ही समर्पित की जाती हैं। भक्त के भावों के अनुरूप ही प्रभु उन्हें ग्रहण करते हैं और जितनी देर उपासक का मन पूर्ण तल्लीनता के साथ उपासना में लगा रहता है प्रभु का साक्षात् सान्निध्य उसे प्राप्त होता रहता है। प्रभु के आत्मिक तादाम्य एवं उपरोक्त मानसिक क्रियाओं के साथ शारीरिक रूप से वह जो कार्य करता है वह तो मात्र मंत्रों के स्तवन के रूप में ही होता है। दूसरी ओर पूजा-आराधना करते समय मूर्ति को सभी वस्तुएं भौतिक रूप में अर्पित

भी की जाती हैं। इसके साथ ही एक प्रमुख अन्तर यह भी है कि भौतिक पूजा के पश्चात तो प्रायः आरतियों का गायन और हरिनाम संकीर्तन किया जाता है। दूसरी ओर मानसिक उपासना के बाद भगवान शिव के किसी मंत्र का कम-से-कम माला जप किया तो किया ही जाता है अधिक जप की कोई सीमा नहीं। यही नहीं, भगवान शिव के सहस्रनाम, अष्टकों और स्रोतों का पाठ भी सिद्धहस्त उपासक करते ही हैं या फिर मन-ही-मन शिव चालीसे और शिव साठिका का पाठ किया जाता है।

आप भगवान शिव के अष्टकों, स्तोत्रों और चालीसों आदि का मन-ही-मन पाठ करें अथवा उनकी आरतियों, भजनों और नाम का संकीर्तन, इन्हें कितने समय तक किया जाये इसका कोई निश्चित नियम नहीं। जितने समय उपासक भगवान शिव के दिव्य और मनोहर रूप-स्वरूप को हृदय में बसाकर उपरोक्त में से कोई भी कार्य करता रहता है, भावलोक में वह आशुतोष भगवान शिव की मोहक छवि के दर्शन करता रहता है। आराधना-उपासना, पूजा-वन्दना, आरती गायन और हरिनाम संकीर्तन जितने समय तक सच्चे हृदय से किया जाए उतना ही कम है, परन्तु हो यह सच्चे मन से पूर्ण आस्था और विश्वास के साथ। आराधना-उपासना से जहाँ भक्त को धर्म-लाभ और हार्दिक आनन्द की प्राप्ति होती है वहीं भगवान भी कम हर्षित नहीं होते। यही कारण है कि भावलोक में उपासक यह भी स्पष्ट रूप से देखता है कि न केवल वह मुग्ध भाव से भगवान शिव को साक्षात अपने निकट महसूस कर रहा है, बल्कि वह यह भी देखता है कि प्रभु के दर्शन एवं सेवा करके जितना वह मुग्ध एवं पुलकित हो रहा है उतने ही मुग्ध भाव से भक्तवत्सल भोले-भण्डारी भगवान शिव उसे देख रहे हैं। चित्त के चलायमान होते ही आपकी दृष्टि सीमा से यह अलौकिक दृश्य धूमिल हो जाता है और आप वापस लौट आते हैं इस नश्वर संसार की भूल-भुलैया में।

9

श्री शिव सहस्त्रनाम

घट-घट वासी, त्रिलोक्य के स्वामी, सम्पूर्ण सृष्टि को धारण, पोषण और विलीनकर्ता महेश्वर भगवान शिव अनन्त हैं। अनन्त हैं उनके रूप, कृत्य और अवतार। किसी के लिए वे भोले भण्डारी हैं, तो किसी के लिए दया का सागर। कोई उन्हें साशत्व शिव कहता है तो कोई नटराज। अपनी भावना के अनुसार कोई उन्हें मातेश्वरी पार्वती और अपने पुत्रों सहित कैलाश पर्वत पर विराजमान कैलाशपति उमेश के रूप में देखता है तो कोई उनके रोद्र रूप महाकाल और त्रिपुरारी पर मुग्ध है। सकल ब्रह्माण्ड में जितने भी जड़ और चेतन पदार्थ, पशु-पक्षी, जलचर-नभचर, मानव-दानव और देव हैं वे सभी आपके अंश रूप है अतः सभी नाम शिवजी को प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप में सम्बोधित करते हैं। इसीलिए आपके नामों की निश्चित सूची तैयार करना तो संभव नहीं, परन्तु इनमें से एक सहस्त्र (1000) नाम तो आपको विशेष रूप से सम्बोधित हैं ही।

धर्मशास्त्रों के अनुसार इन एक हजारों नामों को संस्कृत के श्लोकों के रूप में स्तवन कर भगवान विष्णु ने शिवजी की स्तुति की थी। यही कारण है कि स्वयं भगवान विष्णु द्वारा रचित माना जाता है इस शिव सहस्त्रनाम को। मूल शिव सहस्त्रनाम तो संस्कृत में है, परन्तु हम यहाँ उसका हिन्दी अनुवाद दे रहे हैं। कारण स्पष्ट है। किसी भी श्लोक, मंत्र, सहस्त्रनाम, आरती अथवा चालीसे का स्तवन तब ही अपना पूर्ण प्रभाव दिखला पाता

है जब उच्चारित किए जाने वाले शब्दों के अर्थ और अभिप्राय का भी हम मनन करते जाएं। सहस्रनाम संस्कृत में हो अथवा हिन्दी में अथवा आप अपनी मातृभाषा में इसका नियमित पाठ करें, भाषा से कोई अन्तर नहीं पड़ता, मुख्य महत्व तो आपके मन की भावना, एकाग्रता, समर्पण भाव और आस्था का है।

शिव सहस्रनामावलि

सदाशिव, सृष्टि के हर्ता, सुखदाता तथा दुःखों को हरने वाले, पुष्टि देने वाले, परिपुष्ट नेत्रधारी, आपकी धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष को चाहने वाले सदा सेवा किया करते हैं। श्रेष्ठ आचरणवान प्रजा के सुखदाता एवं संहारकर्ता ॥10॥ सबके ईश, परब्रह्म परमात्मा, मस्तक पर चन्द्रमा से शोभायमान, विश्व स्वरूप, विश्व के पालक, वेदान्त तत्व के ज्ञाता, कपाली, लाल लाल एवं श्याम जटाधारी, अविनाशी, ज्ञान के आधार रूप॥20॥ पार्वतीनाथ, प्रमथादिगणों के स्वामिन्, आकाशादि अष्टमूर्तियों वाले विश्वस्वरूप, धर्म अर्थ काम स्वर्गादि की प्रप्ति के साधन, विज्ञान के पूर्ण ज्ञाता, देवाधिदेव, त्रिनेत्रधारी, विपरीत देव॥30॥ सारे देवताओं में महादेव, परम चतुर कुशल एवं रक्षक, पुष्ट बलवाल विश्वरूप, त्रिनेत्र, वाणी के अधिपति, सारे देवों में बड़े, सब प्रमाणों के ज्ञाता, वृष लक्षणों वाले॥40॥ वृषभ के सवार, सर्वेश्वर, पिनाक धनुष वाले, खट्वांगधारी, अद्भुत वेष वाले, त्रिकालाबाधित अज्ञानमय अन्धकार के नाशक, महायोगी रक्षक, ब्रह्माण्ड हर्ता॥50॥ जटाधारी, कालों के भी काल, व्याघ्र आदि का चर्म वस्त्रों की भाँति धारण करने वाले, उत्तम विभव वाले, ओंकार स्वरूप, पापियों को दण्ड देने वाले, सभी प्राणियों में निवास करने वाले, सेवा एवं भजन

योग्य, दुर्वासा का अवतार ग्रहण करने वाले, त्रिपुर दैत्य के विनाशक।।60।। श्रेष्ठ अस्त्रधारक, कार्तिकेय स्वामी के पिता, परब्रह्म, प्रकृति से परे, आदि अन्त एवं मध्य से रहित, पर्वतों के स्वामी, उमानाथ, कुबेर के भ्राता, सुन्दर कण्ठधारी, सर्वश्रेष्ठ लोक तथा वर्ण वाले।।70।। सीधे स्वभाव समाधिगम्य धनुर्धारी, नीलकण्ठ, अद्भुत प्रकाशमान विशाल नेत्र, सृष्टि तथा संहार के समय मृगरूप, जीवों के लिए शिवकारी, देवेश, सूर्य के प्रचण्ड ताप की तरह दुष्टों को तापित करने में समर्थ, धर्म के स्वामी।।80।। सहनशील, शीतल प्रकृति, वैभवों के स्वामी, भगवान के नेत्र निकालने वाले, क्रोधी, जीवों के नाथ, गरुड़ रूप धारक, भक्तों के प्रेमी, उत्तम तपस्वी, सबके दाता, दयासागर।।90 परम चतुर, जटाजूट धारक, काम को दण्डदाता, श्मशानवासी, सूक्ष्मरूप से सबमें रहने वाले, सर्व समर्थ, सृष्टिकर्ता मृगरूप, जीवों के नाथ, पंच महाभूतों के रचयिता।।100।।

संसार को आवागमन से छुड़ाने में महोषध, सोमरस पीने वाले, अमृतपान करने वाले, नम्र, महातेजस्वी, उत्तम कान्तिमान प्रकाशमय, जलरूप, मृत्युरहित, अन्नरूप, प्रतापी।।110।। अमृतस्वामी, संसार से पार कराने वाले, स्वर्ग पृथ्वी पशु वाणी जल एवं इन्द्रियों के स्वामी, रक्षक, विज्ञान से प्राप्य, समय से अविनाशी, सर्वज्ञ, उत्तम नीति रूप, शुद्ध अन्तःकरण, चन्द्ररूप।।120।। सोमरस श्रेष्ठ, सदा सुखी, अजातशत्रु, स्वयं प्रकाश, माननीय देवताओं को हवि पहुँचाने के लिए अग्निरूप, लोकरचयिता, वेद तथा रचयिता, अनादि, काल।।130।। सब वेदों के जानने वाले, को प्रकाशित करने वाले, त्रिनेत्रधारी, पिनाक धनुष वाले,

पृथ्वी देव, ब्राह्मण स्वरूप, महामंगल, सुन्दर बुद्धि सम्पन्न, पृथ्वी के धारक, प्रकाशक, भक्तों के मनोरथ पूरक।।140।। सबके नाथ, वेद तथा ब्रह्मा के रचयिता, विश्वकारक, सृष्टिरूप, सर्वज्ञाता, कनेर पुष्पप्रिय, शाखनामधारी, विशाखनाम, वेदशाखामय, त्रिगुण-भिन्न।।150।। उत्तम वैद्य, प्रवाहित गंगाजल सम निर्मल, कान्तिमय, श्रेष्ठ, सृष्टि रचियता, स्थिररूप, आत्मा को वश में रखने वाले, आत्मा के विधाता, जीवमात्र को कर्मफल देने वाले, गण सेवित।।160।। गण शरीर, निर्मल कीर्ति, नि:संशय, काम स्वरूप, इच्छा पूरक, भस्मधारी, भस्म के प्रेमी, भस्म की शय्या वाले, कामना वालों के प्रेमी, वेद रचयिता।।170।। संसार चलाने वाले, आत्मनिवृत्ति रहति, धर्म समूह तथा मंगलरूप, निष्पाप, पवित्रात्मा, चतुर्भुज, दुष्टों के लिए असह्य, दुर्लभ, कठिनता से ज्ञेय।।180।। महाकठिन, अस्त्र-शस्त्रों में चतुर, विद्याओं के निधान, आध्यात्म योगी, संसार के आधार, सृष्टिवर्द्धक, सुन्दर अंगों वाले, भ्रमरों की भांति लोकतत्वज्ञाता, जगदीश, संहार करने वाले, भस्म द्वारा पवित्र करने वाले।।190।। अभय, आत्मबली, शुद्ध शरीर, कठिनता से लभ्य, सज्जनों से भजनीय, हनुमान स्वरूप, अग्निरूप, पुराणरूप, शत्रु विनाशक, महाबली।।200।।

महाकुण्डरूप, अपार मायाधारी, देवसिद्धि गण वन्दनीय, व्याघ्रधर्म, गण सर्पों के भूषणधारी, महाविराट उत्पादक, सम्पूर्ण जीवों के कोश, अमर, वायुरूप, स्वात्मसुखरूप, अमृतपान कर्ता, शोभामय।।210।। पच्चीस तत्वों के मध्य में स्थित अग्निरूप, कल्पवृक्ष, सुलभता से जाति एवं आश्रमों के चालक, ब्रह्मचारी।।220।। शत्रु को जीतने वाले, आश्रमरूप, परिश्रम के दूरकर्ता, परमज्ञानी, पर्व

के नाथ, प्रमाण रचियता, कठिन लभ्य, गरुड़ रूप, वायु पर सवार।।230।। धनुषधारी, धनुर्वेदज्ञ, उत्तम स्नान, सत्यरूप, सत्य से भी पर, दीनतारहित, धर्म पृथ्वी तथा धर्म स्वरूप, पृथ्वी तथा धर्म के शासक, अपार दृष्टिवाले, दण्ड रूप, दमन तथा निग्रहकर्ता।।240।। अभिचारी तथा मायाधारी, विश्व की रचनाओं में चतुर, राग द्वेष विनाशक, भक्तों को नम्र करने वाले तपस्वी, जीवों के वर्द्धक, मतवाले, छिपे काम पर विजय पाने वाले, विष्णु पर प्रेम वाले, उत्तम स्वभाव, सबसे प्रथम।।250।। सभी लोगों की मन की गति जानने वाले, वेगवान्, उद्धारक, बुद्धिमान, मुख्य परमात्मा, अविनाशी, लोकपालक, अन्तर्यामी, सबमें रहने वाले, कल्पों के आदि, कमल नेत्र।।260।। वेदशास्त्र के अर्थ एवं सार के ज्ञाता, नियम रहित, निमय आश्रित, आनन्ददायक, चन्द्रदायक, चन्द्रमा स्वरूप, सूर्यरूप, शनिरूप, धूम्रकेतु रूप, उत्तमांग, मूंगे के समान शोभित, शक्ति से वश में न होने वाले।।270।। परब्रह्म, मन की भांति वेगवान, अनघ, निष्पाप, पर्वतरूप, पर्वतबासी, प्रिय मूर्ति, मंगल सेवित।।280।। महातपस्वी, दीर्घतपस्वी, अति स्थूल, वृद्धस्वरूप, स्थिरदिन, वर्षाकाल, सर्वव्यापक, प्रणामरूप, उत्तम।।290।। ऋतु, सत्यरूप, संवत्सरकर्ता, मंत्रों के आधीन, सबके तारक, अजन्मा, सर्वेश्वर, निवृत्त एवं निष्पन्तरूप, महातेजस्वी, अति बलवान योगसिद्ध।।300।।

अतिपराक्रमी, सफलस्वरूप, सबके आदि, अधर्मीजन अज्ञेय, कुवेररूप, प्रकाशमय, मनस्वी, सत्यस्वरूप, पाप विनाशक, सुन्दरकीर्ति, शोभामय।।310।। मालाधारक, वेद वेदांग-ज्ञाता, मुनि प्रकाश, प्रकृतिरूप, भोजन के भोक्ता, पुरुषरूप, लोकनाथ, दुष्टजनों से आराधना रहित, नित्य अमृतमय, शान्तरूप, बाणहस्त।।320।।

परमप्रतापी, कमण्डलधारक, धनुर्धर, मनवाणी से परे, इन्द्रिय रहति, अत्यन्त मायाधारी, सर्वव्यापक चार मार्गों वाले, समय में प्राणियों को प्रवृत्तकर्ता, महा-उत्साही।।330।। महाबली, श्रेष्ठबुद्धि, महावीर, भूतगण सेवित, त्रिपुर दैत्य विनाशक, रात्रि में विचरने वाले, शक्तिशाली, महाकान्त, अज्ञेयशरीर शोभायमान।।340।। सभी आचार्यों के मन की गति ज्ञाता, शास्त्र रचयिता, विधिमाया रचयिता, नियत तथा स्थिर आत्मा, चररूप, तेजों के भी तेजरूप, कान्तिरूप, सबके ।।350।। ओंकार अक्षर रूप, ज्ञानवान, मंत्ररूप, समभाव, तत्वरूप, नौकारूप, सत्ययुग आदि युग प्रवर्तक, अति गम्भीर वृषभवाहन, सर्वमहान्।।360।। महात्माओं के प्रिय, सुलभ, तत्वशोधक, तीर्थस्वरूप तीर्थनाम, तीर्थों में देखने योग्य, तीर्थों के प्रापक, सागरूप, प्राणियों के स्थान, अजेय।।370।। विजयज्ञाता, प्रशंसनीय, प्रमाणज्ञाता, सुवर्ण कवच के धारक, देवरूप, विद्या स्वामी, बिन्दु के आश्रय, वायुस्वरूप, त्रिताप नाशक, पापनाशक।।380।। निर्मल, प्रपंची, विस्तारक, कठिन माया द्वारा स्वरूप छिपाने वाले, साधक, कारणमय, स्वयं सर्वकर्ता, सभी बन्धनों से मोचक, सतचित् मात्ररूप।।390।। व्यवस्थापक, स्थानदाता, ब्रह्मस्वरूप, शत्रुओं को खण्ड-खण्ड करने वाले, सर्व सुंदर, द्वैताद्वैतस्वरूप, सदानूतन, आत्मा में स्थित, वीर स्वामी, वीरभद्र, गणरूप।।400।।

वीरों के आसन, विधान में गुरु, शूरवीर शिरोमणि, सर्वदाता, अति आनन्दरूप, नन्दीश्वररूप, जगत् रूप सन्तान को नित्य धारण करने वाले, त्रिशूल धारक, विष्णु रूप से युगोपर्यन्त स्थित, कल्याण, बालखिल्यस्वरूप।।410।। अतीव पराक्रमी, ताप वाले किरणों के स्थान, सूर्य स्वरूप, श्रोत्र इन्द्रिय रहित, आकाश में विचरण करने

वाले, सुन्दर एवं आनन्दयुक्त, सुन्दरशरण, वेदज्ञों पर प्रेमकर्ता, अमृतस्वामी, इन्द्ररूप, विश्वामित्रस्वरूप।।420।। प्रकाशमान, प्राणियों के अन्त, सभी कार्यों के साधक, मस्तक पर नेत्रधारी, सम्पूर्ण विश्व शरीर, तत्वरूप संसार चक्र धारक, सफल दण्डदाता, सबके अन्तर्गत, प्रलय में संसार के संहर्ता।।430।। ब्रह्मतेजस्वरूप, मुक्तिदाता, माया से परे, एकत्रितकर्ता, व्याघ्र के कोमल चर्म के धारक, छविमय, अतिदीप्त वाले, वैद्यरूप, वाणी के नाथ, दिवाकर।।440।। रसग्रहणकर्ता, अग्नि रूप, अग्निरूप से स्रव तथा वायुरूप से शोषण कर्ता, शासन के लिए यमरूप, युक्ति से उन्नत कीर्तिमय, प्रेमस्थान, शत्रु विजेता, कैलासनाथ, सुन्दर जगत् रचयिता।।450।। सूर्यनेत्र, श्रेष्ठ विश्वरूप, निर्भय, विश्वपालक, कर्मों के फलदाता, जन्ममरणरहित, मंगलस्वरूप, पवित्र, श्रवण कीर्तन प्रसिद्ध, विश्वनाशक।।460।। ध्येय दुःस्वप्ननाशक, संसार सागर से उद्धार करने वाले, पापियों के नाशक, भलीभांति ज्ञेय, सहन न कर सकने वाले पराक्रमी, उत्पत्तिरहित, अनादि, पृथ्वी स्वर्ग की शोभा, किरीट धारक।।470।। स्वर्ग के स्वामी, जगत्रक्षक, विश्वरक्षक, अनेक गतियुक्त, उत्तम बाजूबन्द धारक, जनउत्पादक, जगत् के जन्मादि कारक, प्रेमयुक्त, उत्तम नीतिज्ञ, सर्वस्वामी।।480।। वशिष्ठरूप, कश्यपरूप, प्रकाशमय, भयंकर भयानक पराक्रमी, ॐ रूप, उत्तम मार्ग पर आचरण करने वाले, महाकोष, उत्तम धन, जन्म के स्वामी।।490।। सबसे बड़े देव, सभी वेदों के पूर्ण ज्ञाता, सबके साररूप, तत्वज्ञ, एकरूप, सबमें व्यापक, विष्णु विभूषण, ऋषि एवं ब्राह्मणरूप, परम वैभवजन्य जरा-मरण से रहित।।500।।

पंचतत्वोत्पादक, विश्वेश्वर, मंगलकर्ता, आदिअन्तरहित, सबके कारण, सर्वप्रिय, पांच भूतों के साथ लोकों के धारण कर्ता, शिवगायत्री प्रेमी, पवित्र किरण धारक विश्वव्यापी।।510।। दिनकर्ता, बालकरूप, कैलास पर्वत प्रिय, संसार के राजा, देव-शत्रु विनाशक, नेमिरहित एवं इच्छितनेम, आनन्ददाता, सर्वतापरहित, स्वप्रकाशमान, परमप्रकाश ।।520।। परम प्रकाश शरीर, व्याघ्रचर्मधारी, पिंगल वर्ण की दाढ़ी-मूछों वाले, मस्तक पर नेत्रधारी, वेदरूप, विज्ञानरूप, अमृतदाता, जगत्‌के जन्मदाता, दुष्टों को दुःख देने वाले, जग विश्वान एवं आदित्यरूप, संसार से परे।।530।। वृहस्पतिरूप, मंगल एवं गुणरूप, नामधारी, पापविनाशक, पवित्रदर्शन, उदार, यशस्वी उद्यमकर्ता, नित्ययोगी, सत्यरक्षक, असत्यनाशक, आकाशरूप, उसमें शवनक्षत्र मालारूप, स्वर्ग के स्वामी।।540।। स्वात्मपद के आधार, शुद्धस्वरूप, अघनाशक, मणिप्रदाता, आकाशविहारी, हृदयकमल में स्थित, इन्द्रस्वरूप, शान्तिरूप, अचंचलधर्म, तापयुक्त, गृहस्वामी।।550।। कृष्णारूप, सर्वसमर्थ, अत्याचारविनाशी, अधर्म के शत्रु, अगम्य, अनेकजनों से आराधनीय, वेदस्थान, महानगर्भ स्थानधारी, धर्म की उत्पत्ति के स्थान, धन के आगमरूप।।560।। जगत् हितैषी, मोहन कर्ता, बुद्ध अवतार, बालरूप, आनन्ददाता, सुवर्ण प्रकाशमान, प्राणियों में रमणकर्ता, नारदरूप, रोगरहित, नेत्रस्वामी विश्वामित्ररूप ।।570।। धन के स्वामी, महान तेजस्वी एवं अत्यन्त तेजस्वी, परम उत्तम, सबके माता-पिता, पवनरूप, सर्पों की मालाएं धारण करने वाले, पुलस्त्य ऋषिरूप, पुलहस्वरूप, अगस्त्यरूप।।580।। जातुकर्ण्यऋषिरूप, पराशररूप, मायामय आवरण से रहति, ब्रह्माजी के पुत्र, विष्णुरूप, आत्मरूप, अनिरुद्धस्वरूप अत्रिरूप, विज्ञानरूप,

महायशस्वी।।590।। लोकवीर, शिरोमणिशूर, क्रोधी, सफल पराक्रम, नागसर्पधारक, महाकल्परूप, कल्पवृक्षरूप, कलाधारी, अधिक तेजस्वी, स्थावर।।600।।

कान्तिमान, पराक्रमी, उन्नत आयु एवं शब्द के स्वामी, वाचाल, दुष्टनाशक, अग्नि सारथी, अस्पृश्यरूप, अतिथिरूप, शत्रु विनाशक, वृक्ष के नीचे आसनधारी।।610।। उत्तम श्रवणकर्ता, पितृश्वरो के प्रति खीर प्रापक, अग्निरूप, उत्तमतपस्वी, विश्व को भोजन दाता, भजनीय, जरा आदि रोग विनाशक, बडे अश्व के वाहन वाले, आकाश के कारण सुन्दर अंगवाले।।620।। अज्ञान अन्धकार के निवर्तक, ग्रीष्मरूप, निर्मल, मेघराज, शत्रु पर विजेता, सुखदायक, वायुरूप, संहारकर्ता, आनन्ददाता, शिशिररूप, बसंतरूप, वैशाख मासरूप।।630।। ग्रीष्मभाद्रपदरूप, धान्यप्रापक, शरदहेमन्तरूप, अंगिराऋषिरूप, दत्तात्रेयस्वरूप, निर्मल विश्वाहन, पापरहित, पुर विजेता इन्द्ररूप, वेदत्रयीज्ञाता, नूतनगज की भाँति मद वाले, मन एवं बुद्धिरूप।।640।। अहंकारस्वरूप, क्षेत्रज्ञ, क्षेत्ररक्षक, जमदग्निरूप, सागररूप, सर्वमुक्तिरूप, अमृत पिलाने वाले, विश्व में कालस्वरूप, भयंकरतारहित, सबसे बड़े यज्ञरूप।।650।। शुभ कल्याण दाता, पर्वतरूप, गगन, कुन्दवत् शोभा वाले, दैत्यशत्रु, शत्रुनाशक, रात्रि रचयिता, बुद्धिमान, लोक एवं कल्प के धारक, ऋग्, यजु, साम, अथर्वरूप।।660।। धर्म आदि चार भाव कुशल, चतुर पुरुषों के प्रेमी, वेदों के रूप-स्वरूप, तीर्थ के देवता, तीर्थ स्थान, शिव स्थान वाले, अनेक बलों से युक्त, विशालकाय, सर्वस्वरूप, चराचररूप, न्यायकर्त्ता, रचियता

तथा नेता।।670।। न्याय से पहिचानने के योग्य, अति आनंद उत्पादक, हजार सिरों वाले, देवों के राजा, सभी शस्त्रों के नाशक, गुण्डितसिर, सुन्दर-स्वरूप, श्रीवत्सस्वरूप धारक, इन्द्रिय दमनकारक ।।680।। शब्दरूप, उत्तमगुणरूप, पिंगल वर्ण के नेत्रों वाले, अनेक नेत्रधारी, नीलकण्ठ, दुःखरहित, सहस्त्र भुजाधारी, सबके स्वामी, भक्तों के शरणदाता, सर्वलोकधारक।।690।। पद्मासन लगाने वाले, परम तेजस्वी, नित्य फलदायक, पद्मगर्भ, महागर्भ, विश्वगर्भ, वाचाल, सर्वज्ञाता, वरदाता, वर्णनीय।।700।।

महानादरूप, सुरासुर गुरु, सुरदैत्य नमनीय, देवदानव मित्र, ईश्वर, स्वामी, अलौकिक-रूपवान, देवदानव आश्रय, परम् देव, निश्चिन्त।।710।। ब्रह्मा आदि देवों की आत्मा, शीघ्र प्रकट होने वाले, महा असुरों के मारने में व्याघ्ररूप, देवों में सिंह, दिनकर्ता, देवताओं में श्रेष्ठ, ब्रह्मादि से श्रेष्ठ, अपने ही ज्ञान में रमणकर्ता, शोभायुक्त, चूड़ावान।।720।। श्री पार्वती के प्रेमी, वज्र हस्त, तलवार

धारक, नृसिंह मद विनाशक, ब्रह्मचारी स्वरूप, लोकों में विचरण करने वाले, धर्म का आचरण करने वाले, धन के स्वामी, नन्दीगण, नन्दी के ईश्वर।।730।। अन्तरहित, नग्न रहने वाले, व्रतधारी, अवगुण रहित, लिंग स्वामी, देवस्वामी, युगस्वामी, युगनाशक, स्वर्ग स्वामी, स्वर्ग के पवन।।740।। षट्जाति, सात स्वरों के चालक, वाणी के स्वामी, बीज उत्पादक, कार्यकर्ता, धर्म संचालक, कपट रूप धारक, लालच से रहित, उत्तम स्वभाव, सर्वस्वामी, श्मशान वासी, त्रिनेत्रधारी।।750।। सेतु स्वरूप, मूर्ति आकार से रहित, सबके ऊपर रहनेवाले, त्र्यम्बक, सर्प आभूषण धारी, अन्धकासुर शत्रु, मयदानव शत्रु, विष्णु, स्कन्ध को गिराने वाले, दोषरहित, नित्य गुणवान।।760।। दक्ष के शत्रु, पूषा के दांत तोड़ने वाले, सर्व संपन्नकर्ता, पवित्र, श्रेष्ठ कुमार वाले, सुन्दर नेत्रधारी, उत्तम मार्ग रक्षक, भक्तों के प्रेमी, धतूरे के सेवन कर्ता, पवित्र यशवान।। 770।। व्याधिरहित, मन से भी तीव्र, तीर्थकर्ता, जटाधारी, नियत रक्षक, स्वामी, जीवन को समाप्त करने वाले, अपरिछिन्न, स्वर्ण समान वीर्यधारी, धनदाता, श्रेष्ठ गति।।780।। सिद्धिदाता, सत्चित रूप, उत्तम जाति, दुष्ट नाशक, कलाधारी, महाकालरूप, प्राणियों के सत्व में स्थित, लोकों में लावण्यतायुक्त, सबको सुन्दरता देने वाले, सुख स्थान, चन्द्रसंजीवनी रूप।।790।। परमशासक, सृष्टि तथा प्रलय में ग्राह स्वरूप, महेश्वर, संसार बन्धु तथा स्वामी, जीवकृत, शुभ अशुभ ज्ञाता, चर्म अम्बर से शोभित, अविनाशी, अक्षररूप, प्रिय।।800।।

सभी शास्त्रों के ज्ञाताओं में अग्रणी, तेजस्वी, कांतिमय, लोकमान्य, कृपासागर, मंदमुस्कानयुक्त, प्रसन्न मन, अजेय, कठिन

पराक्रमी, प्रकाशमय।।810।। जगन्नाथ, निराकार, जलस्वामी, तूमा की वीणा वाले, विशालकाय, शोकरहित, शोकनाशक, त्रिलोकीरक्षक, त्रिलोकीनाथ, पवित्रकर्ता।।820।। जिनसे ज्ञान प्रकट होकर संसार को मिलता है, उत्तम ज्ञान, गुप्त लक्षणों वाले, देवरूप, स्पष्ट-अस्पष्ट रूप, सभी प्रजा के स्वामी, संसार से परे, मंगलमय धन, प्राण सत्व, मान धन।।830।। संयम रूप, ब्रह्मा-विष्णु रूप, प्रजा पालक, योगी, योगियों की गति, पक्षी रूप, विश्वरचयिता, कर्मफलदाता, जगत्धारक।।840।। रचने वाले, विनाशक, चतुर्भुज, कैलाश शिखर के निवासी, जगत् व्यापक, नित्यगतिरूप, हिरण्यगर्भ, पारब्रह्म, जीव पालक, पृथ्वीनाथ।।850।। ब्रह्मरूप, शुभकर्मों के प्रवर्तक, योगज्ञाता, वरदायक, ध्यानरूप, ब्राह्मणों के प्रेमी, देवप्रिय, देवताओं के नाथ, देवों में वायु, ब्रह्मा एवं सूर्य समान, देवगण चिन्तनीय, त्रिनेत्रधारी, विषम नेत्रवान।।860।। उपदेशदाता, धर्मवर्धक, ममतारहित, निर्मोह, निरुपद्रव, अभिमानियों के अभिमान नाशक, सदा प्रसन्न, जगत् के प्रसन्नकर्ता, सभी अर्थों के धारण करने वाले एवं हजारों किरणों वाले।।870।। भस्मरूप भूषण से शोभित, सरल आकार सम्पन्न, वामदेव, भूत भविष्य-वर्तमान तीनों कालों के स्वामी, जगत् बनाने वाले, शत्रुओं के धन नाशक, सबके कारण, इच्छारहति, बड़े खजाने वाले, मुक्तिदाता, निष्कण्टक।।880।। नित्यानन्द रूप, कपट रहित, कपट के नाशक, बली, उद्यमी, सत्वरहित, सत्य स्नेहकर्ता, शास्त्र रचयिता, निष्कल्पगुणज्ञ, सर्व आत्मा, अनेक कार्य कर्ता, सुन्दर प्रेमी।।890।। सुखदाता, लघुरूपधारी, सुन्दर भुजा वाले, दक्षिण पवनरूप, नंदी एवं स्कन्द के धारक

सर्वत्र प्रकट होने वाले, प्रीतिवर्धक, किसी से न हारने वाले, सहन करने में समर्थ।।900।।

गौओं के स्वामी, सच्ची सवारी वाले, किसी के आश्रय पर न रहने वाले, अपने गौरव पर निर्भर, पूर्ण पवित्ररूप, यशरूप धन वाले, वाराह के दंतरूप, सींग वाले, बल एवम् सेना वाले, सर्पों के नेता।।910।। वेद प्रकाशक, वैद्यरूप, जगत् के बन्धु, अनेकों रूप धारने वाले, विष्णु के कल्याण के आरम्भ, सज्जन कल्याणकर्ता, समान यशस्वी, भूशायी, सबके शृंगार, सभी की सम्पत्ति।।920।। जीवों को रचने वाले, जीवों को बढ़ाने वाले, अचल, भक्तों जैसे शरीर वाले, काल को क्षीण करने वाले, कलानाथ, सत्यव्रती महात्यागी, सदा शान्तरूप, धन तथा अजीविका दाता, भण्डारी।।930।। रोगादि रहित, चतुर शुभकर्ता, सुन्दर कामधारी, शुभरूप, चाहना रहित, संसारदृष्टा, अकर्ता, गुणग्रहणकर्ता, स्वर्ण समान सुन्दर, मंगलरूप, मध्यस्थ, न्यायकर्ता।।940।। शीघ्रगामी, शीघ्रतानाशक, शिखाकवच, त्रिशूलधारक, जटाधारी, बालों के कुण्डलों में सर्पधारी, सदा अमर रहने वाले, समदृष्टि प्रकाशमय, मणिस्वरूप, गणनारहित, अपरिमित शरीर, परमपराक्रमी, ज्ञेय।।950।। विशिष्ठ योगीवर, अपर मुनिजन स्वामी, सबसे उत्तम कोमल एवं प्रिय शरीर धारी, देव स्वामी, ध्यान के योग्य, समस्त शब्दरूप, श्रेष्ठ तपस्वी, सहायक समय, काल के भी काल।।960।। शुभकर्ता, वासुकी सर्प के रचयिता, उत्तम धनुष धारक, पृथ्वी धारण करने वाले, सफल साधना सिद्धदाता, मायायुक्त, विशाल छाती वाले।।970।। विशाल भुजाधारी, संसार के कर्ता, संताप रहित, नर नारायण के प्रेमी, निर्लेप, मायारहित वशिष्ट अंगों वाले, व्याधाओं के नाशक, स्तुतिमय स्तुति से प्रसन्न

होने वाले।।980।। स्तुति के योग्य, सर्वव्यापक, व्याकुलता रहित, निरवधस्वरूप, मुक्तिदाता, विद्याओं के भण्डार, उत्तम कर्मकर्ता, शांत बुद्धि, अपराजित, संग्रहकर्ता, सर्वसुंदर।।990।। व्याघ्र चर्मधारी, पृथ्वी स्वामी, साकलीऋषि रूप, रात्रि के स्वामी, परमार्थ रूप, मुक्ति के गुरु, भक्तजन अर्पित भेंटों को स्वीकार करने वाले, शरणागत रक्षक, विद्वानों पर दयालु, पार्वतीजी के साथ रहने वाले, रस के स्वादज्ञाता, वीर्यदाता, समस्त सत्व के आश्रित, भगवान शंकर, सदाशिव।।1000।। मेरी रक्षा करो।

शास्त्रों का कथन है कि जगत् पालक भगवान विष्णु ने सबसे पहले इस सहस्त्रनाम द्वारा शिवजी की आराधना की थी और प्रत्येक नाम के उच्चारण के साथ एक-एक कमल पुष्प शिवजी को अर्पित किया था। इससे प्रसन्न होकर आशुतोष भगवान शिवशंकर ने साक्षात् प्रकट होकर विष्णु भगवान को सुदर्शन चक्र और अभय का वरदान दिया था। भगवान शिव ने साथ ही यह भी कहा है कि जो व्यक्ति प्रातःकाल मेरा पूजन करने के बाद इस सहस्त्रनाम का नियमपूर्वक खड़े होकर स्तवन करेगा उसे सभी सिद्धियाँ और मेरी विशेष कृपाएं प्राप्त होंगी। व्यवहारिक रूप में इस शिव सहस्त्रनामावलि का नियमित स्तवन सभी पापों का हरण करने वाला, दैहिक-दैविक तापों से रक्षक, सुख-समृद्धि-प्रदायक, हरि-चरणों में प्रीतिवर्धक और इस कलिकाल में मोक्ष प्रदान करने का सबसे सुगम मार्ग है। इसका नियमित पाठ जहाँ उपासकों एवं साधकों की साधना का एक प्रमुख अंग है, वहीं सामान्य गृहस्थ भी नियमित रूप से इसका पाठ करके अपने हृदय और मन को परम पवित्र कर सकते हैं। भक्तवत्सल भगवान शिवजी की विशेष कृपाओं की प्राप्ति और उनके चरणों में ध्यान अवस्थित करने के लिए कीजिए इस सहस्त्रनाम का नियमित पाठ और फिर स्वयं देखिए इसका कमाल।

☆✻☆

10

शिवाष्टक, चालीसे व साठिका

हम भगवान शिव की आराधना-उपासना करें अथवा अन्य किसी देवी-देवता की सेवा-आराधना, ईश्वर के निराकार रूप की वंदना की जाए अथवा मानसिक उपासना, सामान्य रूप से पूजा की जाए अथवा मंत्रों का जप, आराध्य देव के प्रति भक्तिभाव-वर्द्धन और उनके रूप-स्वरूप की झांकी हृदय में बसाने में सबसे महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा करता है आराध्य देव के चालीसे का आधिकाधिक गायन। भजन, आरती, विनती, अष्टक और स्तोत्र का मिला-जुला रूप होता है चालीसा, क्योंकि इनमें आराध्य देव के स्वरूप और जीवन-चरित की झांकी के साथ-साथ उनकी कृपाओं, शक्तियों, गुणों और विशिष्ट क्रियाकलापों का वर्णन भी होता है। सुगम से सुगम शब्द, आसान छन्द और प्रवाहपूर्ण भाषा चालीसों और साठिकाओं की सबसे बड़ी विशेषता होती है और शीघ्र कण्ठस्थ हो जाना सबसे बड़ा गुण। संस्कृत भाषा में जो महत्व स्तोत्रों और कवचों का है, वही महत्व हिन्दी भाषा में इन अष्टकों, चालीसों और साठिकाओं का है।

अनन्त हैं भगवान शिव और असीम हैं उनकी कृपाएं। यही कारण है कि अन्य देवों के समान एक नहीं, कई चालीसे हैं भगवान भोलेशंकर के और साथ ही साठ पंक्तियों की एक साठिका भी। भगवान शिव के चरणों में मन को बसाने, भक्तिभाववर्द्धन तथा मन मन्दिर में प्रभु की मूरत बसाने में तो इन चालीसों और साठिका का नियमित पाठ सबसे महत्वपूर्ण भूमिका अदा करेगा ही, कोई कष्ट, बाधा अथवा भय उपस्थित हो जाने पर रामबाण

औषधि का कार्य करता है शिवजी के चालीसों का पाठ। सबसे बड़ी बात तो यह है कि आराधना, उपासना और मूर्ति पूजा के प्रारम्भ, मध्य अथवा अन्त में तो आप इनका सस्वर गायन करेंगे ही, दिन या रात में किसी भी समय, कहीं पर कभी भी इनका पाठ या गायन किया जा सकता है। यह आवश्यक नहीं कि आलथी-पालथी मारकर इनका उच्च स्वर में ही गायन या पाठ किया जाय, आप काम करते-करते भी इनका मन-ही-मन सतत् पाठ कर सकते हैं।

श्री शिवसाठिका

।।चौपाइयाँ।।

जय जय जय शंकर जग बन्दन, अस्तुति करत शेष श्रुति छन्दन।।
जय कैलाशपति सुर स्वामी, कर सम्पुट शत बार नमामी।।
कुन्द कपूर गौर सुन्दर तन, चिता भस्म लेपत प्रसन्न मन।।
पिंगल जटा जूट मन लोभित, कोटिन तडित कांति सम शोभित।।
करत कलोल जटन बिच गंगा, कटत पाप लखि शुभ्र तरंगा।।
दिपत ललाट बाल रजनीशा, देख त्रिपुंड जाहिं अघ खीशा।।
शुचि कपोल अहि कुण्डल काना, मुख छबि शतशशि शरद समाना।।
बिकट भ्रकुटि छबि कहि नहिं जाई, कोटि काम-धनु देख लजाई।।
अरुन कमल सम जन दुखमोचन, रवि शशि अग्नि सुत त्रय लोचन।।
शुक निंदक नासा सुहावनी, अधर झलक विद्रूप लजावनी।।
कुन्द कली सम दशनन पांती, हीरा ज्योति थकी सब भांती।।
प्रिय बोलन मृदु हास सुहावन, सुधा झरत जनु भक्त जियावन।।
चिबुक गाढ़ उपमा अस आई, बैठि महा छबि विवर बनाई।।
नील कंठ महिमा अति तोरी, वरणि सकत नहिं कल्प करोरी।।
जा विष ज्वाल जरत जगतीतल, भइ तेहि कंठ सुधासम शीतल।।

बृषभ कंध पन्नग उपवीतम्, उर आयत सब भांति पुनीतम्।।
सोह वक्ष बन मुंडन माला, भूषण भांति सजे उर व्याला।
नाग सुंड भुज जन सुभाग के, कलित कड़े कयूर नाग के।।
तरुण जलज सम पाणि सुहाये, हाथ त्रिशूल डमरू छवि छाये।।
छत्रवली उदर नाभि सुघड़ाई, जनु सुरसरि भंवर गहराई।।
कटि तट फवत सुअहि लंगोटा, ललित सुडौल जंघ की जोटा।।
तरुण तामरस चरण ललाई, जावक जपा कुसुम सकुचाई।।
वट तरु दिव्य नाग रिपु छाला, शोभित पद्मासन शशि भाला।।
राजत बाम भाग जगदम्बा, जाकी कृपा सृष्टि अवलम्बा।।
चारण सिद्ध यक्ष मुनि किन्नर, पूजत पद सरोज मंगल कर।।
कोटिन गण चरणन रखवारे, नंदी वीरभद्र बल भारे।
जय शिव देव देव जग धाता, षट् मुख गणपति हनुमत ताता।।
जय वैराग्य सरोज दिवाकर, जय अनवद्य अजित जोगेश्वर।।
तव माया सब सृष्टि पसारा, उत्पति थित लय भृकुटि अधारा।
तव आज्ञा फणीश धर धरणी, शशि रस श्रवत तपत हैं तरणी।।
पवन वरुण धनेश सुरराजा, तव आयसु लगि निज-निज काजा।।
देवन दुख जब दुष्टन दयेऊ, हरेउ असुर सुर रक्षक भयेऊ।।
अन्धक दैत्य तुम्हन संहारा। एकहि बाण त्रिपुर हनिडारा।।
मारेउ जलन्धर संग्रामा, दहेउ ललाट नैन सों कामा।।
दक्ष विचारेउ तव अपमाना, यज्ञ विध्वंस कीन्ह जग जाना।।
अति बलवान गजासुर योधा, तुम्हरे कोप मृत्यु मुख शोधा।।
जब कृतान्तकर प्रलय प्रकाशा, होइय तुरत सृष्टि कर नाशा।।
उग्ररूप होइ कोप सुतक्षण, तुमहीं करहु काल का भक्षण।।
शूल नोंक दिग दिग्गज छेदी, नृत्यत महा प्रलय नि भेदी।।

अति विचित्र विभु कौतुक तोरे, तुम सम अगम न तुम सम भोरे॥
ओढ़े तन गज चर्म पुरारी, काशी वीथिन बीच बिहारी॥
एक बार तव लिंग शरीरा, ढूंढ़न गयेउ विष्णु विधि धीरा॥
अतल रसातल वितल तलातल, सोधेउ सुतल पाताल महातल॥
भू भुव स्व महजन तप सत्यं, लखि सर्वत्र रुद्र अधिपत्यं॥
शम्भु लिंग तिन पार न पावा, थके विष्णु विधि पद सिर नावा॥
राम तुम्हें जब पूजि निहोरा, दीन्ह अशीष लंक गढ़ तोरा॥
कागभुसुण्डि जपेउ धरि ध्याना, पायेउ अमर तत्व दृढ़ ज्ञाना॥
द्वापर भारत युद्ध भयउ जब, कृष्ण पार्थ कैलाश गयउ तब॥
अर्जुन पद प्रणाम तव कीन्हा, दिव्य सुअस्त्र विजय कहि दीन्ह॥
विष्णु एकदिन सहस कमलसों, पूजेउ तुम अति प्रेम अमलसों॥
तब कौतुक एक पद्म छिपाएउ, घट्यो जानि हरि नयन चढ़ाएउ॥
देख प्रेम मिलि हरहिं भुजनगहि, अजयचक्र दियो कमलनयन कहि॥
तुमहि भजेउ भागीरथ राजा, राखी गंग कीन्ह तेहि काजा॥
तुम जप नृप पद पावें रंकू, मेटहु द्विज कुल कठिन कलंकू॥
नर तन धरि तव भजन न कीन्हा, वृथा जन्म जननिहि दुख दीन्हा॥
शोक रोग भय कुग्रह कुयंत्रू, व्याधि नसाहिं जपत शिवमंत्रू॥
गाव जो अस्तुति आरति हर की, पाव सुपुत्र भक्ति शंकर की॥
परिय न कबहूँ अगम भवकूपहिं, मिलिय अंत शुचिशम्भु स्वरूपहिं॥
जो शिव प्रिय पाठक सुपाठिका, लहें परम सुख पढ़त साठिका॥
संत सुजन पद शीश नवाऊँ, क्षमहु चूक शंकर बलि जाऊं॥

दोहा– उमानाथ, जगनाथ, ममनाथ, सुभोलानाथ।
'शान्त' चहे करकमल की, छांह सदा निजमाथ ॥1॥

श्री शिव चालीसा

दोहा– जय गणेश गिरिजा सुवन, मंगलमूल सुजान ।
श्रीशिव चालीसा पढ़हुँ, देहु अभय वरदान ॥

॥ चौपाइयाँ ॥

जय गिरिजापति दीनदयाला। सदा करत सन्तन प्रतिपाला॥
भाल चन्द्रमा सोहत नीके। कानन कुण्डल नागफनी के॥
अंग गौर सिर गंग बहाये। मुण्डमाल तन क्षार लगाए॥
वस्त्र खाल बाघम्बर सोहैं। छवि को देखि नाग मुनि मोहैं॥
कर त्रिशूल सोहत छवि भारी। करत सदा शत्रुन क्षयकारी॥
मैना मातु कि हवे दुलारी। वाम अंग सोहत छवि न्यारी॥
नंदि गणेश सोह तहँ कैसे। सागर मध्य कमल हैं जैसे॥
स्वामि कार्तिक और गण राऊ। जिनकी छवि कहि जात न काऊ॥
देवन जबहिं जाइ पुकारा। तबहिं दुःख प्रभु आपु निवारा॥
कीन्ह उपद्रव तारक भारी। सब देवता मिलि तुमहिं जुहारी॥
तुरत षडानन आप पठायेउ। लव निमेष महं मारि गिरायेउ॥
आपु जलंधर असुर संहारा। सुयश तुम्हार विदित संसारा॥
त्रिपुरासुर सन युद्ध मचाई। तबहिं कृपा कर लीन्ह बचाई॥
भागीरथ कीन्हेउ तप भारी। पुरण प्रतिज्ञा तासु पुरारी॥
दानिन मँह तुम सम कोउ नाहीं। सेवक अस्तुति करत सदाहीं॥
वेद माँहि महिमा तव गाई। अकथ अनादि भेद नहिं पाई॥
प्रगटी उदधि मथन महँ ज्वाला। जरत सुरासुर भये बिहाला॥
कीन्ह दया तहँ करी सहाई। नीलकंठ तब नाम कहाई॥
पूजन रामचंद्र जब कीन्हा। जीती लंक विभीषण दीन्हा॥
सहस कमल पूजा उर धारी। लीन्ह परीक्षा तबहिं पुरारी॥

एक कमल प्रभु राखेउ गोई। कमलनयन पूजन चह सोई॥
कठिन भक्ति देखी प्रभु शंकर। भये प्रसन्न दीन्ह इच्छित वर॥
जय जय जय अनन्त अविनाशी। करत कृपा घट-घट के वासी॥
दुष्ट सकल नित मोहि सतावैं। भ्रमत रहहुँ मोहिं चैन न आवैं॥
त्राहि त्राहि मैं नाथ पुकारहुँ। यहि अवसर मोहि आनि उबारहु॥
लै त्रिशूल शत्रुन कहँ मारहु। संकट ते मोहिं आपु उबारहु॥
मात - पिता भ्राता सब होई। संकट में पूछत नहिं कोई॥
स्वामी एक है आस तुम्हारी। आय हरहु मम संकट भारी॥
धन निर्धन को देत सदाहीं। जो कोई याचहिं सो फल पाहीं॥
अस्तुति केहि विधि करहुँ तुम्हारी। छिमहु नाथ अब चूक हमारी॥
होउ स्वामी संकट के नासन। विघ्न बिनासन मंगल कारन॥
जोगी जती मुनी नितु ध्यांवहिं। नारद सारद सीस नवावहिं॥
नमो नमो जय नमः शिवाये। सुरब्रह्मादिक पार न पाये॥
जो यह पाठ करै मन लाई। ता कहँ शंकर होहिं सहाई॥
धन इच्छा करि धन पति पावै। यश कामना पूर्ण हुई जावै॥
पुत्रहीन की इच्छा जोई। शिवप्रसाद ते निश्चय होई॥
पण्डित त्रयोदशी को .लावै। ध्यान सहित पुनि होम करावै॥
त्रयोदशी व्रत करहि हमेशा। ता कहं तनिक न रहै कलेशा॥
शंकर सम्मुख पाठ सुनावै। मनक्रम वचन हिं ध्यान लगावै॥
जन्म जन्म के पाप नसावै। अन्तवास शिवपुर में पावै॥
शरणागत प्रभु आस तुम्हारी। पीड़ा हरहु महेश हमारी॥

दोहा– नित्य नेम उठि प्रातः ही, पाठ करै चालीसा।
ताकी सबमनकामना, पूर्ण करैं गौरीश ॥1॥
शिवचालीसा यहसुखद, चारि पदारथ देय।
पाठ करै सो भव तरै, जग यश पावनलेय ॥2॥

श्री शिवाष्टक

आदि अनादि अनंत अखंड, अभेद अखेद सुवेद बतावैं।
अलख अगोचर रूप महेश को, जोगि जती-मुनि ध्यान न लगावैं।
आगम-निगम-पुरान सबै इतिहास, सदा जिनके गुन गावैं।
बडभागी नर-नारी सोई जो सांब-सदाशिव कौं नित ध्यावैं।।

सृजन-सुपालन-लय-लीलाहित, जो, विधि-हरि-हर-रूप बनावैं।
एकहि आप विचित्र अनेक, सुवेष बनाइकै लीला रचावैं।
सुन्दर सृष्टि सुपालन करि जग, पुनि बन काल जु खाय पचावैं।
बडभागी नरनारि सोई जो, साब-सदाशिव कौं नित ध्यावैं।।

अगुन अनीह अनामय अज, अविकार सहज निज रूप धरावैं।
परम सुरम्य बसन-आभूषन, सजि मुनि-मोहन रूप करावैं।
ललित ललाट बाल विधु विलसै, रतन-हार उर पै लहरावैं।
बडभागी नरनारी सोई जो, सांब-सदाशिव कौ नित ध्यावैं।।

अंग विभूति रमाय मसान की, विषमय भुजगनि कौं लपटावैं।
नर-कपाल कर, मुण्डमाल गल, भालु-चरम सब अंग उढावैं।
घोर दिगंबर, लोचन तीन, भयानक देखि कै सब थर्रावैं।
बडभागी नरनारि सोई जो, सांब-सदाशिव कौं नित ध्यावैं।।

सुनतहि दीन की दीन पुकार, दयानिधि आप उबारन आवैं।
पहुंच तहाँ अविलम्ब सुदारून, मृत्यु को मर्म बिदारि भगावैं।
मुनि मृकंडु-सुत की गाथा सुचि, अजहूं विज्ञजन गाई सुनावैं।
बडभागी नरनारि सोई जो, सांब-सदाशिव कौं नित ध्यावैं।।

चाउर चारि को फूल धतूरे के, बेल के पात और पानि चढावैं।
गाल बजाय के बोले जो, हर-हर महादेव धुनि जोर उचारे।

तिनहि महाफल देंय सदाशिव, सहजहि भुक्ति-मुक्ति सो पावैं।
बडभागी नरनारि सोई जो, सांब-सदाशिव कौं नित ध्यावैं॥

बिनसि दोष दुख दुरति दारिद्रयं, नित्य सुख-शांति दिलावैं।
आशुतोष हर पाप-ताप सब, निरमल बुद्धि-चित्त विकसावैं।
असुरन-सरन काटि भवबंधन, भव निज भवन भव्य बुलवावैं।
भड़भागी नरनारि सोई जो, सांब-सदाशिव कौं नित ध्यावैं॥

औढ़रदानी, उदार अपार जु, नैकु-सी सेवा तें ढुरि जावैं।
दमन अशांति, समन संकट, बिरद विचार जनहिं अपनावैं।
ऐसे कृपालु कृपामय देव के, क्यों न सरन अबहिं चलि जावैं।
बड़भागी नरनारि सोई जो, सांब-सदाशिव कौं नित ध्यावैं॥

शिवजी का दूसरा चालीसा

दोहे– अज अनादि अविगत अलख, अकल अतुल अविकार।
बंदौ शिव-पद-कमल, अमल अतीव उदार ॥1॥
आर्तिहरण सुखकरण शुभ, भक्ति-मुक्ति-दातार।
करौ अनुग्रह दीन लखि, अपनो विरद विचार ॥2॥
परयो पतित भवकूपमहं, सहज नरक आगार।
सहज सुहृद पावन-पतित, सहजहि लेहु उबार ॥3॥
पलक-पलक आशा भर्यो, रह्यो सु-बाट निहार।
डरौ तुरंत स्वभाववश, नेकु न करौ अबार ॥4॥

।।चौपाइयाँ।।

जय शिवशंकर औढरदानी। जय गिरितनया मातु भवानी।
सर्वोत्तमं योगी योगेश्वर। सर्वलोक-ईश्वर-परमेश्वर।
सब उर-प्रेरक सर्वनियन्ता। उपद्रष्टा भर्ता अनुमन्ता।

पराशक्ति-पति अखिलविश्वपति। परब्रह्म परधान परमगति।
सर्वातीत अव्यय सर्वगत। निज स्वरूप महिमा मे स्थितरत।
अंगभूति - भूषित श्मशानचर। भुजंगभूषण चन्द्र मुकुटधर।
वृषवाहन नंदीगण नायक। अखिल विश्व के भाग्यविधायक।
व्याघ्रचर्म परिधान मनोहर। रीछचर्म ओढे गिरिजावर।
कर त्रिशूल डमरूवर राजत। अभय वरद मुद्रा शुभ लाजत।
तनु कर्पूर-गौर उज्ज्वलतम। पिंगल जटाजूट सिर उत्तम।
भाल त्रिपुण्ड मुण्डमालाधर। गल रुद्राक्ष माल शोभाकर।
विधि-हरि-रुद्र त्रिविध वपुधारी। बने सृजन-पालन-लयकारी।
तुम हो प्रभु दया के सागर। आशुतोष आनन्द उजागर।
अति दयालु भोले भण्डारी। अग-जग सबके मंगलकारी।
सती-पार्वती के प्राणेश्वर। स्कन्ध-गनेश-जनक-शिव सुखकर।
हरि-हर एक रूप गुणशीला। करत स्वामि-सेवक की लीला।
रहते दोउ पूजत पुजवावत। पूजा-पद्धति सबन्हि सिखावत।
मारुति बन हरि-सेवा कीन्ही। रामेश्वर बन सेवा लीन्ही।
जग-हित घोर हलाहल पीकर। बने सदा शिव नीलकंठ वर।
असुरासुर शुचि वरद शुभंकर। असुर निहन्ता प्रभु प्रलयंकर।
'नमः शिवाय' मन्त्र पंचाक्षर। जपत मिटत सब क्लेश भयंकर।
जो नर-नारि रटत शिव-शिवनित। तिनको शिव प्रभु करत परम हित।
श्रीकृष्ण तप कीन्हो भारी। ह्वै प्रसन्न वर दियो पुरारी।
अर्जुन संग लड़े किरात बन। दियो पाशुपत-अस्त्र मुदित मन।
भक्तन के सब कष्ट निवारे। दे निज भक्ति सबहिं उद्धारे।
शंखचूड जालन्धर मारे। दैत्य असंख्य प्राण हर तारे।

अन्धक को गणपति पद दीन्हों। शुक्र-शुक्रपथ बाहर कीन्हो।
तेहि संजीवनि विद्या दीन्हीं। वाणासुर गणपति-गति कीन्हीं।
अष्टमूर्ति पंचानन चिन्मय। द्वादश ज्योतिर्लिंग ज्योतिर्मय।
भुवन चतुर्दश व्यापक रूपा। अकथ अचिन्त्य असीम अनूपा।
काशी मरत जंतु अवलोकी। देत मुक्ति पद करत अशोकी।
भक्त भगीरथ की रुचि राखी। जटा बसी गंगा सुर साखी।
गुरु अगस्त्य उपमन्यू ज्ञानी। ऋषि दधीचि आदिक विज्ञानी।
शिवरहस्य शिवज्ञान प्रचारक। शिवहिं परम् प्रिय लोकोद्धारक।
इनके शुभ सुमिरन तें शंकर। देत मुदित ह्वै अति दुर्लभ वर।
अति उदार करुणा वरुणालय। हरण दैन्य दारिद्रय दुःख भय।
तुम्हरो भजन परम हितकारी। विप्र शूद्र सब ही अधिकारी।
बालक वृद्ध नारि-नर ध्यावहिं। ते अलभ्य शिवपद को पावहिं।
भेदशून्य तुम सब के स्वामी। सहज सुहृद सेवक अनुगामी।
जो जन शरण तुम्हारी आवत। सकल दुरित तत्काल नशावत।

॥दोहे॥

वहन करौ तुम शीलवश, निज जनको सब भार।
गनौ न अघ, अघ-जाति कछु, सब विधि करौ संभार ॥1॥
तुम्हरो शील स्वभाव लखि, जो न शरण तव होय।
तेहि सम कुटिल कुबुद्धिजन, नहिं कुभाग्य जन कोय ॥2॥
दीन-हीन अति मलिन मति, मैं अघ-ओघ अपार।
कृपा-अनल प्रगटौ तुरत, करौ पाप सब छार ॥3॥
कृपा-सुधा बरसाय पुनि, शीतल करौ पवित्र।
राखौ पदकमलनि सदा, हे! कुपात्र के मित्र! ॥4॥

☆

11

आरतियाँ, विनितियाँ और स्तुतियाँ

हम भगवान शिव की सामान्य रूप से पूजा करें अथवा षोडशोपचार आराधना, शिवलिंग की पूजा-आराधना करें अथवा उनके महादेव रूप प्रतिमा की, हमारी सेवा-पूजा का समापान आरती गायन से ही होगा। यह सत्य है कि मन-मन्दिर में छवि बसाकर भावलोक में जब हम भगवान शिव की मानसिक उपासना अथवा विशिष्ट प्रयोजन हेतु मन्त्रों का जप या कोई तान्त्रिक साधना करते हैं तब स्थूल रूप में न तो आरती का दीप जलाते हैं और न ही किसी विग्रह अथवा चित्र का प्रयोग करते हैं। इस अवस्था में आरती का विशेष मंत्र पढ़कर ही भावलोक में कर ली जाती है अपने आराध्य देव की आरती। परन्तु मानसिक उपासना और तन्त्र साधना करते समय भी भजनों, विनतियों और आरतियों के गायन का निषेध नहीं। भावलोक में भक्त की पूजा-अर्चना को स्वीकार करने के लिए पधारे प्रभु के यशोगान का सशक्त माध्यम तो ये आरतियाँ हैं ही, प्रभु के रूप-स्वरूप, उनकी कृपाओं और सन्देशों का गायन भी आरतियों के माध्यम से होता है। साथ ही भक्त अपने मन के भावों का प्रकटीकरण तथा प्रभु से अपने लिए भक्ति, वैराग्य और अन्त समय में मुक्ति की मांग भी विनितयों, भजनों और आरतियों के माध्यम से करता है। यही कराण है कि पूजा-अर्चना, आराधना-उपासना के अन्तिम चरण में

आरतियों का गायन समवेत स्वर में तो किया ही जाता है, सामूहिक रूप में विग्रह-पूजन के पश्चात गायन के साथ-साथ घण्टे-घड़ियाल, झांझ, मजीरे आदि वाद्ययंत्र भी बजाए जाते हैं।

आप भगवान के जिस रूप-स्वरूप को मन-मन्दिर में बसाकर पूज रहे हैं उस रूप की आरतियों का गायन तो करेंगे ही, जितना आधिकाधिक आरतियों का गायन किया जाए कम है, क्योंकि गायनकर्त्ता के साथ-साथ उन व्यक्तियों का भी कल्याण होता है जिनके कानों में ये शब्द पड़ते हैं, और साथ ही सम्पूर्ण वातावरण में बहने लगती है भक्ति की अविरल धारा। कुछ व्यक्ति भगवान की मूर्ति, चित्र अथवा शिवलिंग के चारों ओर दीपक घुमाने को ही आरती कहते और समझते हैं, परन्तु वह दीप मात्र माध्यम है, वास्तविक आरती तो वह है जो आप तन्मय होकर गाते हैं। अन्य देवताओं के विपरीत शिवजी की आरती और पूजा में शंख नहीं बजाया जाता, जबकि डमरू और चंग को विशेष स्थान प्राप्त है। शिवजी की विशेष प्रसन्नता हेतु आरती के मध्य बम-बम और बम-बम भोले का जयघोष तथा गाल बजाने का भी विशिष्ट विधान है। आरती के लिए आप एक, पांच, सात अथवा ग्यारह बत्तियों के दीपक का प्रयोग कर सकते हैं, परन्तु दो, चार, छह जैसी सम और तीन, नौ, तेरह जैसी अशुभ संख्याओं का प्रयोग वर्जित है। सबसे बड़ी बात तो यह है कि आप इन आरतियों का गायन भजनों के रूप में भी कर सकते है, तो अधिकांश विनतियों और भजनों का उपयोग आरतियों के रूप में भी।

आरती गौरीशंकर की

जय गौरीशंकर, ॐ जय गौरीशंकर,
जय जय जय जय जय जय भोले शंकर।
जगकारण, जगपालक, हो विनाश कर्ता,
निज जन के रखवारे जय गौरीशंकर।

आशुतोष हो भगवन् और उदार दाता,
तनिक मात्र पूजा से हो प्रसन्न शंकर।
हो निरीह अविकारी, भक्ति-मुक्ति-दाता,
तुम समान नहिं दानी और दुख से त्राता।
अग्रगण्य ज्ञानी तुम राम-भक्ति-दाता,
मेरे सब कुछ तुम्हीं गुरु-पितु और माता।
हो समर्थ हे स्वामी, महादेव नामा,
जो जन शरण आयो, पूरे सब कामा।
गंगाधर योगेश्वर जय जय त्रिपुरारी,
अघहारी कामारी, भक्तन दुखहारी।
सुर-गुरु परम दयालू, काशी के वासी,
काम-क्रोध-भव-नाशी जय जय अविनाशी।
महिमा अपरम्पारा, पार नहीं पाऊँ,
गिरा ज्ञान गोतीता, कैसे गुण गाऊँ।
श्री बैजनाथ, रामेश्वर, हे कैलाशपति,
प्रणवाक्षर में शोभित देते तुम सुगति।
अघनाशी, अविनाशी, पाप हरो देवा,
राम-भक्ति मोहि दीजै, और अपनी सेवा।
तीनो ताप मिटाओ, हे त्रिशूलधारी,
निर्मल ज्ञान सिखाओ, जय जय अघहारी।
मैं आलसी, प्रमादी, कुछ नहिं बनि आवे,
दया करो हे भगवन्, बाधा मिट जावे।
मन के फंद छुडाओ, त्राहि त्राहि शंकर,
यम-यातना ना पाऊँ जय जय जय शंकर।

कैलासवासी की स्तुति

शीश गंग अर्धंग पार्वती, सदा विराजत कैलासी।।
नन्दी भृंगी नृत्य करत हैं, धरत ध्यान सब सुखरासी।।
शीतल मन्द सुगन्ध पवनबहे, बैठे हैं शिव अविनाशी।।
करत गान गन्धर्व सप्त स्वर, राग रागिनी मधुरासी।।
यक्ष-रक्ष भैरव जहं डोलत, बोलत हैं बन के वासी।।
कोयल शब्द सुनावत सुन्दर, भ्रमर करत हैं गुंजासी।।
कल्पद्रुम अरु पारजात तरु, लाग रहे हैं लक्षासी।।
कामधेनु कोटिन जहं डोलत, करत दुग्ध की वर्षासी।।
सूर्यकान्त सम पर्वत शोभित, चन्द्रकान्त सम हिमरासी।।
नित्य छहों ऋतु रहत सुशोभित, सेवत सदा प्रकृति दासी।।
ऋषि-मुनि देव-दनुज नितसेवत, गान करत श्रुति गुणरासी।।
ब्रह्मा-विष्णु निहारत निसिदिन, कछु शिव हमकूं फरमासी।।
ऋद्धि-सिद्धि के दाता शंकर, नित सत चित् आनन्दराशी।।
जिनके सुमिरत ही कट जाती, कठिन काल-यमकी फांसी।।
त्रिशूलधरजी का नामनिरन्तर, प्रेम सहित जो नर गासी।।
दूर होय विपदा उस नर की, जन्म जन्म शिवपद पासी।।
कैलाशी काशी के वासी, अविनासी मेरी सुध लीजो।।
सेवक जान सदा चरनन को, अपनो जान कृपा कीजो।।
तुम तो प्रभु जी सदादयामय, अवगुण मेरे सब ढकियो।।
सब अपराध क्षमा करशंकर, किंकर की विनती सुनियो।।

आरती भगवान भोलेनाथ की

अभयदान दीजै दयालु प्रभु, सकल सृष्टि के हितकारी।
भोलेनाथ भक्त दुख गंजन, भवभंजन शुभ सुखकारी।।
दीन दयालु कृपालु कालरिपु, अलखनिरंजन शिव योगी।
मंगल रूप अनूप छबीले, अखिल भुवन के तुम भोगी।।
वाम अंग अति रंगरस-भीने, उमा-वदन की छवि न्यारी।
भोलेनाथ......।।

असुर निकन्दन सब दुख भंजन, वेद बखाने जग जाने।
रुण्डमाल गल-व्याल भाल-शशि, नीलकंठ शोभा साने।
गंगाधर त्रिशूलधर विषधर, बाघम्बरधर गिरिचारी।
भोलेनाथ......।।

यह भवसागर अति अगाध है, पार उतर कैसे बूझै।
ग्राह मगर बहु कच्छप छाये, मार्ग कहो कैसे सूझै।।
नाम तुम्हारा नौका निर्मल तुम केवट शिव अधिकारी।
भोलेनाथ......।।

मैं जानूं तुम सद्‌गुण-सागर, अवगुण मेरे सब हरियो।
किंकर की विनती सुन स्वामी, सब अपराध क्षमा करियो।
तुम तो सकल विश्व के स्वामी, मैं हूं प्राणी संसारी।।
भोलेनाथ......।।

काम क्रोध-लोभ अति दारुण, इनपे मेरो वश नाहीं।
द्रोह-मोह-मद संग न छोड़ें, आन देत नहिं तव ताहीं।।
क्षुधा-तृष्वा नित लगी रहत है, बढ़ी विषय तृष्णा भारी।
भोलेनाथ......।।

तुम ही शिवजी कर्ता-भर्ता, तुम ही जग के रखवारे।
तुम ही गगन मगन पुनि पृथ्वी, पर्वत-पुत्री के प्यारे।।
तुम ही पावन हुताशन शिवजी, तुम ही रवि शशि तमहारी।
भोलेनाथ......।।

पशुपति अजर अमर अमरेश्वर, योगेश्वर शिव गोस्वामी।
वृषभारुढ गुढ़ गुरु गिरिपति, गिरिजावल्लभ निष्कामी।।
सुषमासागर रूप उजागर, गावत हैं सब नरनारी।
भोलेनाथ......।।
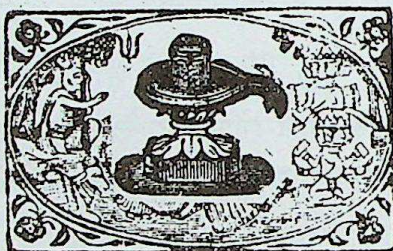
महादेव देवों के अधिपति, फणिपति-भूषण अति साजै।
दीप्त ललाट दोउ लोचन उर आनत ही दुख भाजै।।
परम प्रसिद्ध पुनीत पुरातन, महिमा त्रिभुवन-विस्तारी।
भोलेनाथ......।।

ब्रह्मा-विष्णु-महेश-शेष-मुनि नारद आदि करत सेवा।
सब की इच्छा पूरन करते, नाथ सनातन हर देवा।।
भक्ति-मुक्ति के दाता शंकर, नित्य निरन्तर सुखकारी।
भोलेनाथ......।।

महिमा इष्ट महेश्वर की जो, सीखे सुने नित्य गावे।
अष्टसिद्धि नवनिधि सुखसम्पत्ति, स्वामीभक्ति मुक्ति पावे।।
श्री अहिभूषण प्रसन्न होकर, कृपा कीजिए त्रिपुरारी।
भोलेनाथ......।।

साम्बशंकर की आरती

आरति परम साम्ब - शंकर की।
सत्य सनातन शिव शुभकर की।।

आदि, अनादि, अनन्त, अनामय।
अज, अविनाशी, अकल, कलामय।
सर्वरहित नित सर्व-उरलय।
मस्तक सुरसरिधर शशिधर की।
आरति परम साम्ब-शंकर की।

कर्ता भर्ता जगसंहारी।
ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र तनुधारी।
सर्व विकार रूप अविकारी।
अग-जग-पालक प्रलयंकर की।
आरति परम साम्ब-शंकर की।

विश्वातीत विश्वगत स्वामी।
द्रष्टा साक्षी अन्तार्यामी।
काम-काल सब-जग-हित-कामी।
अनघ-स्वरूप सकल अघहर की।
आरति परम साम्ब-शंकर की।

मुनि-मन-हरण मधुर शुचि सुन्दर।
अति कमनीय रूप सुषमावर।
दिव्याम्बर रत्नाभूषणधर।
सर्व-नयन-मन-हर सुखकर की।
आरति परम साम्ब-शंकर की।

विकट कराल पंचमुखधारी।
मुण्डमाल विषधर भयकारी।
हाथ कपाल श्मशान-विहारी।
वेष अमंगल मंगलकर की।
आरति परम् साम्ब-शंकर की।

भोगी, योगी ध्यानी ज्ञानी।
जग - अभिमानाधर अमानी।
आशुतोष अति औढ़दानी।
दैन्य - दुरति - दुर्गतिहर हर की।
आरति परम साम्ब-शंकर की।

शिव जी की आरती

जय शिव ओंकारा, भज शिव ओंकारा ।
ब्रह्मा विष्णु सदाशिव अर्द्धंगी धारा ।।
ॐ हर हर हर महादेव ।।
एकानन चतुरानन पंचानन राजै ।
हंसानन गरुड़ासन वृषवाहन साजै ।।
ॐ हर हर हर महादेव ।।
दो भुज चारु चतुर्भुज दशभुज अति सोहै ।
तीनों रूप निरखते त्रिभुवन मन मोहै ।।
ॐ हर हर हर महादेव ।।

अक्षयमाला बनमाला रुण्डमाला धारी ।
चंदन मृगमद लेपन भोले शुभकारी ॥
ॐ हर हर हर महादेव ॥

पार्वती पर्वत में बसती शिवजी कैलाशा ।
आक धतूरा का भोजन, भंग में है बासा ॥
ॐ हर हर हर महादेघ ॥

हाथों में कंगन कानों में कुण्डल गल मुण्डमाला ।
जटा मृदंग विराजे ओढ़े मृगछाला ॥
ॐ हर हर हर महादेव ॥

श्वेताम्बर पीताम्बर बाघाम्बर अंगे ।
सनकादिक ब्रह्मादिक भूतादिक संगे ॥
ॐ हर हर हर महादेव ॥

कर मध्ये कमण्डलु चक्र त्रिशूल धारी ।
जगकर्ता जगभर्ता जग पालनकारी ॥
ॐ हर हर हर महादेव ॥

ब्रह्मा विष्णु सदाशिव ध्यावत अविवेका ।
प्रणावाक्षर के मध्ये ये तीनो एका ॥
ॐ हर हर हर महादेव ॥

काशी में विश्वनाथ विराजत नन्दी ब्रह्मचारी ।
नित उठ भोग लगावत महिमा अति भारी ॥
ॐ हर हर हर महादेव ॥

त्रिगुण स्वामी की आरती जो कोई नर गावै ।
भनत शिवानन्द स्वामी मनवांछित फल पावै ॥
ॐ हर हर हर महादेव ॥

प्रभु राखो लाज हमारी

हे कैलाश के वासी, राखो लाज हमारी ।
मैं दुखिया शरण तिहारी। हे कैलाश के ......

यह पापी दुनिया मुझे बहुत सताये।
कदम कदम पर बहु नाच नचाये।
कर्मों की गति न्यारी। हे कैलाश के......

टूट रही है स्वासों की वीणा।
मुश्किल है इस भीषण दुख में जीना।
सुध बुध सब है बिसारी। हे कैलाश के......

काम क्रोध मद लोभ ने सताया।
मन को मेरे बहुत सताया।
है जीवन बाजी हारी। हे कैलाश के......

अपने डमरू की झंकार सुना दो।
प्रभु अन्त समय में दर्श दिखा दो।
मैं चरण तेरे बलिहारी। हे कैलाश के......

12

शिवजी के भजन एवं गीत

नागों को आभूषण और बाघाम्बर को पीताम्बर के समान धारण करने वाले चन्द्रमोलि आशुतोष भगवान शिव के हाथ में डमरू हर समय रहता है। भगवान शिव नृत्य और संगीत के परम रसिक देव ही नहीं, डमरू और मृदंग जैसे वाद्ययंत्रों के आविष्कारक भी हैं। लास्यनृत्य से लेकर विध्वंसकारी ताण्डव नृत्य तक में आप न केवल सिद्धहस्त हैं, वरन् मस्ती में डमरू बजाते हुए मृदंग की थाप पर लास्य एवं अन्य कल्याणकारी नृत्य करना आपका सहज स्वभाव है। आपके लास्यनृत्य और डमरू की मधुर ताल से सृष्टि की उत्पत्ति और पालन होता है, तो क्रोध में भरकर ताण्डव नृत्य करने पर प्रलय। यही नहीं; संगीत के सभी स्वर और देवनागरी लिपि की सभी ध्वनियाँ और अक्षर भी आपके डमरू की तान से ही निकले हैं। रावण को स्वर्ण निर्मित लंका, नाभि में अमृतकुण्ड और शीश कट जाने पर उसी समय नया शीश उत्पन्न हो जाने का वरदान आपने दशानन के नृत्य पर प्रसन्न होकर ही दिया था। जो महादेव संगीत के ऐसे प्रवल रसिया और प्रवर्तक हैं, वह गीत-संगीत की महफिल में स्वयं उपास्थित न हो जाएं यह हो ही नहीं सकता।

प्राचीन काल से ही हमारे ऋषि-मुनि मंत्रों, स्तोत्रों, अष्टकों और कवचों के गायन द्वारा भगवान भोले शंकर को रिझाते रहे हैं। आज भी सर्वधिक

औघड़दानी की महिमा

दुनिया को खूब लुटाया है, मस्ती में इस भण्डारी ने।
मन इच्छित सबने पाया है, पूजा करके हर नर नारी ने॥
ब्रह्मा को स्वर व वेद दिया, शास्त्रों का बनाया अधिकारी।
विष्णु को चक्र सुदर्शन दे, किया अवतारों का अवतारी।
कुछ पास नहीं अपने रक्खा, मस्ती में इस भण्डारी ने॥
कामधेनु हाथ थमा करके, दिया बना इन्द्र को बलकारी।
कुबेर को दे रिद्धि-सिद्धि, कर दिया जगत् का भण्डारी।
शमशानों में जा बास किया, मस्ती में इस भण्डारी ने॥
श्री रामचन्द्र को धनुषबाण, चरणों में भक्त महावीर दिये।
श्रीकृष्ण को राधा संग मुरली, महाभारत में रणधीर दिये।
भक्ति में प्रेम को दर्शाया, मस्ती में इस भण्डारी ने॥
सागर मन्थन से जो निकला, सब देवों को मन से बांटा।
अमृत की गागर पिलवा कर, जो बचा हलाहल वो छांटा।
बन नीलकण्ठ विषपान किया, मस्ती में इस भण्डारी ने॥
भागीरथ को गंगा देकर, पुण्य तीर्थ बनवा डाला।
स्नान सहित जो ध्यान करे, ब्रह्म ज्ञान उसे ही दे डाला।
गंगा को शीश पे धार लिया, मस्ती में इस भण्डारी ने॥
रच विश्वनाथ के मन्दिर को, काशी को मुक्तिधाम किया।
गौरा को कथा सुना कर शुभ, अमरनाथ का नाम दिया।
शुकदेव का भी कल्याण किया, मस्ती में इस भण्डारी ने॥

नारद को दी सुन्दर वीणा, तीनों लोकों में गानों को।
योगी को डमरू कण्ठदान दिये, लीला कथा सुनाने को।
दिया कर्मकाण्ड ब्राह्मण को, मस्ती में इस भण्डारी ने।।
सन्यासी को दे दी माला, नित प्रभुनाम को जपने को।
गृहस्थों को दे दी जन सेवा, भवसागर पार उतरने को।
कवियों को कविता दान दिया, मस्ती में इस भण्डारी ने।
दुनिया को खूब लुटाया है, मस्ती में इस भण्डारी ने।।

शिवजी मस्ती में रहते हैं

आक धतूरा खाकर शिवजी, मस्ती में हैं रहते।
डिम-डिम डमरू शब्द गुंजाकर, उमा निकट जा कहते।
ओम हर हर-ओम हर हर।।

पर्वत पर्वत ढूंढ ढूंढ कर, ब्रह्मा बूटी लाये।
विष्णु चलकर देवलोक से, तभी पीसने आये।
त्रिशूल बन गया सोटा, खप्पर हो गया लोटा।
पार्वती चुन्नी ले छाने, प्रेम से सब पी कहते।।
ओम हर हर..........

कार्तिकेय गणेश ने मिलकर, देवों को बुलवाया।
शिवचौदस का यह मधुर दिन, याद सभी को आया।।
पशु पक्षी जलचर चौपाये, नदियाँ झरने आये।
सारे करके शिव की पूजा, मस्ती में यह कहते।।
ओम हर हर......

शिव नृत्य करें मिल शिवगण, पार्वती मुस्कातीं।
भंग का इक-इक घूंट प्रेम से, सबको हैं पिलवातीं।।
चौंसठ योगिनी आईं, नारद वीणा आन बजाई।
बूटी की लहरों में सभी, बम बम भोला कहते।।
ओम हर हर.......

बुंदियाँ पड़ने लगीं

शिव शंकर चले कैलाश, बुंदिया पड़ने लगीं।
गौरा जी ने बो दी हरी हरी मेंहदी।
शिवशंकर ने बो दी भांग, बुंदिया पड़ने लगीं।। शिव०
गौरा जी ने सींच दी अपनी हरी हरी मेंहदी।
शिवशंकर ने सींच दी भांग, बुंदिया पड़ने लगीं।। शिव०
गौरा जी ने निलालई हरी हरी मेंहदी।
शिव शंकर ने निलालइ भांग, बुंदिया पड़ने लगीं।। शिव०
गौरा जी ने काट ली हरी हरी मेंहदी।
शिवशंकर ने काट ली भांग, बुंदिया पड़ने लगी। शिव०
गौरा जी ने पीस ली हरी हरी मेंहदी।
शिवशंकर ने घोंट ली भांग , बुंदिया पड़ने लगीं।। शिव०
गौरा जी ने रचा ली हरी हरी मेंहदी।
शिवशंकर ने पी ली भांग, बुंदिया पड़ने लगीं।। शिव०

भक्त की कातर पुकार

तेरे चरणों मैं शिव आ गया हूँ।
झूठी दुनिया से ठुकराया गया हूँ।।

मुझको अपनों ने दी है दगा।
मोहमाया में मैं भरमा गया हूँ॥ तेरे...
जोत जीवन की बुझने लगी है।
जग अन्धेरा अभी से छा गया है॥ तेरे...
सुनता आया हूँ महिमा तेरी मैं।
ठोकरें खाता अब आ गया हूँ॥ तेरे...
कांटों की राह पर चला जीवन भर।
फूल जीवन का मुरझा गया है॥ तेरे...
मन्जिलें राहों में खो गई हैं।
ढूंढता तेरे दर पे आ गया है॥ तेरे...

रक्षा हेतु प्रार्थना

हे करुणा के सागर शरण तेरी आये।
करो नाथ रक्षा जगत से सताये॥
मेरे मन को भाता है कैलाश पर्वत।
जहाँ बैठे रघुवर से लौ को लगाये॥
गले सर्प माला है तन पर बाघाम्बर।
जनेऊ शेषनागों का काला बनाये॥
सुहाती है गंगा मस्तक पै सुन्दर।
दमकता जटाओं में चन्दा है भाए॥
योगिनी प्रेत नन्दी सदा साथ रहते।
करे नृत्य तांडव प्रलय जब है आये॥
दया हम पे रखना हे सृष्टि के दाता।
तेरा दास तेरे है गुणगान गाए॥

ओ! डमरूवाले

तेरे नाम का हुआ मतवाला।
ओ डमरू वाले करदे दया...तेरे नाम का...।
अमरनाथ की घाटी पर तू नजर न आया।
न जाने किस पर्वत पै जा भोले ध्यान लगाया।।
जपू ओम् नमः शिवाय की माला ओ डमरूवाले।
डिमक डिम डिमक डिम डिम डमरू सुना दे।।
सोयी मेरी वीणा मन की भक्ति भाव जगा दे।
पीऊँ भक्ति भरा भंग प्याला... ओ डमरू वाले।।
करे जागरण शिव चौदस तो हर चिंता मिट जाये।
भक्तिभाव से झूमझूम कर तेरे ही गुण गाये।
बेलपत्र संग आक घतूरा लस्सी दूध चढ़ाये।।
उसके मन में कर दे उजाला..ओ डमरू वाले।

शंकर तेरी जटा में

शंकर तेरी जटा में बहती है गंग धारा।
काली घटा में जैसे चमके कोई सितारा।।
गल मुण्डों की माला सोहे, सुन्दर रूप मनोहर मोहे।
डिम डिम बजाके डमरू, हर गंगे है उचारा।।शंकर.....
तीन नेत्र भय हरने वाले, भक्तों का हित करनेवाले।
माँ गिरजा है संग में, हो विश्व के आधारा।।शंकर.....
आक घतूरा तुम को भावे, नन्दीगण आनन्द करावे।
मैं भी हूँ शरण में तेरी, दर्शन का है सहारा।।शंकर...

भजन रूप में विनय

झाकीं उमा महेश की, आठों पहर किया करूँ।
नैनों के पात्र में सुधा, भर भर के मैं पिया करूँ।।

वाराणसी का वास हो, और न कोई पास हो।
गिरजापति के नाम का सुमरन भजन किया करूँ।।

जयति जय महेश हे! जयति नन्दकेश है!
जयति जय उमेश हे! प्रेम से मैं जपा करूँ।।

अम्बा कहीं श्रमित न हों, सेवा का भार मुझको दो।
जी भरके तुम पिया करो, घोट के मैं दिया करूँ।।

जी में तुम्हारी है लगन, खींचते है उधर व्यसन।
हरदम चलायमान मन, इसका उपाय क्या करूँ।।

भिक्षा में नाथ दीजिये, अपनी शरण में लीजिये।
ऐसा प्रबन्ध कीजिये, सेवा में मैं रहा करूँ।।

तुम तो जगत् के नाथ हो, सब पे दया का हाथ हो।
मैं ही निराश हूँ प्रभो! द्वार से क्यों फिरा करूँ।।

बेकल हूं नाथ रात दिन, चैन नहीं त्रिपुरारि बिन।
दास तो सब्र कर भी ले, दिल का इलाज क्या करूँ।।

झिझंरी नैया मेरी जब, मंझधार में ही आ पड़ी।
पतवार लेना हाथ में, बेकल मैं जब हुआ करूँ।।

झगड़े जगत के छोड़कर, तेरी शरण में आया हूँ मैं।
भगवत भजन में मैं सदा, अलमस्त ही रहा करूँ।।

शिव नमस्कार का भजन

शिवशंकर भोले भाले, तुमको लाखों प्रणाम।
कैलाश बसाने वाले, तुमको लाखों प्रणाम।।

जटा जूट सिर ऊपर साजे, डम्-डम् डम् डम् डमरू बाजे।
चन्द्रमा मस्तक पर राजे, वाम भागे शिवा विराजे।।
गल भुजंग हैं काले, तुमको लाखों प्रणाम।। शिव०।।

शीश पै सोहे गंग की धारा, महिमा तुम्हरी अगम अपारा।
जय महेश जय भवभय हारा, जय करुणासागर करतारा।।
भस्म रमाने वाले, तुमको लाखों प्रणाम।। शिव०।।

रुद्र माल गले भुजंग माला, कर त्रिशूल सोहे करताला।
जयदेव जय जयित कृपाला, नीलकंठ कटि में मृगछाला।।
कानन कुण्डल डाले, तुमको लाखों प्रणाम।। शिव०।।

बृषभ वाहन अंग विभूता, देवन के देव निर्गुण रूपा।
निगम अगम शान्ति सरूपा, त्रयलोचन त्रिपुरारि अनूपा।।
कष्ट मिटाने वाले, तुमको लाखों प्रणाम ।। शिव०।।

शिवनाथ जय जय शिवशंकर, केदारनाथ करुणा के सागर।
बमबम भोले जय हर हर, निराकार करुणा के सागर।।
भक्तों को अपना लो तुमको लाखों प्रणाम।। शिव०।।

13

शिवजी के विशिष्ट मन्त्र

सम्पूर्ण संसार की नहीं इस अखिल ब्रह्माण्ड के एक मात्र कारक, संचालक और स्वामी हैं भगवान शिव। संसार की उत्पत्ति, पालन-पोषण और अन्त में मुक्ति का आधार तो भगवान् भोले शंकार हैं ही, प्रलयकाल में सभी जीवों ने ही नहीं, इस अखण्ड ब्रह्माण्ड और देवताओं ने भी उसी अजर-अमर ज्योतिर्लिंग में समा जाना है। लौकिक हो अथवा अलौकिक या फिर आवागमन से मुक्ति की कामना, वह कौन-सा कार्य है जिसे भगवान शिव पूरा नहीं कर सकते। सच्चे हृदय से की गई किसी भी प्रार्थना को भगवान आशुतोष तुरन्त सुन लेते हैं और भक्त की श्रद्धा, भावना और कामना के अनुरूप देते हैं उसे फल। आप अपने आराध्यदेव भगवान् शिव-शंकर से ये प्रार्थनाएं भजनों, आरतियों, विनतियों के रूप में भी कर सकते हैं और मन-ही-मन मूक रहकर भी। भोले भण्डारी भगवान् शिव तो घट-घट वासी हैं, अतः आप उनसे किस भाषा में और किस रूप में प्रार्थना करते हैं इससे उनको कोई अन्तर नहीं पड़ता। परन्तु जहाँ तक प्राचीन धर्मग्रन्थों और धार्मिक मान्यताओं का प्रश्न है, आराधना-उपासना से भी शीघ्र फलदायक माना गया है भगवान शिव के किसी भी मन्त्र के नियमित जप को।

तन्त्र साधना का आधार स्तम्भ तो मन्त्रों का निश्चित संख्या में पूर्ण विधिविधान-पूर्वक जप और अन्त में मन्त्र संख्या का दसवां भाग आहुतियाँ हैं ही, मानसिक उपासना करने वाले उपासक भी उपासना के अन्त में भगवान

भोलेशंकर के किसी-न-किसी मन्त्र का जप करते ही हैं। मूर्तिपूजा में जो महत्व आरतियों और भजनों के गायन का है, उसी प्रकार मानसिक उपासना का एक अविभाज्य अंग है अन्तिम चरण में शिवजी के किसी मन्त्र की कम-से-कम एक माला जपना। वैसे यह सीमा कम-से-कम के लिए है, अधिकतम की तो कोई सीमा ही नहीं। उपासना के बाद किसी भी मन्त्र का जितना अधिक जप किया जाए उतना ही कम है। यही नहीं, शिव चालीसे और भजनों एवं आरतियों के समान ही आप दिन में भी मन-ही-मन इन मन्त्रों का जप करते रहें, परम् प्रसन्न होंगे भगवान् शिव।

शिवजी के चुने हुए मन्त्र

मन्त्रों का जप भगवान भोले शंकर की प्रसन्नता, उनसे भक्ति और मुक्ति की मांग तथा किसी विशेष प्रयोजन की आपूर्ति हेतु तो किया ही जाता है, विशेष प्रयोजन की आपूर्ति हेतु मन्त्र विशेष का उसकी निर्धारित संख्या में विधि-विधानपूर्वक जप भी किया जाता है। इस प्रकार के विशेष प्रयोजनों हेतु शिवजी के अनेक विशिष्ट मन्त्र तो हैं ही, वैसे शिवजी का सबसे आसान, सभी कामनाओं की आपूर्ति में समर्थ और मोक्ष प्रदायक मन्त्र है—

ॐ नमः शिवाय

यह छह अक्षर का वेदमन्त्र मन्त्र है, जिसमें भगवान शिव को नमन किया गया है। उपासना के अन्त में तो इस मन्त्र का जप किया ही जाता है, मन्दिरों में पूजा करते और शिवलिंग पर जल चढ़ाते समय भी प्रायः आराधक इस मन्त्र का स्तवन करते रहते हैं। इस मन्त्र का बड़ी संख्या में जप करते समय प्रायः ही इसके प्रणव 'ॐ' को हटाकर नमः शिवाय के रूप में भी जपते हैं।

शिवतराय:- नमः शिवाय की तरह यह भी पांच अक्षर का मन्त्र है और उसी के समान हर प्रकार के कार्यों को सिद्ध करने वाला भी।

मयस्कराय:– पांच अक्षर के इस मन्त्र का जप विशेष रूप से भक्तिभाव वर्द्धन और कल्याण प्राप्त हेतु किया जाता है।

नमस्ते शंकराय:– भगवान शिव को नमस्कार है भाव वाला यह मन्त्र भक्ति और मुक्ति प्रदाता कहा गया है।

ॐ नमो रुद्राय:– शिवजी के रुद्र रूप को नमस्कार का यह मन्त्र हर प्रकार की पीड़ाओं, पापों और रोग-शोकों को दूर करने वाला कहा गया है।

ॐ नम: शिवतराय:– मंगल प्रदायक कल्याणकारी शिव के सोम्यरूप का यह मन्त्र हर प्रकार की लौकिक और अलौकिक सिद्धियाँ देने वाला है।

ॐ नमोनारायणाय:– आठ अक्षर का यह मन्त्र पारब्रह्म परमात्मा को सम्बोधित है और इसीलिए शिव भक्तों के साथ-साथ विष्णु उपासक भी इसका जप करते हैं।

मन्त्र शक्ति का रहस्य

शिवलिंग तथा शिवजी एवं अन्य देवों की प्रतिमाएं उनका स्थूल प्रारूप है तो आगामी अध्याय में वर्णित यन्त्र देवों की शक्ति का प्रतीक, परन्तु मन्त्र तो ईश्वर का अगोचर-अक्षर रूप ही है। शास्त्रों में स्थान-स्थान पर कहा गया है कि 'मन्त्रों में ईश्वर और देवता निवास करते हैं, और वह भी अपने पूर्ण जीवन्त रूप में। प्राचीन काल में तो इतना अधिक महत्व प्राप्त था इन मन्त्रों को कि तपस्वी जहाँ वर्षों तक बिना हिले-डुले ईश्वर के किसी नाम अथवा मन्त्र का सतत् जप करते रहते थे, वहीं सामान्य साधक भी घण्टों तक करते थे अपने उपास्यदेव के किसी-न-किसी मन्त्र का घण्टों तक पूर्ण तन्मन्यता के साथ मन-ही-मन जप। हमारे सभी धर्मग्रन्थ इस बारे में एक मत हैं कि मन्त्रों का सच्चे हृदय से जप करने वाले साधक से सभी देवी-देवता प्रसन्न तो रहते ही हैं, उपास्य देव के साक्षात दर्शन भी उसे प्राप्त हो सकते हैं। भगवान भोले शंकर तो परम दयालु

है अतः उनके मन्त्र का जप करने वाला साधक न केवल भगवान शिव की विशेष कृपाएं, उनकी अविचल भक्ति और सभी लौकिक व अलौकिक सिद्धियां प्राप्त करता, बल्कि अन्त में उसे शिवलोक में स्थान भी प्राप्त हो सकता है। प्राचीन काल में द्रौपदी के आह्वान पर भगवान् कृष्ण का समय-समय पर उपस्थित हो जाना और कुन्ती के बुलावे पर सूर्यदेव, धर्मराज, यमराज तथा इन्द्र आदि का आना और उसे पुत्र प्रदान करना, उनकी मन्त्र साधनाओं का ही कमाल था।

चेतना, मन व मस्तिक पर प्रभाव

निर्मल मन, हृदय की पवित्रता और सभी कार्यों को ईश्वर का आदेश समझकर करना तथा उनसे प्राप्त फलों को प्रभु की कृपा मानकर स्वीकार करना धर्म का मर्म है और मुक्ति का मार्ग भी। यों तो भजन-पूजा, जप-तप, आराधना-उपासना अर्थात सभी धार्मिक क्रिया-कलाप मन की शक्ति को बढ़ाने, मनोविकारों को नष्ट करने और जीवन में शुचिता का संचार करने में महत्वपूर्ण भूमिका निबाहते हैं, परन्तु मन्त्रों के जप का तो कोई जवाब ही नहीं। मानव शरीर में मन, मस्तिष्क और हृदय के अतिरिक्त भी चेतना के कई केन्द्र हैं। चेतना के ये विभिन्न केन्द्र चेतना के विभिन्न स्तरों को प्रकट करते हैं। यही कारण है कि ज्ञानीजन शारीरिक चेतन्य से अधिक महत्व मानसिक चेतन्य को देते हैं और सर्वाधिक महत्व देते हैं हृदय अर्थात् आत्मा के चेतन्य को। जब हमारी चेतना—सीधी-सादी भाषा में मन की प्रवृत्तियां और ध्यान—नीचे के स्तरों पर केन्द्रित होती है, तब हमारे हृदय को क्रोध, मोह, लालच, भय, ईर्ष्या आदि विकार घेर लेते हैं। लम्बे समय तक यह स्थिति रहने पर शरीर अस्वस्थ-सा रहने लगता है और मन अशान्त। धीरे-धीरे स्थिति यह हो जाती है कि किसी मानसिक कार्य में तो हमारा मन लगता ही नहीं, शारीरिक कार्य भी भली-भांति नहीं कर पाते। इस प्रकार जप-तप अथवा आराधना-उपासना तो हम कर ही नहीं पाते, सांसारिक कार्यों

का भी सफल सम्पादन नहीं हो पाता। इसके विपरीत ईश्वर की कृपा और अपने प्रयासों से जब हमारी चेतना नीचे के केन्द्रों को छोड़कर ऊपर की ओर केन्द्रित होने लगती है, तब मन में शान्ति, हृदय में दिव्य भावों का उदय और मस्तिष्क में क्रियाशीलता का संचार होने लगता है। इस अवस्था में हमारी आत्मा का सम्बन्ध जीवन के सूक्ष्म तथा शक्तिशाली तत्त्वों से जुड़ जाता है और परस्पर सौहार्द, जीवमात्र के प्रति प्रेम तथा मानसिक संतोष जैसे गुण हमारे अन्दर स्वयं ही विकसित होने लग जाते हैं। इस अवस्था के पूर्ण विकसित हो जाने पर हमारे कार्य-व्यवहारों में पवित्रता, नम्रता और दृढ़ता तो आ ही जाती है, बहुत ही अधिक बढ़ जाती है हमारी मानसिक शक्तियाँ एवं आत्मबल। यह बढ़ा हुआ आत्मबल, मानसिक शान्ति और चैतन्य मस्तिष्क एक ओर जहाँ हमें अपने लौकिक कर्मों के सफल सम्पादन की क्षमता प्रदान करता है, वहीं दिन प्रतिदिन दृढ़तर होती जाती है भगवान शिव के प्रति हमारी भक्ति।

स्थान एवं समय का चुनाव

उपासना और मन्त्रों का जप पूर्णरूपेण मानसिक प्रक्रियाएं हैं, अतः सामूहिक रूप में अथवा मन्दिर आदि में तो इन्हें करने की कल्पना भी नहीं की जा सकती। इन कार्यों के लिए प्रातःकाल ब्रह्म-मुहुर्त का समय सर्वश्रेष्ठ रहता है, क्योंकि उस समय के शान्त वातावरण में मन आसानी से एकाग्र हो जाता है। जहाँ तक जप के लिए स्थान के चुनाव का प्रश्न है लिंग पुराण के अनुसार घर में किए गए जप का फल साधारण होता है, तो नदी तट पर किये जप का फल अनन्त होता है। पवित्र आश्रमों, देवालयों, पर्वत-शिखर पर, बाग-बगीचे में अथवा समुद्र तट पर यह लाभ करोड़ गुना हो जाता है। ध्रुव तारे या सूर्य के अभिमुख होकर और गौ, अग्नि, दीपक या जल के सामने जप करने का फल भी श्रेष्ठ माना गया है। घर में जप करते समय साधना स्थल को पूर्णतय स्वच्छ व सात्त्विक

रखने पर विशेष ध्यान देना चाहिए। किसी भी पालतू पशु अथवा हिंसक, तामसिक और नास्तिक प्रवृत्ति के दुष्ट व्यक्ति को जप स्थल के पास नहीं आने देना चाहिए। भगवान शिव तथा अन्य देवी-देवताओं के चित्र एवं प्रेरणाप्रद वाक्यों से लिखे पटल और धार्मिक पुस्तकें तथा चित्र जहाँ मन में सात्त्विक प्रवृत्तियों का उदय करते हैं, वहीं गंदे और उत्तेजक कलेण्डर मन की चंचलता और कलुष में वृद्धि करते हैं। आप शिवजी की उपासना करें या आराधना, मन्त्रों का सामान्य रूप से जप करें अथवा कोई भी तांत्रिक साधना, तन-मन और स्थान की पवित्रता एक महत्त्वपूर्ण भूमिका निबाहती है आपकी साधना की सफलता में।

आसन, माला एवं अन्य उपादान

हम एक सामान्य गृहस्थ हैं अतः उपासना एवं मन्त्रों का जप घर में ही करेंगे और वह भी ऊनी कम्बल, सामान्य कपड़े अथवा कुशा के आसन पर बैठकर। परन्तु तान्त्रिक साधनाओं और यन्त्र-मन्त्र सिद्धि के लिए अथवा किसी विशेष प्रयोजन हेतु पूर्ण विधि-विधानपूर्वक कई हजार अथवा लाखों की संख्या में मन्त्र-जप करते समय, उससे प्राप्त होने वाले फलों और साधना की सफलता में वह आसन जिस पर बैठकर आप जप करते हैं तथा प्रयोग की जाने वाली माला भी एक महत्वपूर्ण भूमिका निबाहती हैं। शिवजी की उपासना और मन्त्रों के जप हेतु मृगछाला और व्याघ्रचर्म के आसन सबसे शीघ्र सिद्धि प्रदायक होते हैं, परन्तु सद्‌गृहस्थों के लिए उनका प्रयोग अधिक उचित नहीं। आपके लिए कम्बल, मोटे कपड़े या कुशा घास से निर्मित सात्विक आसन ही अधिक उचित रहेंगे। बिना किसी आसन के भूमि पर अथवा चारपाई पर बैठकर मन्त्र जप का भी शास्त्र निषेध करते हैं। जहाँ तक एक सौ आठ मनकों वाली माला का प्रश्न है वह तो जप का अनिवार्य उपादान है ही। तन्त्रसार नामक प्राचीन पुस्तक के अनुसार अंगुलियों पर मन्त्र-जप साधारण, पुत्र जीवा की माला से दस गुना,

छोटे-छोटे शंखों से बनी माला से सौ गुना, मूंगे से हजार गुना, मणि और रत्नों तथा स्फटिक की माला से दस हजार गुना, मोती की माला से लाख गुना, सोने की माला से करोड़ गुना, कुश ग्रन्थि की माला से अरब गुना और रुद्राक्ष की माला से जप करने पर अनन्त गुना लाभ होता है। कालिका पुराण में मूंगे की माला को पुत्रदाता और समस्त पापों का विनाश करने वाली बतलाया गया है। जहाँ तक भगवान् शिव के मन्त्रों और उनके नाम के जप का प्रश्न है सबसे श्रेष्ठ रहता है रुद्राक्ष की माला और कुश के आसन का प्रयोग। रुद्राक्ष तो शिवजी को परमप्रिय है, वे स्वयं भी रुद्राक्ष की मालाएं धारण करते हैं और चाहते हैं कि उनका भक्त भी रुद्राक्ष की माला धारण करे।

स्तवन की गति एवं ध्वनि सीमा

आराधना-उपासना करते समय भगवान् के ध्यान और उन्हें विविध वस्तुएं अर्पित करने के मन्त्रों का स्तवन किया जाए अथवा शिवजी के किसी मन्त्र का जप, मुख्य महत्त्व भावना और तन्मयता का है। इसके साथ ही यह भी नितान्त आवश्यक है कि आप जिस मन्त्र का स्तवन अथवा जप कर रहे हैं उसके भावों का सतत् चिन्तन भी आपके मन में होता रहे। यही कारण है कि मन्त्रों का स्तवन न तो इतनी मन्द गति से करना चाहिए कि तन्द्रा ही आने लग जाए, और न ही इतनी तीव्र गति से कि हम मन्त्र का स्तवन तो करते रहें परन्तु उसके भाव और अभिप्रायः का चिन्तन भी न कर पाएं। यही कारण है कि आराधना-उपासना की जाए अथवा कोई तान्त्रिक साधना या फिर नियमित रूप से किसी मन्त्र का जप, पहले उस मन्त्र का भाव-हृदय में बसा लेना और उसका अर्थ समझ लेना आवश्यक ही नहीं अनिवार्य है। यही कारण है कि आराधना-उपासना, भजन और मन्त्रों के जप में शीघ्रता उचित नहीं, मन्त्र के भाव को हृदय में उतारते और उसके अभिप्राय को समझते हुए स्तवन करना ही उचित है।

जहाँ तक जप करते समय शब्दों के उच्चारण में ध्वनि की तीव्रता का प्रश्न है शास्त्रों में इसके तीन भेद बतलाए गए हैं।

वाचिक जप:– भजन-कीर्तन और आरतियाँ तो उच्च स्वरों में की जाती हैं, परन्तु जप तो मन-ही-मन में करना श्रेयस्कर है। जब जप करते समय मन्त्रों का उच्चारण इतने तीव्र स्वरों में होता है कि ध्वनि जप करने वाले के कानों में भी पड़ती रहे, तब वह वाचिक जप कहलाता है।

उपांशु जप:– जब जप करते समय ध्वनि तो बाहर न निकले, परन्तु आपके जीभ और होंठ हिलते रहें तब इसे उपांशु जप कहा जाएगा। इसमें देखने वाले को आपके ओष्ठ हिलते हुए तो दृष्टिगोचर होते हैं, परन्तु कोई शब्द सुनाई नहीं पड़ता।

मानस जप:– इसमें किसी प्रकार का स्वर तो निकलता ही नहीं, आपके ओष्ठ तो क्या जीभ तक नहीं हिलती। जपकर्ता मन-ही-मन दोहराता है मन्त्र को। इस अवस्था में आप आँखें बन्द करके शिवजी से अपने आपको एकाकार अनुभव करते हुए मन में ही मन्त्र दोहराते रहते हैं, अतः देखने वाले को लगता है कि आप शायद बैठे-बैठे ही सो गये हों।

हमारे शास्त्रों में मानस जप को सर्वश्रेष्ठ बतलाया गया है और उपांशु जप को मध्यम स्तरीय। जहाँ तक वाचिक जप का प्रश्न है वह मानस जप की प्रथम सीढ़ी तो हो सकता है, परन्तु पूर्ण फल-प्रदायक मानस जप तो क्या, उपांशु से भी हीन ही माना गया है। वैसे भी मन्त्रों का जप हो अथवा उपासना, इनको करते समय मुँह से आवाज तो निकलनी ही नहीं चाहिए, ओष्ठ और शरीर का कोई भी अवयव न हिले यही उचित है।

मन्त्र जागरण तथा वाच्य शक्ति

स्वयं चुने गए मन्त्र से गुरु द्वारा प्रदत्त् 'गुरु-मन्त्र' अधिक सिद्ध प्रदायक होता है क्योंकि एक कुशल गुरु अपने शिष्य को कोई मन्त्र देते समय

उसे जाग्रत भी कर देता है। मन्त्र जागरण कोई विशिष्ट प्रक्रिया अथवा धार्मिक अनुष्ठान या पूजा-पाठ नहीं है, बल्कि एक मानसिक प्रक्रिया है। आप अपने द्वारा जपे जाने वाले मन्त्रों को स्वयं भी जाग्रत कर सकते हैं, क्योंकि मन्त्र जागरण का अर्थ है मन्त्र के अभिप्राय और अर्थ को अच्छी तरह समझ कर उस मन्त्र के देवता से अपना पूर्ण तादम्य स्थापित कर लेना। किसी भी मन्त्र को शुद्ध रूप में रट लेने, उसका भाव और अर्थ समझ लेने और फिर अन्मयस्क भाव से उसे रटते या दोहराते रहने से ही मन्त्र जाग्रत नहीं हो जाता। इसके लिए हमें निरन्तर भगवान शिव की आराधना-उपासना और उस मन्त्र का जप करना ही होगा। शास्त्र कहते हैं कि मन्त्रों में दो प्रकार की शक्तियां होती हैं—वाच्य शक्ति और वाचक शक्ति। वाचक शक्ति तो मन्त्र का शरीर है और वाच्य शक्ति उसकी आत्मा। मन्त्र के शब्द उसकी वाचक शक्ति हैं और मन्त्र जप में प्रयोग किये जाने वाले उपादान—चित्र या विग्रह, यन्त्र, माला आदि—इस वाचक शक्ति को बढ़ाने के साधन। परन्तु जहाँ तक मन्त्र की वाच्य शक्ति और उससे प्राप्त होने वाले फलों की प्राप्ति का प्रश्न है—इसमें तो सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण भूमिका निबाहती है आपकी भावना, एकाग्रता और भगवान शिव पर आपकी दृढ़ आस्था। यद्यपि इन दोनों ही शक्तियों का महत्त्व है, वाचक शक्ति (मन्त्र के शरीर) और वाच्य शक्ति (उस मन्त्र की आत्मा या चैतन्य) दोनों ही महत्त्वपूर्ण हैं, परन्तु मुख्य महत्त्व तो आत्मा का ही होता है शरीर तो माध्यम मात्र है। यही कारण है कि आप भगवान् भोले शंकर की मानसिक उपासना करें अथवा मन्त्रों का जप, मुख्य महत्त्व अपकी आस्था और भावना का है, ब्राह्य उपादान कम या अधिक होने से मन्त्रों की सिद्धि पर कोई अन्तर नहीं पड़ता।

भजन के समान ही मन्त्रों का जप भी एक सीधी-सादी प्रक्रिया है और उपासना के समान ही किसी अन्य वस्तु की आवश्यकता भी नहीं होती सामान्य रूप से मन्त्रों का जप करते समय। उपासना के समान ही शिखा (चोटी) खोलकर, सिर पर पगड़ी, पैर में जूते अथवा पश्चिमी परिधान

पहन कर जप करने का शास्त्र निषेध करते हैं। इसी प्रकार क्रोधित मन से, व्यग्रता अथवा अधीरता की मनोस्थिति में, भावना शून्य होकर अथवा अनमनस्कता पूर्वक भी जप करने का कोई लाभ नहीं। यहाँ विशेष ध्यान रखने की एक बात यह भी है कि उपासना के एक अंग के रूप में, उपासना के अन्तिम चरण में जब हम किसी मन्त्र का जप करते हैं तब तो उपासना का अन्तिम मंत्र स्तवन करते ही प्रारम्भ कर दिया जाता है उसी आसन पर उस मन्त्र विशेष का माला लेकर जप। परन्तु जब किसी मन्त्र का स्वतन्त्र रूप से बड़ी मात्रा में जप किया जाता है तब पहले तो उपासना के समान ही सातवें अध्याय में वर्णित भगवान् शिवजी के ध्यान और आसन समर्पण तक की सभी प्रक्रियाएं पूर्ण की जाती हैं और मन-मन्दिर में भगवान शिव की मधुर झांकी बसाकर किया जाता है उस मन्त्र का जप।

जहाँ तक व्यावहारिकता का प्रश्न है विशिष्ट प्रयोजन की सिद्धि हेतु बड़ी संख्या में मन्त्रों का जप करते समय सिद्धहस्त उपासक भगवान शिव का कोई यन्त्र भी अपने सम्मुख रख लेते हैं। यन्त्र सम्मुख रखकर मन्त्र का जप करने पर आपकी साधना और भी अधिक प्रभावशाली हो जाती है, जबकि तान्त्रिक साधनाओं में तो यन्त्र के साथ-साथ अन्य अनेक वस्तुओं का उपयोग भी होता है। आइए इस बारे में आधारभूत जानकारियों के लिए अवलोकन करें आगामी अध्याय का।

14

यंत्र-सिद्धि एवं तंत्र साधनाएं

हनुमानजी, भैरवदेव, महाशक्ति दुर्गा और शिवजी के आराधक-उपासक प्रायः ही समर्थ और सिद्धहस्त उपासक बनने के बाद तंत्र साधना के क्षेत्र में अपने कदम बढ़ा देते हैं। कारण स्पष्ट है। पूजा-आराधना, यहाँ तक कि मानसिक उपासना से भी शीघ्र फलदायक, उपास्यदेव की कृपाओं के साथ-साथ शक्तियाँ भी प्रदान करने में समर्थ है तंत्र साधना। यह हमारा दुर्भाग्य है कि आज जनसामान्य में ही नहीं, भगवद् भक्त सद्ग्रहस्थों तक में यंत्र जागरण, मंत्रों के जप और तान्त्रिक साधनाओं के बारे में अनेक भ्रान्त धारणाएँ व्याप्त हैं। इन भ्रान्त धारणाओं के व्यापक प्रचार का एक कारण तो यह है कि तंत्र-साधना के बल पर एक सफल साधक वे सिद्धियाँ प्राप्त कर लेता है जो आराधना-उपासना, जप, तप, यज्ञ अथवा दान से प्राप्त करना सम्भव ही नहीं। दूसरा इससे भी बड़ा कारण यह है कि प्राचीन काल से ही तंत्र-शास्त्र तथा यंत्र-तंत्र साधना के इस प्रबल शक्तिशाली मार्ग को गोपनीय और जटिल विषय बनाकर जनसामान्य से छिपाया जाता रहा है और आज भी अधिकांश भक्त, पुजारी एवं आराधक-उपासक इस बारे में कुछ अधिक नहीं जानते। कारण एक ही है। तंत्र-साधना आराधना-उपासना का अंतिम चरण तो है ही, अत्यन्त प्रभावशाली और शीघ्र फल-प्रदायक भी है यह मार्ग। हमारे प्राचीन ऋषि-मुनि नहीं चाहते थे कि दुष्ट प्रवृति के व्यक्ति इस अमोघ शस्त्र का उपयोग अपने स्वार्थों के लिए करें और इसीलिए उन्होंने इसे जनसामान्य से दूर रखना ही उचित समझा।

कुछ भ्रम और निराकरण

यंत्र,मंत्र और तंत्र तथा इनकी साधनाओं और साधकों के बारे में जनसामान्य अनेक भ्रमों का शिकार है। अधिसंख्य व्यक्ति तंत्र और मंत्र में अन्तर, इनके परस्पर सम्बन्ध और सन्तुलित समायोजन के बारे में तो कुछ जानते ही नहीं, इन साधनाओं को एक वर्जित कर्म तक मानने के भ्रम का शिकार हैं। इसी प्रकार तंत्र साधना करने वालों के प्रति अधिकांश व्यक्ति इस भ्रम का शिकार रहते हैं कि तंत्र-साधक अथवा तान्त्रिक कोई ऐसा असामान्य व्यक्ति होता है जो दूसरों को हानि पहुँचाने के उद्देश्य से करता है इस प्रकार की साधनाएं। यही कारण है कि यंत्र सम्मुख रखकर विधिविधानपूर्वक मंत्रों का जप करने वाले व्यक्तियों को प्रायः ही तान्त्रिक मान लिया जाता है और अन्य व्यक्ति उनसे बचने की चेष्टा भी करने लगते हैं। परन्तु यह पूर्णतः भ्रान्त धारणा है। पहली बात तो यह है कि यंत्र और तंत्र दो पृथक-पृथक विद्याएं हैं, यह आवश्यक नहीं कि यंत्र सम्मुख रख कर मंत्र जप करने वाला व्यक्ति तान्त्रिक ही हो. दूसरा मुख्य अन्तर यह है कि कोई भी तान्त्रिक साधना केवल दूसरे व्यक्तियों को हानि पहुंचाने के उद्देश्य से ही नहीं की जाती, स्वयं के आत्मोथान और ईश्वर की विशिष्ट कृपाओं की प्राप्ति का भी सबसे सशक्त माध्यम है विधि-विधानपूर्वक मन्त्रों का जप और जप करते समय अपने उपास्य देव का यंत्र अपने सम्मुख रखना। यह ठीक है कि कुछ तंत्रसाधक भ्रष्ट भी हो जाते हैं और वे दूसरों को हानि भी पहुँचा सकते हैं, परन्तु इसमें तंत्रशास्त्र का क्या दोष।

यंत्रों का स्वरूप तथा महत्व

मूर्तियों और शिवलिंग के समान ही शिवजी के विभिन्न यंत्रों को भी भगवान शंकर का साक्षात रूप माना जाता है। किसी भी देवता का यंत्र हो, उसमें उस देवी अथवा देवता की आकृति नहीं, कुछ रेखाएं और अंक एक निश्चित क्रम में अंकित होते हैं। रेखाओं के इस क्रम और आकृति

पर ही उस यंत्र को दिया जाता है कोई विशिष्ट नाम। यंत्रों में अंकित रेखाएं तो इन्हें विशिष्ट आकृति और उन रेखाओं के मध्य लिखे हुए अक्षरों को विशिष्ट शक्ति प्रदान करती हैं जबकि इनमें अंकित अंक और अक्षर होते हैं उस परम शक्ति का मूल। यही कारण है कि यंत्र में अंकित अक्षरों और अंकों को बीज कहा जाता है और उन पर दृष्टि केन्द्रित करके ही किया जाता है मंत्रों का निश्चित संख्या में पूर्ण विधिविधान के साथ जप। तंत्रशास्त्र के ग्रन्थों में कहा गया है कि विभिन्न प्रकार के यंत्रों की रेखाएं, बीजाक्षर और बीजांक दिव्य शक्तियों से प्रभावित होते हैं। यही कारण है कि साधक जब किसी यंत्र पर नजरें जमाकर किसी विशिष्ट मंत्र का जप करता है, तब न केवल उसके मन और शरीर पर ही, बल्कि आसपास के वातावरण पर भी अच्छा अथवा बुरा प्रभाव पड़ता ही है। यही कारण है कि पूजा-उपासना और मंत्रों का जप करते समय यदि यंत्र भी सम्मुख रख लिया जाए, तब बहुत शीघ्र सफलता तो मिल ही जाती है पूर्ण शक्तिशाली भी होती है वह सफलता।

यंत्र भी देवताओं के उसी प्रकार प्रतीक हैं, जिस प्रकार उनकी प्रतिमाएं और मंत्र देव स्वरूप माने जाते हैं। मूर्तियाँ और चित्र तथा शिवलिंग स्थूल रूप में शिवजी तथा अन्य देवताओं के प्रतीक हैं, तो मंत्र उनका अक्षर अगोचर रूप। परन्तु देवताओं का चित्र और स्थूल प्रतीक न होने के वावजूद यंत्र उनका प्रतीक ही नहीं, बल्कि देवताओं का साक्षात रूप माने जाते हैं और वह भी अत्यन्त शक्तिशाली रूप में।
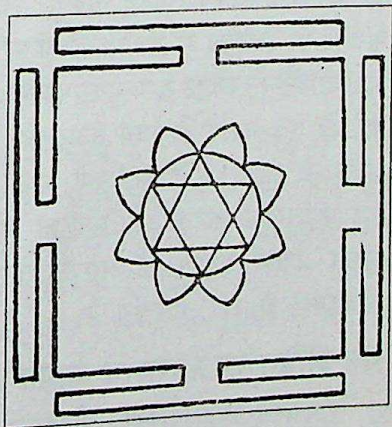
प्रत्येक देवी-देवता के अलग-अलग यंत्र होते हैं और जिस देवता के मंत्र का हम जप करते हैं उसी देवता के यंत्र का प्रयोग करते है यंत्र-मंत्र साधनाएं करते समय। यद्यपि यंत्र कोई मूर्ति अथवा चित्र नहीं रेखाओं और अंकों एवं अक्षरों का अंकन होते हैं, परन्तु इस अंकन का भी पूर्ण विधि-विधान है। कागज पर छपे अथवा स्याही से बनाए गए यंत्रों का प्रभाव नगण्य ही होता है, जबकि भूमि अथवा स्लेट पर बनाना तो इन्हें वर्जित है ही। जहाँ तक स्वयं किसी यंत्र को बनाने का प्रश्न है आप साफ-सुथरे, छिद्ररहित और प्रर्याप्त बड़े भोजपत्र पर लकड़ी की कलम और अष्टगंध से कोई भी यंत्र अंकित कर सकते हैं। वैसे सबसे अच्छा रहता है तांबे, चांदी अथवा सोने के पतरे पर अंकित यंत्रों का प्रयोग। शुद्ध तांबे की चद्दर पर पूर्ण शास्त्रोक्त विधि से अंकित हर प्रकार के यंत्रों और यंत्र, मंत्र एवं तंत्र से सम्बन्धित पुस्तकों का भारत ही नहीं, विश्व में सबसे बड़ा, विश्वसनीय और सेवाभावी संस्थान है देहाती पुस्तक भंडार, चावड़ी बाजार, दिल्ली -110 006। यहां से पत्र लिखकर आप हर प्रकार की पुस्तकें और यंत्र तो मंगा ही सकते हैं इस बारे में यथेष्ट जानकरियाँ भी घर बैठे प्राप्त कर सकते हैं। जहाँ तक स्वयं भोजपत्र पर अष्टगंध से यंत्र अंकन का प्रश्न है आप एक पर्याप्त बड़े, चौरस, अखण्ड और छिद्ररहित साफ-सुथरे भोजपत्र पर अष्टगंध द्वारा अध्याय में प्रदर्शित यंत्र को एक कलम से स्वयं तैयार कर लें। रेखाओं का स्पष्ट और निर्दोष अंकन तो आवश्यक है ही, सभी अंक, अक्षर और शब्द भी पूर्णतय शुद्ध रूप में लिखना अनिवार्य है। कोई भी अशुद्धि या टूटी रेखा अथवा अस्पष्ट अंकन आपकी साधना को असफल कर सकता है अतः विशेष सावधानी आवश्यक ही नहीं अनिवार्य है।

यंत्र शक्ति का रहस्य व आधार

यंत्रों में अंकित रेखाएं और उनके मध्य अंकित अक्षर और शब्द ही होते हैं किसी भी यंत्र की शक्ति का आधार। यंत्रों में अंकित रेखाओं और

अंकों एवं अक्षरों की शक्तियों और महत्व के बारे में हमारे प्राचीन धर्मशास्त्र कहते हैं कि संसार में हम प्रकट रूप में अनेक आकृतियाँ देखते हैं। इसी प्रकार की अनेक अदृश्य आकृतियाँ हैं आकाश-मण्डल में, जो अदृश्य होते हुए भी प्रत्येक जीव को प्रभावित करती हैं। यंत्रों में रेखाओं के माध्यम से ये अदृश्य आकृतियाँ ही अंकित की जाती हैं। जहाँ तक अंकों का प्रश्न है, प्रत्येक अंक किसी न किसी ग्रह और राशि का प्रतिनिधित्व करता है। शब्दों, अंकों और आकृतियों की इन्हीं दिव्य शक्तियों के कारण कोई भी यंत्र साधक के मस्तिष्क, शरीर, मन और आत्मा पर ही नहीं आसपास के वातावरण तथा अन्य व्यक्तियों पर भी अच्छा अथवा बुरा प्रभाव डालता है। यंत्रों की इसी शक्ति के कारण ही तांत्रिक साधना में यंत्रों और मंत्रों का संयुक्त प्रयोग किया जाता है, अब यह बात दूसरी है कि कोई इनका प्रयोग अपनी भलाई के लिए करता है, तो कोई दूसरों को नुकसान पहुँचाने के लिए। वैसे इसमें तंत्रशास्त्र का क्या दोष यह तो प्रयोग करने वाले की ही भूल है कि वह चाकू का प्रयोग फल काटने के स्थान पर कत्ल करने के लिए कर रहा है। प्राचीन काल से ही रावण और मेघनाद, कंश और वाणासुर जैसे राक्षस विशिष्ट शक्तियों की प्राप्ति हेतु तंत्रशास्त्र के ज्ञान का दुरुपयोग करते रहे हैं, जबकि ऋषियों ने इस पर चलकर मुक्ति पाई है।

तंत्र साधना का अभिप्राय एवं विधान

हम भगवान शिव की मानसिक उपासना करें अथवा अन्य किसी देवी-देवता की उपासना, अन्त में उनके किसी न किसी मंत्र की एकाध माला का जप तो किया ही जाता है। इस रूप में मंत्र का यह जप उपासना का ही एक भाग है और सामान्य जप कहलाने का अधिकारी होता है। जब यंत्र को सम्मुख रखकर और उसकी प्राण-प्रतिष्ठा करके यंत्र पर दृष्टि जमाकर मंत्रों का जप किया जाता है और हमारा मुख्य लक्ष्य मंत्रों का जप तथा देवाराधना होती है तब मंत्र जप का यही कार्य कहलाने लगता

है मंत्र सिद्धि अथवा मंत्र साधना। परन्तु इस क्रिया में मंत्र जप के पूर्व जब हम यंत्र की विधिवत पूजा-सेवा भी करते हैं, यंत्र में भगवान शिव को साक्षात उपस्थित मानकर यंत्र का पूजन करने के बाद मंत्र का जप करते है, तब यही प्रक्रिया कहलाने लगती है यंत्र साधना।

मंत्र साधना और यंत्र साधना का समन्वित रूप है तंत्र साधना। तंत्र साधना में यंत्र के पूजन और मंत्रों के जप को तो समान महत्व दिया ही जाता है, पूजा में काम आने वाली सभी वस्तुओं का प्रयोग भी किया जाता है। हमारे धर्मशास्त्रों के अनुसार यंत्र सम्मुख रखकर सम्पूर्ण अनुष्ठानों का विस्तारपूर्वक सम्पादन करते हुए आराध्य देव के किसी भी मंत्र का निश्चित मात्रा में जप और उसके बाद हवन आदि करना ही तंत्र साधना है। आराध्यदेव से विशेष शक्तियों की प्राप्ति, भय और आपदाओं से रक्षा अथवा किसी विशिष्ट सिद्धि या कार्य की आपूर्ति के लिए यंत्र सम्मुख रखकर जो विशेष अनुष्ठान, पूजाएं और मंत्रों का जप किए जाते हैं वही तंत्र है। यहाँ विशेष ध्यान रखने की बात यह है कि सामान्य पूजा, आरतियों के गायन अथवा मंत्रों के जप के समान न तो एकदम सीधी-सादी प्रक्रिया है तंत्र-साधना और न ही उपासना की तरह पूर्णतय कर्मकाण्ड से रहित। तंत्रशास्त्र का सम्पूर्ण भवन ही मंत्रों के अभिप्राय सहित ज्ञान, उचित विधि-विधान-पूर्वक उनसे जप, उचित यंत्र के चुनाव, उसके पूजन और साधक के आत्मबल पर टिका है। मंत्र का अपना महत्व होता है और यंत्र का अपना। परन्तु जब ये दोनों मिल जाते हैं, तब कई गुना अधिक बढ़ जाती है इनकी सम्मिलित शक्ति। यही कारण है कि आराधना-उपासना की अन्य किसी भी पद्धति की अपेक्षा बहुत ही शीघ्र प्रभाव दिखलाती है तंत्र साधना।

तंत्र साधना देवाराधना की सबसे शीघ्र फलदायक और पूर्ण प्रभावशाली पद्धति होने के वावजूद आप इस ओर कदम न बढ़ाएं यही उचित है। दुधारी तलवार है तंत्रसाधना जिसमें जरा-सी भी त्रुटि साधक की साधना को

ही नहीं, उसके जीवन तक को तबाह कर सकती है। तांत्रिक साधनाएं और अनुष्ठान ही नहीं, यन्त्र प्राण-प्रतिष्ठा और सामान्य तंत्र साधना जैसी सभी साधनाएं विशेष अनुभव और पूर्ण सटीक ज्ञान तथा विराट आत्मबल की मांग करती हैं। इन साधनाओं में सभी प्रक्रियाएं विविध प्रकार के न्यास करके पूर्ण विधि-विधान और अनुष्ठानपूर्वक की जाती हैं। इन सभी कार्यों में यंत्र का विधिवत पूजन, विशिष्ट वस्तुओं का प्रयोग और मंत्रों का पूर्णतय शुद्ध रूप में निश्चित संख्या में नित्य जप तो अनिवार्य है ही, सभी क्रियाओं का पूरी तरह एक निश्चित क्रम में शास्त्रोक्त विधि से होना भी आवश्यक है। इस पुस्तक के अध्ययन मात्र के आधार पर किसी भी मंत्र अथवा यंत्र को सिद्ध करने की चेष्टा अथवा कोई भी तांत्रिक क्रिया करना अन्धे कुंए में कूदने के सदृश्य ही है। यद्यपि देहाती पुस्तक भण्डार द्वारा प्रकाशित 'हस्त लिखित असली प्राचीन यंत्र-मंत्र-तंत्र महाशास्त्र' आपको यह सम्पूर्ण ज्ञान देने में समर्थ है, परन्तु केवल पुस्तकें पढ़कर ही तंत्र साधना करना धार्मिक दृष्टि से न केवल वर्जित है, वरन साधक को कठिनाई में भी डाल सकता है। हम बारम्बार आपको सचेत कर रहे हैं कि केवल पुस्तकें पढ़कर ही इस दिशा में कदम बढ़ाना खतरनाक सिद्ध हो सकता है, अतः यदि कोई पाठक इस प्रकार की भूल करता है तो परिणामों के लिए वह स्वयं उत्तरदायी होगा, व्यर्थ हमें दोष न दे।

15

श्री मृत्युञ्जय स्तोत्रम्

सृष्टि का चक्र चलता रहे इसके लिए पृथ्वी पर नये-नये जीवों के आगमन और उनके भरण-पोषण के समान ही महत्त्वपूर्ण है समय आने पर उनका इस भूमि से चले जाना। संहार की यह क्रिया भी उतनीं ही महत्त्वपूर्ण है जितनी सृष्टि निर्माण और उसके पालन की। परन्तु मृत्यु का भी एक समय होता है, अकाल मृत्यु तो अन्दर तक से हिला देती है पूरे परिवार को। इस प्रकार की अकाल मृत्यु से बचाव के लिए हमारे धर्मशास्त्रों में शिवजी से विशेष प्रार्थना करने का विधान है। अकाल मृत्यु से बचाव का सबसे सशक्त माध्यम है भगवान शिव को समर्पित मृत्युञ्जयस्तोत्र का नियमित पाठ, जबकि भयंकर रोग होने पर तो विशेष विधि-विधानपूर्वक बड़ी संख्या में इसका जप किया ही जाता है। इस अध्याय में पहले तो पद्मपुराण से संकलित इस स्तोत्र का मूल दिया गया है और उसके बाद इसका अर्थ।

रत्नसानुशरासनं रजताद्रिशृङ्गनिकेतनं
शिञ्जिनीकृतपन्नगेश्वरमच्युतानलसायकम्।
क्षिप्रदग्धपुरत्रयं त्रिदशालयैरभिवन्दितं
चन्द्रशेखरमाश्रये मम किं करिष्यति वै यमः ।।1।।
पञ्चपादपपुष्पगन्धिपदाम्बुजद्वयशोभितं
भाललोचनजातपावकदग्धमन्मथविग्रहम्

भस्मदिग्धकलेवरं भवनाशिनं भवमव्ययं।
चन्द्रशेखरमाश्रये मम किं करिष्यति वै यमः ॥2॥

मत्तवारणमुख्यचर्मकृतोत्तरीयमनोहरं
पङ्कजासनपद्मलोचनपूजिताङ्घ्रिसरोरुहम्।
देवसिद्धतरङ्गिणीकरसिक्तशीतजटाधरं
चन्द्रशेखरमाश्रये मम किं करिष्यति वै यमः ॥3॥

कुण्डलीकृतकुण्डलीश्वरकुण्डलं वृषवाहनं
नारदादिमुनीश्वरस्तुतवैभवं भुवनेश्वरम्।
अन्धकान्तकमाश्रितामरपादपं शमनान्तकं
चन्द्रशेखरमाश्रये मम किं करिष्यति वै यमः ॥4॥

यक्षराजसखं भगाक्षिहरं भुजङ्गविभूषणं
शैलराजसुतापरिष्कृतचारुवामकलेवरम्।
क्ष्वेडनीलगलं परश्वधधारिणं मृगधारिणं
चन्द्रशेखरमाश्रये मम किं करिष्यति वै यमः ॥5॥

भेषजं भवरोगिणामखिलापदामपहारिणं
दक्षयज्ञविनाशिनं त्रगुणात्मकं त्रिविलोचनम्।
भुक्तिमुक्तिफलप्रदं निखिलाघसंघनिबर्हणं
चन्द्रशेखरमाश्रये मम किं करिष्यति वै यमः ॥6॥

भक्तवत्सलमर्चतां निधिमक्षयं हरिदम्बरं
सर्वभूतपतिं परात्परमप्रमेयमनूपमम्।
भूमिवारिनभोहुताशनसोमपालितस्वाकृतिं
चन्द्रशेखरमाश्रये मम किं करिष्यति वै यमः ॥7॥

विश्वसृष्टिविधायिनं पुनरेव पालनतत्परं
संहरन्तमथ प्रपञ्चमशेषलोकनिवासिनम्।
क्रीडयन्तमहर्निशं गणनाथयूथसमावृतं
चन्द्रशेखरमाश्रये मम किं करिष्यति वै यमः ॥8॥
रुद्रं पशुपतिं स्थाणु नीलकण्ठमुमापितम्।
नमामि शिरसा देवं किं नो मृत्युः करिष्यति ॥9॥
कालकण्ठं कलामूर्तिं कालाग्निं कालनाशनम्।
नमामि शिरसा देवं किं नो मृत्युः करिष्यति ॥10॥
नीलकण्ठं विरूपाक्षं निर्मलं निरुपद्रवम्।
नमामि शिरसा देवं किं नो मृत्युः करिष्यति ॥11॥
वामदेवं महादेवं लोकनाथं जगद्गुरुम्।
नमामि शिरसा देवं किं नो मृत्युः करिष्यति ॥12॥
देवदेवं जगन्नाथं देवेशवृषभध्वजम्।
नमामि शिरसा देवं किं नो मृत्युः करिष्यति ॥13॥
अनन्तमव्ययं शान्तमक्षमालाधरं हरम्।
नमामि शिरसा देवं किं नो मृत्युः करिष्यति ॥14॥
आनन्दं परमं नित्यं कैवल्यपदकारणम्।
नमामि शिरसा देवं किं नो मृत्युः करिष्यति ॥15॥
स्वर्गापवर्गदातारं सृष्टिस्थित्यन्तकारिणम्।
नमामि शिरसा देवं किं नो मृत्युः करिष्यति ॥16॥

कैलाश के शिखर पर जिनका निवासगृह है, जिन्होंने मेरुगिरि का धनुष, नागराज वासुकि की प्रत्यंचा और भगवान विष्णु को अग्निमय बाण बनाकर तत्काल ही दैत्यों के तीनों पुरों को [illegible] कर डाला था सम्पूर्ण

देवता जिनके चरणों की वन्दना करते हैं, उन भगवान् चन्द्रशेखर की शरण लेता हूँ। यमराज मेरा क्या करेगा?॥1॥ मन्दार, पारिजात, संतान, कल्पवृक्ष और हरिचन्दन–इन पाँच दिव्य वृक्षों के पुष्पों से सुगन्धित युगल चरण-कमल जिनकी शोभा बढ़ाते हैं, जिन्होंने अपने ललाटवर्ती नेत्र से प्रकट हुई आग की ज्वाला में कामदेव के शरीर को भस्म कर डाला था, जिनका श्रीविग्रह सदा भस्म से विभूषित रहता है, जो सबकी उत्पत्ति के कारण होते हुए भी भव-संसार के नाशक हैं तथा जिनका कभी विनाश नहीं होता, उन भगवान् चन्द्रशेखर की मैं शरण लेता हूँ। यमराज मेरा क्या करेगा?॥2॥
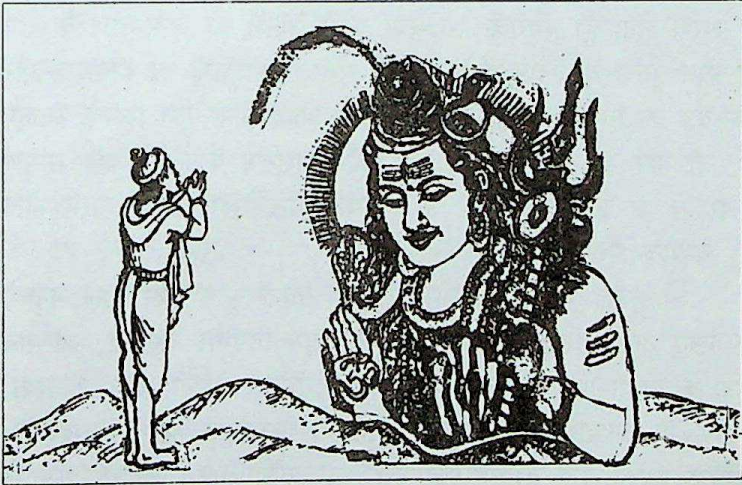
जो मतवाले गजराज के चर्म की चादर ओढ़े परम् मनोहर जान पड़ते हैं, ब्रह्मा और विष्णु भी जिनके चरण-कमलों की पूजा करते हैं तथा जो देवताओं और सिद्धों की नदी गंगा की तरंगों से भीगी हुई शीतल जटा धारण करते हैं, उन भगवान् चन्द्रशेखर की मैं शरण लेता हूँ। यमराज मेरा क्या करेगा?॥3॥ कुण्डली मारे हुए सर्पराज जिनके वैभव की स्तुति

करते हैं, जो समस्त भुवनों के स्वामी, अन्धकासुर का नाश करने वाले, आश्रितजनों के लिए कल्पवृक्ष के समान और यमराज को भी शान्त करने वाले हैं, उन भगवान् चन्द्रशेखर की मैं शरण लेता हूँ। यमराज मेरा क्या करेगा?॥4॥

जो यक्षराज कुबेरे के सखा, भग देवता की आँख फोड़ने वाले और सर्पों के आभूषण धारण करने वाले हैं, जिनके श्रीविग्रह के सुन्दर वामभाग को गिरिराजकिशोरी उमा ने सुशोभित कर रखा है, कालकूट विष पीने के कारण जिनका कण्ठभाग नीले रंग का दिखायी देता है, जो एक हाथ में फरसा और दूसरे में मृग लिए रहते हैं, उन भगवान् चन्द्रशेखर की मैं शरण लेता हूँ। यमराज मेरा क्या करेगा?॥5॥ जो जन्म-मरण के रोग से ग्रस्त पुरुषों के लिए औषधरूप हैं, समस्त आपत्तियों का निवारण और दक्ष-यज्ञ का विनाश करने वाले हैं, सत्त्व आदि तीनों गुण जिनके स्वरूप हैं, जो तीन नेत्र धारण करते, भोग और मोक्षरूप फल देते तथा सम्पूर्ण पापरा शि का संहार करते हैं, उन भगवान् चन्द्रशेखर की मैं शरण लेता हूँ। यमराज मेरा क्या करेगा?॥6॥

जो भक्तों पर दया करने वाले हैं, अपनी पूजा करने वाले मनुष्यों के लिए अक्षय निधि होते हुए भी जो स्वयं दिगम्बर रहते हैं, जो सब भूतों के स्वामी, परात्पर, अप्रमेय और उपमारहित हैं, पृथ्वी, जल, आकाश, अग्नि और चन्द्रमा के द्वारा जिनका श्रीविग्रह सुरक्षित है, उन भगवान् चन्द्रशेखर की मैं शरण लेता हूँ। यमराज मेरा क्या करेगा?॥7॥ जो ब्रह्मारूप से सम्पूर्ण विश्व की सृष्टि करते, फिर विष्णुरूप से सबके पालन में संलग्न रहते और अन्त में सारे प्रपंच का संहार करते हैं, सम्पूर्ण लोकों में जिनका निवास है तथा जो गणेशजी के पार्षदों से घिरकर दिन-रात भाँति-भाँति के खेल किया करते हैं, उन भगवान् चन्द्रशेखर की मैं शरण लेता हूँ। यमराज मेरा क्या करेगा?॥8॥

'रु' अर्थात् दु:ख को दूर करने के कारण जिन्हें रुद्र कहते हैं, जो जीवरूपी पशुओं का पालन करने से पशुपति, स्थिर होने से स्थाणु, गले में नीला चिह्न धारण करने से नीलकण्ठ और भगवती उमा के स्वामी होने से उमापति नाम धारण करते हैं, उन भगवान् चन्द्रशेखर की मैं शरण लेता हूँ। मृत्यु मेरा क्या कर लेगी?॥9॥ जिनके गले में काला दाग है, जो कलामूर्ति, कालाग्निस्वरूप और काल के नाशक हैं, उन भगवान् शिव को मैं मस्तक झुकाकर प्रणाम करता हूँ। मृत्यु मेरा क्या कर लेगी?॥10॥ जिनका कण्ठ नील और नेत्र विकराल होते हुए भी जो अत्यन्त निर्मल और उपद्रवरहित हैं, उन भगवान् शिव को मैं मस्तक झुकाकर प्रणाम करता हूँ। मृत्यु मेरा क्या कर लेगी?॥11॥ जो वामदेव, महादेव, विश्वनाथ और जगद्गुरु नाम धारण करते हैं, उन भगवान् शिव को मैं मस्तक झुकाकर प्रणाम करता हूँ। मृत्यु मेरा क्या कर लेगी।?।12॥

जो देवताओं के भी आराध्यदेव, जगत् के स्वामी और देवताओं पर भी शासन करने वाले हैं, जिनकी ध्वजा पर वृष का चिह्न बना हुआ है, उन भगवान् शिव को मैं मस्तक झुकाकर प्रणाम करता हूँ। मृत्यु मेरा क्या कर लेगी।?।13॥ जो अनन्त, अविकारी, शान्त, रुद्राक्षमालाधारी और सबके दु:खों का हरण करने वाले हैं, उन भगवान् शिव को मैं मस्ताक झुकाकर प्रणाम करता हूँ। मृत्यु मेरा क्या कर लेगी?॥14॥ जो परमानन्द-स्वरूप, नित्य एवं कैवल्यपद—मोक्ष की प्राप्ति के कारण हैं, उन भगवान् शिव को मैं मस्तक झुकाकर प्रणाम करता हूँ। मृत्यु मेरा क्या कर लेगी?॥15॥ जो स्वर्ग और मोक्ष के दाता तथा सृष्टि, पालन और संहार के कर्ता हैं, उन भगवान् शिव को मैं मस्तक झुकाकर प्रणाम करता हूँ। मृत्यु मेरा क्या कर लेगी?॥16॥

16

द्वादस ज्योतिर्लिंग

कण-कण में भगवान शिव व्याप्त हैं और प्रत्येक गाँव, बस्ती और मोहल्ले में हैं शिव मन्दिर। हमारे देश में सबसे अधिक संख्या में आशुतोष भगवान शिवजी के मन्दिर ही हैं और सभी हैं भक्तों के लिए समान रूप से पूज्यनीय। फिर भी प्रत्येक नगर और कस्बे में कुछ शिव मन्दिर अन्य मन्दिरों से अधिक बड़े, भव्य और प्रख्यात होते हैं और साथ ही स्थानीय जनता के लिए आस्था के ज्योतिर्मय द्वीप भी। शिवजी के इन मन्दिरों में मुख्य मूर्ति के रूप में स्थापित तो शिवलिंग ही होता है, परन्तु शिव मंदिर अथवा शिवालय के स्थान पर होता है इनका कोई विशिष्ट नाम हैं जैसे– मनकामेश्वर, भूतेश्वर, राजेश्वर आदि। इस प्रकार के लगभग सभी विशिष्ट मन्दिर सदियों पुराने हैं और नित्य ही कई-कई बार विशिष्ट पूजाएं और श्रृंगार होता है इन मन्दिरों में। श्रावण मास के सोमवारों और महाशिव रात्रि जैसे पर्वों पर इन मन्दिरों के आसपास विशेष मेले भी लगते हैं और हजारों भक्त दर्शन व पूजा करते हैं। परन्तु भारत में शिवजी के बारह मन्दिर तो ऐसे हैं जो हजारों वर्ष प्राचीन हैं, पूरे भारत ही नहीं विश्व भर के हिन्दू समाज में जिन्हें विशेष मान्यता प्राप्त है और उनमें स्थापित शिवलिंगों को साक्षात भगवान शिव का ज्योतिर्मय रूप ही माना जाता है।

भगवान शिव के ये बारह मन्दिर उत्तर में हिमालय की केदार चोटी से लेकर दक्षिण में सेतुबंध रामेश्वर तक, पश्चिम में गुजरात के प्रभास

पाटन से पूर्व में बिहार तक अवस्थित हैं। इन मन्दिरों में स्थापित शिवलिंगों को ज्योतिर्लिंगों कहा जाता है। इन सभी ज्योतिर्लिंगों के बारे में पुराणों में स्थान-स्थान पर विशिष्ट वर्णन उपलब्ध हैं। इनके महत्व, स्थापना के कारण और काल तथा दर्शनों के फलों का व्यापक वर्णन हमें शिवपुराण में तो मिलता ही है, अन्य धर्मग्रन्थों में भी विस्तारपूर्वक अत्याधिक महत्व बतलाया गया है इन सभी ज्योतिर्लिंगों का। प्रत्येक धर्मानुरागी हिन्दू नर-नारी की यह हार्दिक कामना रहती है कि वह जीवन में कम-से-कम एक बार तो इन ज्योतिर्लिंगों के साक्षात दर्शन कर ही सके।

1. श्री सोमनाथ

भारत के देव मन्दिरों को यों तो विधर्मियों ने अनेक बार लूटा और नष्ट-भ्रष्ट किया है, परन्तु शिवजी के इस प्राचीन-प्रख्यात मन्दिर को तो चार बार इस भीषण विध्वंस का सामना करना पड़ा। प्राचीन भारत में सर्वाधिक सम्पन्न और विशाल भगवान शिव का यह मन्दिर गुजरात राज्य के प्रभासपाटन नामक नगर में अरब सागर के तट पर स्थित है सोमनाथ नामक यह मन्दिर। शिव भक्तों और समस्त हिन्दू जनसमुदाय की आस्था के इस प्रबल केन्द्र का वैभव और कोष प्राचीन काल में किसी भी बड़े से बड़े राज्य से भी अधिक था। यही कारण है कि महमूद गजनवी द्वारा 1024 ईस्वी में किया गया सोमनाथ पर आक्रमण उसके सत्रह हमलों में सबसे बड़ा था और अकूत धन प्राप्त किया था उसने इस हमले में। कुछ समय बाद ही महाराज भीमदेवजी और सौराष्ट्र के अन्य राजाओं ने सोमनाथ मन्दिर का पुनर्निर्माण किया, जिसे 1297 में अलाउद्दीन ने ध्वस्त किया। गुजरात के सुल्तान मुज्जफ्फरशाह द्वारा 1395 में और अहमदशाह द्वारा 1413 में इसे फिर ध्वस्त किया गया।

चार बार ध्वस्त होने के वावजूद न तो भक्तों की भावना में कोई कमी आई और न ही इस ज्योतिर्लिंग के प्रताप में कोई अन्तर पड़ा। छोटे

आकार का मन्दिर बनाकर लगातार शिवलिंग की पूजा-आराधना का कार्य सदियों तक चलता रहा। सन् 1931 में महारानी अहिल्याबाई ने समुद्रतट पर मूल स्थान के पास ही एक भव्य मन्दिर बनवाकर उसे सोमनाथ का नाम दिया। आज हम मूलस्थान पर जो भव्य सोमनाथ का मन्दिर देखते हैं उसका निर्माण स्वतंत्र भारत में जनसामान्य द्वारा किया गया है। प्राचीन ध्वंसावशेषों पर इस नए मन्दिर के निर्माण में स्वतंत्र भारत के प्रथम गृहमंत्री सरदार पटेल की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। शिवजी का साक्षात आत्मस्वरूप माना जाता है सोमनाथ के इस ज्योतिर्लिंग को, जिसके दर्शनमात्र से सभी पाप नष्ट हो जाते हैं।

2. श्री मल्लिकार्जुन

दक्षिण भारत में आन्ध्र प्रदेश के कृष्णा जिले में कृष्णा नदी के तट पर एक पहाड़ी है, जिसे श्री शैल पर्वत कहा जाता है। शास्त्रों में श्रीशैल पर्वत नामक इस पहाड़ी को दक्षिण का कैलाश कहा गया है और उसी प्रकार माना गया है इस पर भगवान शिव का स्थाई निवास। इस पहाड़ी पर स्थित मन्दिर में स्थापित शिवजी के ज्योतिर्लिंग का नाम है श्री मल्लिक्कार्जुन। महाभारत तथा अन्य अनेक धर्म ग्रन्थों में कहा गया है कि श्री मल्लिाक्कार्जुन ज्योतिर्लिंग की पूजा-आराधना करने से अश्वमेध यज्ञ का फल प्राप्त होता है।

3. श्री महाकालेश्वर

मध्य भारत के मालवा प्रखण्ड में शिवजी के दो ज्योतिर्लिंग अनादि काल से स्थित हैं। इनमें से महाकालेश्वर जिसे स्थानीय निवासी महाकाल और महन्काल भी कहते हैं—उज्जैन नगर के मध्य भाग में पुण्यसलिला क्षिप्रा नदी के तट पर है। उज्जैन एक अत्यन्त प्राचीन और पर्याप्त बड़ा नगर है। प्रत्येक बारह वर्ष पश्चात सूर्य के सिंह राशि में प्रवेश करते समय यहाँ सिंहस्थ नाम से एक बड़ा भारी मेला लगता है जिसे जन सामान्य

प्रायः उज्जैन का कुम्भ कहता है। इस नगर में महाकालेश्वर मन्दिर के साथ-साथ भगवती का शक्तिपीठ और अन्य अनेक मन्दिर भी हैं।

महाकालेश्वर का मन्दिर अत्यन्त भव्य, विशाल और पांच मंजिल ऊँचा है। नगर के मध्य भाग में स्थित होने के कारण दर्शनार्थियों और भक्तों की यहाँ हर समय भीड़ लगी रहती है। शिवालय के मध्य भाग में स्वच्छ जल से परिपूर्ण एक पक्का सरोवर है जिसके तीन ओर के किनारों पर असंख्य देव प्रतिमाएं और शिवलिंग रखे हुए हैं। मन्दिर का गर्भगृह भूमितल से कुछ नीचा है अतः दर्शनार्थी कुछ सीढ़ियाँ उतर कर भगवान महाकाल के दर्शन व पूजा करने जाते हैं। गर्भगृह के ऊपर पांच मंजिलें हैं और उनके ऊपर काफी ऊँचा एक शिखर। प्रत्येक मंजिल पर भी एक शिवलिंग है। सबसे ऊपर की मंजिल पर स्थित शिवलिंग को ओंकारेश्वर कहा जाता है। मुख्य रूप से पूजा-आराधना और दर्शन भूतल से नीचे गर्भगृह में स्थिति भगवान के महाकालेश्वर ज्योतिर्लिंग के किए जाते हैं। भारत में यही एक मात्र ऐसा ज्योतिर्लिंग है जो दक्षिणाभिमुख है और जिस पर प्रातःकाल ब्रह्ममहुर्त में चिता की भस्म लगाकर चिताभस्म से श्रृगांर किया जाता है। एक अन्य विशेषता इस मन्दिर की यह भी है कि भगवान को एक बार अर्पित किए गए पत्र-पुष्प और बिल्बफल मध्यवर्ती तालाब में धोकर बारम्बार पूजा के लिए प्रयोग किए जाते हैं।

4. श्री ओंकारेश्वर

यद्यपि महाकालेश्वर शिवालय के सबसे ऊपरी मंजिल पर स्थापित शिवलिंग को भी श्री ओंकारेश्वर कहा जाता है, परन्तु ओंकारेश्वर का वास्तविक ज्योतिर्लिंग उज्जैन से लगभग डेढ़ सौ किलो मीटर दूर मांधाता पर्वत पर है। इन्दौर से खण्डवा जाने वाली रेलवे लाइन पर ओंकारेश्वर रोड नामक एक छोटा-सा स्टेशन है। वहाँ से नर्मदा नदी के तट तक बसें जाती हैं। यह शिवालय नर्मदा नदी के तट पर नहीं है, बल्कि नदी के बीच पर्वत के रूप में उभरे हुए एक बड़े टापू पर स्थित है। यह

टापू कई किलो मीटर लम्बा-चौड़ा और पर्याप्त ऊंचा है। इस टापू के दोनों ओर नर्मदा नदी दो धाराओं में बंटकर बहती है, जो टापू समाप्त होने पर फिर मिलकर एक हो जाती हैं। प्राचीन धर्म ग्रन्थों में मांधाता पर्वत और शिवपुरी कहा गया है इस टापू को। यद्यपि टापू की जनसंख्या अधिक नहीं, परन्तु कई धर्मशालाएं और कुछ दुकानें अवश्य हैं इस टापू पर और यात्री प्रायः एक रात्रि निवास करते ही हैं। श्री ओंकारेश्वर के दर्शन और पूजा के साथ-साथ इस ओंकार पर्वत की परिक्रमा का भी बहुत आधिक धार्मिक महत्व है।

अन्य सभी शिवलिंगों और ज्योतिर्लिंगों के विपरीत एक छोटे और गहरे कुण्ड में स्थापित है श्री ओंकारेश्वर नामक यह अनगढ़ ज्योतिर्लिंग। यह ज्योतिर्लिंग मानव निर्मित नहीं, बल्कि प्राकृतिक रूप में प्रकट हुआ था। यह स्वयम्भू ज्योतिर्लिंग जिस झारी या कुण्ड में स्थापित है, उसमें हर समय जल भरा रहता है। इस ज्योतिर्लिंग की एक अन्य विशेषता यह भी है कि मन्दिर का शिखर भगवान की प्रतिमा के ऊपर नहीं, शिखर से कुछ हटकर स्थित है श्री ओंकारेश्वर का ज्योतिर्लिंग। यह मन्दिर भी महाकालेश्वर के समान पांच मंजिल का है और इसकी सबसे ऊपर की मंजिल पर स्थापित है श्री महाकालेश्वर नामक शिवलिंग। श्री ओंकारेश्वरजी पर भोग के रूप में भीगी हुई चने की दाल चढ़ाई जाती है। यहाँ होने वाली रात्रि की आरती के दर्शनों का विशिष्ट महत्व है और प्रातःकाल पर्वत की परिक्रमा करने का। कार्तिक पूर्णिमा को यहाँ बड़ा भारी मेला लगता है। शिव पुराण में नर्मदा में स्नान और श्री ओंकारेश्वर की पूजा-आराधना का बड़ा भारी महात्म्य बतलाया गया है।

5. श्री केदारनाथ जी

हिमालय पर्वत श्रृंखला के मध्यवर्ती भाग में हमारे चार प्रमुख तीर्थ स्थल है। ये चारों ही तीर्थ स्थान हिमालय पर्वत पर काफी ऊंचाई पर हैं

अतः इनकी यात्रा केवल ग्रीष्म ऋतु में ही की जा सकती है। जाड़ों में तो इन पर कई-कई मीटर मोटी बर्फ जमी रहती है। गंगा के उद्गम स्थल पर गंगोत्री और यमुना के उद्गम पर यमनोत्री तीर्थ हैं, तो गंगा के तट पर श्री बद्रीनाथ और अलकनन्दा के तट पर केदार पर्वत के ऊपर श्री केदारनाथ नामक ज्योतिर्लिंग हैं। बद्रीनाथ में भगवान विष्णु का मन्दिर है तो श्री केदारनाथ में ओंकारेश्वर के समान ही स्वयम्भू ज्योतिर्लिंग। आकार में अधिक बड़ा अथवा भव्य नहीं है यह मन्दिर, परन्तु शास्त्रों में बहुत ही अधिक महत्व है इस मन्दिर के दर्शन का।

इन चारों तीर्थों की यात्रा प्रायः एक साथ की जाती है। जो व्यक्ति गंगोत्री और यमुनोत्री नहीं जाते वे भी बद्रीनाथ और केदारनाथ की यात्रा एक साथ ही करते हैं। कारण स्पष्ट है। एक दूसरे से सैकड़ों किलोमीटर दूर होने के वावजूद दोनों का मार्ग काफी दूर तक एक ही है। सत्तर के दशक तक तो हरिद्वार से पैदल चलकर ही पहुँचा जा सकता था इन तीर्थों तक और यात्रा में दो-तीन माह लगते थे। यद्यपि अब पहाड़ों पर काफी अन्दर तक बसें जाती हैं, फिर भी सौ-पचास किलोमीटर पैदल चलना ही पड़ता है। बहुत अधिक सर्दी पड़ती है इन तीर्थों में और कई बार तो गर्मियों में भी थोड़ी-बहुत बर्फ पड़ जाती है। यहाँ कोई स्थाई बस्तियाँ अथवा बाजार भी नहीं। गर्मियों में कुछ दुकानें लग जाती हैं, परन्तु काफी ऊंची दर पर मिलती हैं सभी वस्तुएं, क्योंकि वे मैदानी भागों से वहाँ पहुँचती हैं और वे भी माल ढोने वाले पहाड़ी बकरों और इन्सानों की पीठ पर। आज भी सबसे अधिक कष्टकर और श्रमसाध्य है इन चारों तीर्थों की यात्रा।

6. श्री भीमशंकर ज्योतिर्लिंग

धार्मिक दृष्टि से अत्यन्त महत्वपूर्ण और प्राचीनतम होने के वावजूद अधिक यात्री दर्शन करने नहीं जा पाते भीमशंकर ज्योतिर्लिंग के। रेल और सड़क मार्ग से काफी दूर महाराष्ट्र में भीमा नदी के उद्गम स्थल पर एक

पहाड़ी पर स्थित है भीमशंकर का विशाल मन्दिर। बम्बई से दक्षिण पूर्व में तीन सौ बीस किलोमीटर और नासिक से दो सौ बीस किलोमीटर दूर है यह मन्दिर। शिवरात्रि पर पूना से यहाँ विशेष बसें भी चलती हैं, परन्तु कोई भी बस या कार मन्दिर तक नहीं पहुँच पाती। मन्दिर से तीस किलोमीटर दूर आवागांव तक ही बस जाती है बाकी मार्ग पैदल अथवा बैलगाड़ी पर ही तय करना पड़ता है। यहाँ कुछ धर्मशालाएं और पण्डों के घर हैं परन्तु कोई बड़ा गाँव या बस्ती दूर-दूर तक नहीं। देखरेख के अभाव में मन्दिर और धर्मशालाएं जर्जर होते जा रहे हैं।

7. विश्वेश्वर अर्थात विश्वनाथ

काशी, बनारस और वाराणसी एक ही नगर के तीन नाम हैं। नगर के मध्य भाग में भगवान विश्वेश्वर का ज्योतिर्लिंग हैं जो जनसामान्य में विश्वनाथ अथवा काशी विश्वनाथ के नाम से सर्वत्र पूज्य है। धार्मिक आस्था के अनुसार काशी को भगवान शिव की नगरी माना जाता है और यहाँ स्थापित ज्योतिर्लिंग को भगवान शिव का साक्षात रूप। गंगा के पावन तट पर स्थित पूर्वी उत्तर प्रदेश के इस प्राचीन नगर की गणना सप्त पुरियों और त्रिस्थली के अन्तरगत तो होती ही है, काशी में शरीर त्यागने वालों को अवश्य ही शिवलोक की प्राप्ति होती है ऐसा लोक-विश्वास है। बौद्ध धर्मावलम्बियों का प्रमुखतम तीर्थ सारनाथ इस नगर से मात्र छह किलोमीटर दूर है तो तीर्थराज प्रयाग मात्र एक सो छब्बीस किलोमीटर।

प्राचीन धर्म ग्रन्थों के अनुसार भगवान शिव ने काशी नगरी की स्थापना अपने निवास के लिए स्वयं की थी। जहाँ तक विश्वेश्वर ज्योतिर्लिंग का प्रश्न है, आदि शंकराचार्य द्वारा स्थापित किया गया था। उस प्राचीन मन्दिर को धर्मान्ध औरंगजेब ने ध्वस्त करके वहाँ ज्ञानवापी मस्जिद बनवा दी थी। बाद में महारानी अहिल्याबाई ने मस्जिद के पास इस मन्दिर का निर्माण कराया और यहाँ ज्योतिर्लिंग की पुनः प्रतिष्ठा की। अन्य ज्योतिर्लिंगों के

विपरीत काशी विश्वनाथ का मन्दिर नगर के मध्य भाग में स्थित है और अत्यन्त संकरी गलियों के रूप में है यहाँ तक पहुंचने का मार्ग। इस मन्दिर के गुम्बज अर्थात कलश पर शुद्ध सोने की चादर जड़ी हुई है जो पंजाब-केशरी महाराज रणजीत ने मढ़वाई थी।

8. त्र्यम्बकेश्वर

भारत के चार तीर्थ स्थलों में कुम्भ के मेले लगते हैं—हरिद्वार, प्रयागराज, उज्जैन और नासिक। नासिक जिले की पुण्य भूमि में स्थित है भगवान शिव का एक अद्भूत मन्दिर। त्र्यम्बकेश्वर नाम से विख्यात इस मन्दिर में एक ही कुण्ड में तीन लिंग स्थित हैं जिन्हें ईश्वर के तीनों रूपों—ब्रह्मा, विष्णु और महेश—का साक्षात रूप माना जाता है। काफी प्राचीन और भव्य है यह मन्दिर और सभी प्रकार की कामनाओं की पूर्ण करने वाला माना जाता है इस मन्दिर के दर्शन को। नासिक महाराष्ट्र का एक प्रख्यात नगर और जिला मुख्यालय है। पश्चिम भारत की गंगा, गोदावरी नदी के उद्‌गम स्थल पर एक पहाड़ी पर स्थित हैं यह मन्दिर। शास्त्रों में कहा गया है कि महर्षि गोतम की तपस्या से प्रसन्न होकर भगवान शिवजी ब्रह्मा और विष्णु सहित यहाँ लिंग रूपों में स्वयं स्थित हुए हैं, तो गंगाजी गोतमी नदी के रूप में। गोतमी नदी का आधुनिक नाम गोदावरी है तो तीनों देवों की स्थापना के कारण इस ज्योतिर्लिंग का नाम त्र्यम्बकेश्वर।

9. वैद्यनाथ

आकार में सबसे छोटा, परन्तु मान्यता में सबसे उच्च स्थान प्राप्त है वैद्यनाथ धाम नामक स्थान पर स्थित इस ज्योतिर्लिंग को। बिहार के संथाल परगना में हावड़ा-पटना रेलवे लाइन पर जसीडीह नामक रेलवे स्टेशन से छह किलोमीटर दूर ब्रांच लाइन पर है वैद्यनाथ धाम नामक स्टेशन। मन्दिर इस स्टेशन से दो किलोमीटर दूर है। वैद्यनाथ धाम यद्यपि एक छोटा-सा ग्राम है, परन्तु यहाँ एक-दो नहीं, चौबीस प्रमुख मन्दिर हैं जिनमें तीन शिवजी

और तीन पार्वतीजी के हैं और शेष अठारह अन्य देवों के। ये सभी मन्दिर मुख्य मन्दिर के आस-पास ही हैं और इनके शिखर एक दूसरे से लम्बे रेशमी कपड़ों और रस्सों से बन्धे हुए हैं। कहा जाता है कि यहाँ भगवती सती का हृदय गिरा था। इसीलिए यहाँ भगवती का शक्तिपीठ भी हैं। वैद्यनाथ ज्योतिर्लिंग और मातेश्वरी का शक्तिपीठ एकदम समीप बने युगल मन्दिर में हैं।

वैद्यनाथ जयोतिर्लिंग भूमि से तो मात्र आठ अंगुल ऊपर है परन्तु भूमि में यह पाताल तक गहरा है, ऐसा शास्त्रों का कथन है। कहा जाता है कि राक्षसराज रावण ने अपने कठोर तप द्वारा भगवान शिव को प्रसन्न करके उनसे लंका में सशरीर स्थाई निवास हेतु प्रार्थना की थी। तब भगवान शिव ने रावण को यह शिवलिंग देकर कहा कि यह ज्योतिर्लिंग उनका साक्षात रूप हैं, अतः इसे लंका में ले जाकर स्थापित कर ले। साथ ही भगवान ने रावण को सावधान कर दिया कि वह इस ज्योतिर्लिंग को जहाँ भी प्रथम बार भूमि पर रख देगा वहीं स्थाई रूप में स्थापित हो जाएगा यह शिवलिंग। रावण जब कैलाश से लंका के लिए आकाश मार्ग से जा रहा था, तब उसे इस स्थान पर लघु शंका के लिए उतरना पड़ा। वहाँ उसने इस शिवलिंग को एक वृद्ध ब्राह्मण के हाथ में पकड़ा दिया और खुद लघु शंका हेतु बैठ गया। देवता नहीं चाहते थे कि यह ज्योतिर्लिंग लंका जाए। उस ब्रह्मण ने शिवलिंग को वहीं भूमि पर रख दिया और कहीं चला गया। वास्वत में वह ब्राह्मण भगवान विष्णु स्वयं थे, अतः स्वयं भगवान शिव द्वारा प्रदत्त और भगवान विष्णु द्वारा स्थापित माना जाता है वैद्यनाथ धाम में स्थित इस ज्योतिर्लिंग को ।

10. नागेश्वर (गुजरात)

गुजरात में राजकोट से तारभगाम-ओखा रेलवे लाइन पर गोमती द्वारका नामक छोटा सा स्टेशन है। वहाँ से बीस किलोमीटर दूर पूर्वोत्तर दिशा में

स्थित है नागेश्वर नामक यह अत्यन्त प्राचीन और भव्य मन्दिर। द्वारिका से बस और अन्य वाहन यहाँ जाते ही रहते हैं अतः प्रायः भक्त दर्शन करके उसी दिन लौट आते हैं। शास्त्रों के अनुसार अपने भक्त सुप्रिय वैश्य की प्रार्थना पर यहाँ शून्य में भगवान शंकर ज्योतिर्लिंग के रूप में स्वयं प्रकट हुए थे।

11. सेतुबन्ध रामेश्वर

विश्व में एक ही स्थान है जहाँ तीन सागर मिलते हैं, और वह स्थान है कन्याकुमारी। भारत के धुर दक्षिणी सिरे पर यही वह स्थान है जहाँ से लंका तक भगवान श्रीराम ने पुल बनाया था। भारत के चार प्रमुख तीर्थों में से एक है कन्याकुमारी अथवा सेतुबन्ध रामेश्वर नामक यह तीर्थ। यहाँ पर शिवजी का विश्वविख्यात ज्योतिर्लिंग है। इस ज्योतिर्लिंग और मन्दिर की स्थापना तो आदिशंकराचार्य ने की थी वैसे यह माना जाता है कि इस स्थान पर बालू से शिवलिंग बनाकर सबसे पहले भगवान राम ने पूजा-आराधना की थी। श्रीराम द्वारा पूजित होने कारण ही इस ज्योतिर्लिंग को रामेश्वरम कहा जाता है। भारत के सबसे बड़े, भव्य और विशाल मन्दिरों में से एक है सेतुबन्ध रामेश्वर का यह मन्दिर। मन्दिर में ज्योतिर्लिंग के साथ-साथ शिवजी और अन्य देवताओं की भव्य मूर्तियाँ भी हैं और साथ ही बाइस कुएं भी। इन कुओं को भगवान श्रीराम द्वारा निर्मित माना जाता है और तीर्थ कहा जाता है।

12. श्री घुसृणेश्वर अर्थात घुश्मेश्वर

एलोरा-अजन्ता की विश्वविख्यात गुफाओं में एलोरा से मात्र एक किलोमीटर की दूरी पर स्थित है शिवजी का यह भव्य-विशाल मन्दिर। मन्दिर परिसर में एक पक्का सरोवर है। दक्षिण भारत में देवगिरी पर्वत पर वेरूल नामक गांव के निकट है यह भव्य मन्दिर। कहा जाता है कि शिवभक्त ब्राह्मणी धुश्मा की साधना से प्रसन्न होकर भगवान शिव यहाँ स्वयं प्रकट हुए थे

और इस ज्योतिर्लिंग के रूप में स्थापित हो गए थे। आन्ध्र प्रदेश में कांचीगुडा-मनमाड रेलवे लाइन पर औरंगाबाद रेलवे स्टेशन है। वहाँ से पच्चीस किलोमीटर है वैसूल गांव जहाँ तक बसें जाती हैं। गांव से मन्दिर तक पैदल जाते हैं, वैसे गाँव से आधिक दूर नहीं है यह मन्दिर।

ज्योतिर्लिंगों के दर्शनों का महात्म्य

एक बार ऋषियों ने सूतजी से पूछा कि महाराज आगे आने वाले कलिकाल में वह कौन-सा सहज उपाय है जिस पर चलकर मानव मात्र इस लोक में सभी सुख और अन्त में मोक्ष प्राप्त कर सके। तब सूत जी ने कृपापूर्वक कहा कि कलिकाल में आयु और धर्म में क्षय होने के कारण तपस्या और यज्ञ संभव नहीं रहेंगे। तब भगवान शिव की आराधना-उपासना भक्तों को वही फल प्रदान करेगी जो हज़ारों यज्ञों से प्राप्त होता है। थोड़ी-सी पूजा-आराधना से ही प्रसन्न हो जाते हैं भगवान शिव और उनके दर्शन मात्र से मनुष्य पापों से मुक्त हो जाता है। शिवजी के सभी मन्दिर, मूर्तियाँ और लिंग परम पुनीत और अक्षय फल प्रदायक हैं, परन्तु बारह स्थानों पर स्थापित ज्योतिर्लिंग तो स्वयं साक्षात शिवजी के ही प्रत्यक्ष रूप हैं। ऋषियों के पुनः प्रार्थना करने पर सूत जी ने विस्तारपूर्वक इनके बारे में बतलाते हुए कहा है— सौराष्ट्र में सोमनाथ, श्रीशैल में मल्लिकार्जुन, उज्जयिनी में महाकालेश्वर, ओंकार तीर्थ में ओंकारेश्वर, हिमालय पर्वत पर केदारनाथ, डाकिनी में भीमशंकर, काशी में विश्वनाथ, गोदावरी तट पर त्र्यम्बकेश्वर, चिता भूमि में वैद्यनाथ, दारुकवन में नागेश, सेतुबन्ध में रामेश्वर तथा शिवालय में घुश्मेश्वर नाम से बारह ज्योतिर्लिंग हैं। ये सभी साक्षात शिव के जीवन्त स्वरूप हैं, जो मनुष्य इनके दर्शन और स्पर्श करता है उसे ये परम आनन्द और अन्त में मोक्ष प्रदान करते हैं।

सभी ज्योतिर्लिंग भक्ति, शक्ति, वैभव और मुक्ति प्रदायक हैं, वैसे इनके अलग-अलग विशिष्ट फल भी हैं। इनमें से श्री सोमनाथ जी चन्द्रमा के दुःख

का नाश करने वाले हैं। आपका पूजन करने से क्षय तथा कुष्ठादि रोगों का नाश होता है। शिवजी के इन आत्म स्वरूप सोमनाथ महालिंग का जो दर्शन करता है उसके सब पाप छूट जाते हैं तथा उसे भुक्ति और मुक्ति प्राप्त होती है। इसी प्रकार मल्लिकार्जुन का जो दर्शन करता है उसे सब मनोवांछित फल प्राप्त होते हैं। शिवजी का यह दूसरा ज्योतिर्लिंग भी दर्शन करने में बड़ा सुखदायक और निश्चय ही मुक्तिदायक है। तीसरे ज्योतिर्लिंग उज्जयिनी में महाकाल का दर्शन करने से सब कामनायें पूर्ण होकर अन्त में उत्तम गति प्राप्त होती है। चौथा ओंकारेश्वर भक्तों को इच्छित फल देने वाला है। पांचवा केदारेश नामक ज्योतिर्लिंग जो केदारनाथ जी में स्थित है नर-नारायण नामक भगवान का अवतार है। जो इसका दर्शन और पूजन करता है उसको ये अभीष्ट फल प्रदान करते हैं। शिवजी का छठवाँ अवतार भीम नामक असुर को मारने से भीमशंकर ज्योतिर्लिंग हुआ। उस दैत्य को मार शिवजी ने कामरूप देश के राजा की रक्षा की थी। यह भी भक्तों के सब मनोरथों को पूर्ण करने वाला और इस खण्ड का स्वामी है। हे मुने! इसी प्रकार विश्वेश्वर नाम वाला सातवाँ अवतार काशी में हुआ जो समस्त ब्रह्माण्ड का स्वरूप तथा भुक्ति-मुक्ति दायक है। इसकी पूजा-अर्चना विष्णु आदि सब देवों ने की तथा शिवजी कैलाशपति और भैरव रूप से वहाँ पर स्थिर हैं। वहाँ ज्योतिर्लिंग रूप में स्थित भगवान शिव अपनी पुरी काशी के स्वामी तथा मुक्तिदायक और स्वयं सिद्ध स्वरूप हैं। जो इन काशी विश्वनाथ को पूजते और उनके नाम को जपते हैं वे कर्म बन्धन से छूट मोक्ष के भागी होते हैं।

इस चर्चा को आगे बढ़ाते हुए सूतजी महाराज कहने लगे— हे ऋषियो। शिवजी का त्र्यम्बक नामक आठवाँ ज्योतिर्लिंग गौमती के किनारे गौतम ऋषि की प्रार्थना और कामना से अवतरित हुआ है। इस ज्योतिर्लिंग के दर्शन तथा स्पर्श से सब कामनायें पूर्ण होती हैं और साथ ही मुक्ति भी प्राप्त होती है। नवाँ वैद्यनाथ अवतार हुआ जिसमें अनेक लीलाधारी शङ्करजी रावण के निमित्त प्रकट हुए। जब रावण शंकरजी को लिये जा रहा था

तब शंकरजी बहाना करके वहीं ज्योतिर्लिंग स्वरूप से चिता भूमि में स्थित हुए और त्रैलोक्य से पूजित उनका वैद्यनाथेश्वर नाम प्रसिद्ध हुआ। उनके दर्शन तथा भक्तिपूर्वक पूजन से भक्ति-मुक्ति प्राप्त होती है। दसवाँ नागेश्वर अवतार दारुक वन में हुआ। शिवजी के इस लिंग का दर्शन और पूजन करने से महापातकों का समूह नष्ट हो जाता है। इसी प्रकार शिवजी का ग्यारहवाँ अवतार रामेश्वर हुआ। यह रामचन्द्र जी को कल्याणकारी हुआ जिसे श्रीराम ने ही स्थापित किया था। भक्तवत्सल भगवान् शंकर ने सन्तुष्ट होकर उन्हें विजय का वरदान दिया और उनसे प्रार्थित तथा सेवित होकर शंकरजी ज्योतिर्लिंग स्वरूप से सेतुबन्धु में स्थित हुए। पृथ्वी पर रामेश्वर की अद्भूत महिमा हैं। ये रामेश्वर भोग तथा मुक्ति के देने वाले और भक्तों की कामनाओं को पूर्ण करने वाले हैं। जो मनुष्य रामेश्वर महादेव को भक्तिपूर्वक गंगाजल से स्नान कराता है वह जीवन-मुक्त होता है। वह संसार में देव-दुर्लभ भोग भोगकर फिर परम ज्ञान को प्राप्त कर मोक्ष प्राप्त करता है। दक्षिण दिशा में देवलोक के निकट सरोवर में घुश्मा का प्रिय करने वाले शंकरजी प्रकट हुए जिन्होंने सुदेहा द्वारा मारे हुए घुश्मा पुत्र को उसकी भक्ति से संतुष्ट होकर पुनः जीवन प्रदान किया था। उसकी प्रार्थना पर सर्वकामदायक घुश्मेश्वर के रूप में शिवजी ज्योतिर्लिंग स्वरूप से उस सरोवर में स्थित हुए। इस बारहवें ज्योतिर्लिंग के दर्शन, पूजन से सर्व लौकिक सुखों की प्राप्ति होती है। शिवजी की इस दिव्य बारह संख्या वाली ज्योतिर्लिंगावली का विस्तृत वर्णन लिंग पुराण और शिवपुराण में मिलता है। इन सभी तीर्थों का दर्शन तो अमोध पुण्य फलदायक है ही, इनकी चर्चा और ध्यान मात्र से व्यक्ति को महान पुण्य फलों की प्राप्ति होती है, और वह अधिकारी बन जाता है भगवान शिव की विशेष कृपाओं का।

धार्मिक, इण्डस्ट्रीयल एवं टैक्नीकल पुस्तकों के प्रमुख विक्रेता
ज्ञान वर्धक
मार्ग दर्शक
और
सुविचार पूर्ण
पुस्तकों का आधार
देहाती पुस्तक भण्डार
फोन 3261030, 3279417